महादेवी के काव्य में प्रतीकों और विम्बों का अध्ययन

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की

डी.फिल.

उपाधि हेतु प्रस्तुत
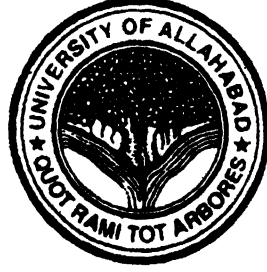
शोधप्रबन्ध

शोध निर्देशक:
डॉ. किशोरी लाल
हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

शोधकर्त्री:
हेमलता गुप्ता
एम.ए.,एम.एड.
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

हिन्दी विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सन् - 2002

प्रिय मित्र,

विनय कुमार सिंह

एवं

यशस्वी साहित्यकार

प्रकाश नारायण त्रिपाठी

के

प्रीत्यर्थ

अनुक्रम

मुझे कुछ कहना है....

जिस समय मै बी.ए द्वितीय वर्ष की छात्रा थी, उसी समय मुझे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' पढने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इतिहास के अध्ययन के क्रम मे जब मै पढती–पढती 'तृतीय उत्थान' मे पहुँची तो मेरा छायावाद से परिचय हुआ। छायावाद के परिचय के क्रम मे जब मैने महादेवी जी के बारे मे पहलीवार ठीक ढग से पढी तो पायी कि महादेवी के काव्य की मूल सवेदना 'वेदना' ही है। महादेवी जी की यह पंक्ति – 'मिलन का मतलामले मै विरह मे चिर हूँ, को जब मैंने पढी तो स्वय वेदना से भर उठी और मेरे भीतर महादेवी पर गम्भीरता से अध्ययन करने की उत्सुकता जागृत हो उठी। महादेवी जी के जिस वेदना से मै प्रभावित हुई थी, उसी को आगे जानने समझने के लिए मैने हिन्दी से ही एम.ए करने का निश्चय भी कर लिया। एम.ए. के अध्ययन के दौरान भी मैंने महादेवी जी को काफी पढा और पढते–पढते महादेवी के काव्य से इतना लगाव हो गया कि मैने दृढ निश्चय कर लिया कि मुझे शोध भी महादेवी पर ही करना है।

यद्यपि मैं चाहती थी कि महादेवी के समग्र साहित्य पर शोध करूँ किन्तु जब मुझे मालूम हुआ कि इतने बडे समुद्र साहित्य पर जब मैं शोध करने लगूँगी तो गोते ही लगाते रहूँगी, इसलिए मैने निश्चित किया कि महादेवी जी के काव्य मे बिम्बो और प्रतीकों पर ही अध्ययन करूँ। विषय चयन में मेरे गुरू डॉ किशोरी लाल का महत्वपूर्ण योगदान है।

समय–समय पर प्रकाशित होने वाली हिन्दी की साहित्यिक पत्रिकाओ जिनमे प्रमुखत सरस्वती, हस, कोहेनूर, चॉद, वचन, आजकल, आलोचना, इण्डिया टुडे का वार्षिकाक भी महत्वपूर्ण है, जो मुझे बरबस ही महादेवी की तरह खीचकर, इस विषय पर कार्य करने के लिए अर्न्तमन मे एक तरह से तेजस्विता जागृत की।

इस शोध मे प्रतीको और बिम्बो के माध्यम से मैने महादेवी जी के काव्य–पक्ष को समग्रता से समझने–समझाने की जो कोशिश की है, वह मेरे गुरू डॉ किशोरी लाल के आशीर्वाद से ही सभव हो सका है। यदि गुरूजी का स्नेह व आशीर्वाद से ही सभव हो सका है। यदि गुरू जी का स्नेह व आशीर्वाद न मिलता तो शायद मै इस कार्य को पूरा न कर पाती। विशेष रूप से मैं अपने उन गुरूजनो को आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होने अपने अमूल्य समय मे से थोडा निकालकर विश्वविद्यालय अथवा निवास में इस शोध कार्य को पूरा करवाने मे मदद की मे प्रमुख है– प्रो राजेन्द्र कुमार, प्रो सत्य प्रकाश मिश्र डॉ मीरा श्रीवास्तव, प्रो मालती तिवारी, डॉ राम किशोर शर्मा, सूर्यनारायण इत्यादि। साथ ही विनय सिह जो मेरे बहुत ही अभिन्न मित्र है का सहयोग यदि न मिलता तो शायद यह कार्य सम्भव ही नही था। इस सहयोग के लिए यदि मै उन्हे बधाई देती हूँ, तो उनका अपमान ही होगा। प्रकाश त्रिपाठी जो कि मेरे सहपाठी भाई और एक अच्छे चिन्तक साहित्यकार हैं, उन्होने महादेवी पर जो पुस्तकें उपलब्ध करायी, मैं उनकी आभारी रहूँगी। विनय सिंह और प्रकाश त्रिपाठी का सहयोग हमेशा अविस्मरणीय रहेगा।

अर्न्तविश्वविद्यालयी सहयोग मे जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय नई दिल्ली (ओमप्रकाश, सर्वेश सिह, ज्ञानेन्द्र त्रिपाठी), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, कोलकाता विश्वविद्यालय, कोलकाता, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस और विशेष रूप से इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की समृद्धि पुस्तकालय के सहयोग की आभारी रहूँगी।

मेरी बहन प्रेमलता, स्नेहा का भी सहयोग अविस्मरणीय है। शोध ग्रन्थ लिखने के क्रम मे बीच मे नुकताचीनी करना मुझे बहुत ही अच्छा लगता था, कारण कि उन्ही मे से नये–नये विचार पैदा होते थे और मुझे लिखने की नई–नई आईडिया मिलती रहती थी। साथ ही अन्य शोध मित्रो मे प्रवेश कुमार सिह का विशेष योगदान रहा।

जिनकी प्रेरणा से मैने यह कार्य पूर्ण कर सकी उनमे मेरे गुरू डॉ. किशोरी लाल, पिता श्री माखनलाल गुप्त एव माता श्रीमती सावित्री देवी गुप्ता का आशीर्वाद मेरे साथ रहा।

मैं सोमवशी इन्फोटेक के मालिक अजीत सिह सोमवशी और राजेश कुमार दुबे को धन्यवाद देती हू कि वह इतने कम समय मे, इतने बडे कार्य को टाइप करके मुझे समय से उपलब्ध करा दिया।

हेमलता गुप्ता

कु. हेमलता गुप्ता

हिन्दी विभाग,

इ.वि.वि, इला.

अध्याय—1

महादेवी : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

(क) व्यक्तित्व

''साहित्य की देवी''— का जन्म सवत 1864 मे फरूर्खाबाद, उत्तर प्रदेश मे हुआ था। जन्मदिन की यह रगमयता और सार्वजनीयता उनके व्यक्तित्व और कृतित्व मे समाहित है। जीवन और साहित्य के पर्दे मे इतने विभिन्न रगी सूतो का सम्मेलन सहज ही नही मिलता । रहस्यवादी कवि यथार्थवादी गद्यकार तथा समन्वयवादी आलोचक के साथ—साथ वे अद्वितीय रेखा—चित्रकार, सस्मरण— लेखिका, सामाजिक एव ललित निबन्धकार, उच्चकोटि की चित्रकत्री और परम प्रबुद्ध समाज तथा राष्ट्रसेविका भी है। उनके रचनात्मक कार्यो मे प्रतीक प्रयाग महिला विद्यापीठ और साहित्यकार ससद के अतिरिक्त अन्य अनेक सस्थाए और पाठशालाए है। भारत मे ही नही विश्व भर मे उतनी विराट और व्यापक प्रतिभा की वे अकेली कलाकार है।

यदि हम लोगो ने कभी संध्या को आकाश देखा है तो महादेवी जी की इन पक्तियो का रग दिखायी पडता है। आकाश और कवयित्री का तादाम्य देखिए —

प्रिय सान्ध्य गगन मेरा जीवन।

यह क्षितिज बना धुधला चिराग

नद अस्म — अस्थ्य मेरा सुहाग

छाया सी काया वीतराग।

सुधि मीने स्वप्न रगीले घन

प्रिय सान्ध्य गगन मेरा जीवन।।

महादेवी जी अपने माता–पिता की पहली सतान थी । रूढिग्रस्त भारतीय समाज मे प्रथम कन्या–लाभ शुभ या सुखद नही माना जाता था। महादेवी जी ने स्वय इसका उल्लेख किया है। जैसे ही दबे स्वर से लक्ष्मी के आगमन की खबर मिलती है वैसे ही घर के एक कोने से दूसरे कोने तक एक दरिद्र निराशा व्याप्त हो जाती है। बडी–बूढिया सकेत से मूक गाने वालियो को सकेत से जाने के लिए कह दिया जाता है। बडे–बूढे इशारे से नीरद बाजेवालो को विदा दे देते – यदि ऐसे अतिथि का भार उठाना परिवार की शक्ति से बाहर होता था तो उसे बैरग लौटा दिया जाता था । सौभाग्य से इनका जन्म बडी प्रतीक्षा और मनौती के पश्चात हुआा । इनके बाबा ने इसे अपनी कुलदेवी दुर्गा का विशेष अनुग्रह समझाा और आदर प्रदर्शित करने के लिए इनका नाम 'महादेवी' रखा। साकेतकार की यह उद्वित "सौ–सौ पुत्रो से भी अधिक जिनकी पुत्रिया पूतशिला।" वास्तव मे राजा जनक भी पुत्रियो के लिए जितने सार्थक है, उतनी ही श्री गोविन्द प्रसाद की पुत्री महादेवी।

माँ हेमरानी देवी आस्तिक स्वभाव की नारी होने के कारण पति को खिलाने पिलाने का कार्य नौकरो पर न छोडकर स्वय करना चाहती थी और महादेवी जी इस बीच कोलाहल मचा देती थी। माँ ने विवशता से परपरा प्रचलित अफीम का सहज सम्बल ग्रहण किया । अफीम खिलाई और झूले पर पडे पलग पर डाल दिया। अफीम सेवन से हानि जो भी हुई, हा पर प्रत्यक्ष लाभ यह हुआ कि अन्य शिशुओं की अपेक्षा इनका विकास

शीघ्र हुआ। तीन वर्ष की अवस्था मे ही आम की पाल से सार चुन लेने मे आप निपुण हो गईं ।

पाच वर्ष की होते ही महादेवी जी को भोपाल तथा इन्दौर की यात्रा करनी पडी जहा अतीत के चलचित्र का लाभ इन्हे मिला । छोटे भाई की स्पर्धा मे साम–दाम–दण्ड– भेद के द्वारा रामा को आप किस तरह केवल अपने ही लिए राजा कहने के लिए बाध्य कर देती इसकी भी एक रोचक कहानी है। इन्दौर मे पूर्णत कार्य स्थित पर मॉ ने चाहा कि बेटी को कुछ समय के लिए खिलौने मे उलझा रखे, कुछ समय गृह–कार्य की शिक्षा दे और यदि यह सब न दे सके तो पाटी पकडाकर स्कूल भेज दे। महादेवी इन चक्करो मे नही पडना चाहती थी उनको तो फूल, तितली, हरीदूब, और फर्श और दीवार पर कुछ उरेदने के लिए कोयला या सिन्दूर के अतिरिक्त उन्हे कुछ और नही चाहिए था। छोटी बहन और भाई की ओर सकेत करते हुए जिज्जी ने कहा खेलना छोटो का काम है बडो का काम पढना या घर का काम करना है। इन्होने पढना पसन्द किया तो आश्चर्य नही।

आर्य–समाजी सस्कारों के साथ महादेवी जी का मिशन स्कूल मे भरती करा दिया। घर मे हिन्दी , उर्दू , चित्रकला और सगीत की पढाई का प्रबन्ध हो गया। जिज्जी ने किचित डाटकर कहा अब मास्टरो से छुट्टी लिए बगैर घर ना जाना। पढोगी नहीं तो घर मे चुपचाप बैठी रहोगी। पढाई प्रारम्भ के प्रथम दिन ही आप थोडी देर तक अध्यापक के पास बैठीं रही और फिर छुट्टी की माग की आवश्यकता पूछने पर उत्तर मिला – फूल तोड लाउ नही तो माली बाबू के गुलदस्ते में लगा देगा जहा वे सूख जाते है। तो क्या तुम्हारे तोडने से नही सूखते? सूखते तो है पर भगवान

जी पर चढने के बाद। फिर जिज्जी उन्हे नदी मे फेकवा देती है। माली उन्हे कूडे मे फेक देता है। और बाबू बिनने भी नही देते। प्रश्नोत्तर से पण्डित जी इतने खुश हुए कि उन्होने तुरत छुट्टी दे दी धीरे धीरे पण्डित जी को ज्ञात हुआा कि बालिका केवल बातचीत मे नही पढने मे भी प्रवीण है। लडकिया हो भी क्या सकती है पढाकू या लडाकू। महादेवी जी ने इन दोनो रूपो को अपनाया। लडाकू रूप उनमे विद्रोह और नारी विषयक निबन्धो ने मुखरित है और अपना पढाकू रूप जग जाहिर है।

रामा नामक रेखाचित्र मे महादेवी जी ने अपने बचपन की अनेक मनोरजक घटनाओ का जिक्र किया है। जिससे उनके स्वभाव और उनके प्रबुद्वता का पता चलता है। दशहरे के मेले मे खिलौने खरीदने के लिए रामा ने एक को गोद में और दूसरे को कधे पर बिठाया। महादेवी जी को उगली पकडाते हुए बार बार कहा– उगली जिन छोडियो राजा भइया। सिर हिलाते हुए स्वीकृत देते देते थक गयी तो उन्होने उगली छोडकर मेला देखने का निश्चय कर लिया भटकते भटकते और दबने से बचते–बचते जब इन्हे भूख लगी तब रामा की याद आयी। एक मिठाई की दुकान पर इन्होने सहज भाव से प्रश्न किया क्या तुमने रामा को देखा है वह खो गया है। हलवाई ने वात्सल्य होकर पूछा कैसा है तुम्हारा रामा उन्होने होठ दबाकर कहा बहुत अच्छा है। हलवाई इस उत्तर से क्या समझता? अतत. उसने आग्रह के साथ विश्राम करने के नियत से वही बैठा लिया। मै हार मानना नही चाहती थी परन्तु पाव थक चुके थे और मिठाइयों से सजे थालों मे कुछ कम नियत्रण नहीं था। इसी दुकान के एक कोने मे बिछे टाट पर समान्य अतिथि की मुद्रा मे बैठकर मैं बूढे से मिठाई

रूपी अर्ध्य को स्वीकार करते हुए उसे अपनी यात्रा की व्यथा सुनाने लगी। सध्या समय जब सबसे पूछते पूछते बडी कठिनाई से रामा उस दुकान के सामने पहुचा तब इन्होने विजयगर्व से फूलकर कहा तुम इतने बडे होकर भी खो जाते हो रामा।

एक बार जब महादेवी जी केवल सात वर्ष की थी पडोस मे किसी आवारा कुतिया ने बच्चे दिए थे। जाडे की रात का समय था और हवा के सन–सन झोको के साथ पिल्लो की कूॅं–कूॅं की ध्वनि करूणा का ऐसा सचार करने लगी जो महादेवी जी की कोमल ह्दय के लिए असहय हो उठी। बेचैनी के साथ आपने कहा बडा जाडा है पिल्ले जडा रहे है। मै उनको उठा लाती हूॅं सबेरे वही रख दूगी। चलो–चलो मेरी अच्छी जिज्जी। अस्वीकृत की सूचना पाते ही मै जोर जोर से रोने लगी। सारा घर जग गयाा और अन्त मे पिल्ले घर लाये गए। इस करूणमयी स्वभाव के कारण जीवन और जगत की किस करूणा की स्थिति मे उनमे ह्दय का स्पदन झकृत नही। सामने आई हुई किस रूक्षता को अपनी सहज स्निग्धता से सरस नही भर देना चाहती। ऐसी कौन सी पाषाणी कठोरता है जो उनकी मूलाधार करूणा के स्पर्श से कांप उठती। सत्य और समूह की रक्षा के लिए विद्रोह की किस ज्वाला को उन्होने अपनी व्यागमयी तपस्या को आच नही आने दी यह बात समझना कठिन है।

काव्य की प्रथम शिशु–कन्या का प्रारम्भ सात–वर्ष की अवस्था में इस प्रकार हुआ था। "आओ प्यारे तारे आओ मेरे आगन मे बिछ जाओ।" प्रयाग पढने आने से पहले ही महादेवी जी सरस्वती पत्रिका से परिचित हो चुकी थीं। राष्ट्र–कवि मैथिलीशरण गुप्त की कविताए भी देख चुकी थी बोलने

की भाषा मे कविता लिखने की सुविधा इन्हे आकर्षित करने लगी थी। खडी बोली की प्रथम रचना जो आपके आठवे वर्ष मे लिखी गयी थी और जिसका शीर्षक दिया है। इसी समय एक ऐसी घटना घटी जिसने महादेवी जी को इतना प्रभावित किया कि वे उस वेदना से कभी मुक्त नही हो पायीै। नौकर ने पत्नी को इतना पीटा की लहू–लुहान होकर रोती हुयी जिज्जी के पास चली आयी। अन्यथा उसे वे मार ही डालती जिज्जी ने सहानुभूति के साथ उनकी गाथा सुनी और नौकर को डाटा फटकारा। सब शान्त हो जाने पर महादेवी जी ने कहा– हाय कितना पीटा है! यह भी क्यो नही पीटती? इसके बाद थोडी देर तक लोग एक दूसरे को देखते रहे फिर जिज्जी ने दीर्घ सास ली और महादेवी जैसे अपने भीतर डूब गईं। अपने सार्मथ्य से कही अधिक आपने सातवे वर्ष से लेकर नव वर्ष तक के बीच मे हिन्दी, उर्दू, सगीत तथा चित्रकला का अप्रत्याशित ज्ञान प्राप्त कर लिया था। पढाई–लिखाई मे पिताजी का प्रबुद्व निरीक्षण–परीक्षण और उत्साहवर्धन गृहकार्य मे माताजी की शिक्षा–दीक्षा ने मिलकर महादेवी जी को दोनो श्रेणो मे दक्ष कर दिया था। महादेवी जी ने इसका उल्लेख भी किया है।एक ओर साधनापूर्ण आस्तिक और भावुक माता और दूसरी ओर सब प्रकार की साम्प्रदायिकता से दूर कर्मनिष्ठ और दार्शनिक पिता ने अपने–अपने सस्कारो को देकर मेरे जीवन को जैसा विकास दिया उसमे भावुकता के कठोर धरातल पर साधना एक व्यापक दार्शनिकता पर और आस्तिकता एक अप्रिय किन्तु किसी वर्ग या सप्रदाय में न बधने वाली चेतना पर ही स्थित हो सकती थी।

नवा वर्ष पूरा होने को हुआ तो बाबा ने गुडिया का ब्याह रचाने की ठान ली। क्योकी आप बूडे होने के कारण वे अपनी महादेवी जी का विवाह अपनी आखो की छाया मे ही कर देना चाहते थे। घर के वरिष्ठ होने के कारण उन्होने न केवल व्याह वरन आगामी कई वर्षों तक साइत न बनने के कारण इसी समय एक सप्ताह के लिए बालिका की बिदायी भी कर दी। रोती बिलखती इस विदा की कातर वाजी कितनी हृदय विदारक रही होगी यह सहज ही उपमेय है।

ससुराल पहुँच कर महादेवी जी ने जो उत्पात मचाया उसे ससुराल वाले ही जानते है। न खाना, न पीना, न बोलना, न सुनना, केवल रोना, रोना बस, रोना। फलत श्वसुर जी दूसरे दिन ही उन्हें वापस लौटा गये। श्वसुर लडकियो के स्कूली पढाई के नितान्त विरोधी थे। इसलिए पढाई का क्रम टूट गया। इसे विधि का विधान ही कहेगे कि साल भर बाद ही श्वसुर का देहान्त हो गयाा। महादेवी जी के पास केवल एक ही प्रशस्थ पथ था – पढाई । विद्यानुरागी पिताजी ने यही उचित समझा कि और आगे पढने के लिए उन्हे क्रास्थवेट कालेज प्रयाग मे भरती करा दिया। मिडिल की परीक्षा प्रथम श्रेणी से पास होने के बाद इन्हे सरकारी छात्रवृत्ति भी प्राप्त की। मिडिल, दसवा, ग्यारहवा, दर्जा पास करते–करते कवि सम्मेलनो, वाद–विवाद प्रतियोगिताओ मे प्राप्त तमगों और पुरस्कारों से छात्रावास का कमरा भर गया।

. बीए पास होते ही गौवने का प्रश्न उठाा। इस बार उन्होंने साफ शब्दो में दृढतापूर्वक किन्तु सहज भाव से जिज्जी को बता दिया कि विवाह को किसी भी स्थित मे स्वीकार करने को तैयार नही और गवने की

चर्चा ही व्यर्थ है। जिज्जी को यह निश्चय सुनकर अत्यत पीडा हुई और उन्होने बहुत तरह से समझाया भी पर महादेवी जी अपने निश्चय पर अटल रही बाबू जी को भी बहुत दु ख हुआ और उन्होने एक लम्बा पत्र लिखा जिसमे अबोध बालिका के प्रति विवाह रूप मे किए गये अन्याय की मुक्तकठ से क्षमा मागते हुए यह भी लिखा कि यदि दूसरा विवाह करने की इच्छा हो तो वे इनके साथ धर्म परिवर्तन करने को भी तैयार है। महादेवी जी ने स्पष्ट कर दिया कि वे विवाह ही नही करना चाहती।

बचपन से ही महादेवी जी का यह स्वभाव रहा है, कि उन्होने जो अपने जीवन– विकास के लिए उचित समझा सो किया। और विद्रोह के साथ किया ससार का कोई भी प्रलोभन या भय उससे विमुख नही कर सका। परिग्रही जीवन को स्वीकार करके उन्होने अपना कोई सीमित परिवार नही बनाया पर उनके जैसा विशाल परिवार पोषण सबके बस की बात नहीं। गाय, हिरण, कुत्ते, बिल्लिया, गिलहरी, खरगोश, मोर, कबूतर तो उनमे चिररगी है। लता–पुष्प आदि तक उनकी पारिवारिक ममता के समान अधिकारी है। गुप्त जी ने ठीक ही कहा था'– "मेरी प्रयाग यात्रा केवल सगम–स्नान से पूरी नही होती उसकी सर्वथा सार्थक बनाने के लिए मुझे सरस्वती अर्थात् महादेवी के दर्शनो के लिए प्रयाग महिला विद्यापीठ जाना पडता है। सगम में कुछ फूल अक्षत भी चढाना पडता है। पर सरस्वती के मन्दिर मे कुछ प्रसाद मिलता है।" ससद हिन्दी के लिए उन्ही का प्रसाद है। अनेक व्यक्तियो का विचार है कि यदि कन्याओं को स्वावलंबी बना दिया जाए तो वे विवाह ही नहीं करेंगी जिससे दुराचार भी बढेगा और गृहस्थ जीवन में भी आराजकता फैल जायेगी। परन्तु वे ये भूल जाते हैं,

स्थापना करने मे स्वभावत· सफल होता है। व्यक्तित्व की स्वामीयता और स्वचेतना का यह प्रौढ प्रमाण है। लेखन कला की भाति भाषण कला का भी अपना एक अलग क्षेत्र और महत्व है। श्रोताओ को भाव–विभोर कर देने की महादेवी जी मे अद्‌भुत क्षमता रही है।

सन् 1942 के विद्रोह मे उन्होने जिस अडिग धैर्य और अटूट साहस के साथ विद्रोहियो का साथ दिया, उनकी सहायता की, उनको तथा उनके परिवार तथा समाज को सरक्षण दिया, वह बहुत ही रोमाचकारी और आश्चर्यजनक व्यक्तित्व का प्रमाण है। उन्ही दिनो की एक घटना–विशेष है। जोशी जी ने कहा है– ''आज कल सरकार का बहुत कडा रूख है।'' किचित मात्र से होने पर पुलिस वाले बडा परेशान करते है। स्थिति महिलाओ के लिए बडी भयावह है। आपको बहुत सावधान रहना चाहिए । महादेवी जी की आखे सहसा लाल हो गई और दृढता से उन्होने कहा – ''यह सब तो मै जानती हूॅ पर विश्वास और आशा से आये हुए देश–प्रेमी विद्रोही को सहानभूति और सरक्षण देने से इन्कार भी नही किया जा सकता।''

इस प्रकार अन्याय की दुर्दमनीय स्थितियों के प्रति मन मे विद्रोह स्वभाविक है। पर उसे क्रियात्मक रूप देने की क्षमता जिस अपराजय आत्मदान की अपेक्षा रखती है, वह महादेवी जी की निजी विशेषता है। यही कारण है कि उनके विद्रोह की प्रखरता जिसके प्रति अटूट आस्था की सजलता में बादल के बीच बिजली की तरह अर्न्तनिहित रहती है। इनके विद्रोह मे किसी प्रकार का उद्‌दाम वेग, नही एक दृढ संयम है, आग की लपटों का उच्छ्‌वासित आवेग नही, दीपक की लौ की आलोकवाही स्निग्धता है चमत्कारी बुद्धि का उतावलापन नही भावावेश को स्पदित करने वाली हार्दिकता का विश्वास है। संकोच, सदेह तथा भय पराजय का भाव नहीं,

परिवार तथा समाज को सरक्षण दिया, वह बहुत ही रोमाचकारी और आश्चर्यजनक व्यक्तित्व का प्रमाण है। उन्ही दिनो की एक घटना–विशेष है। जोशी जी ने कहा है– "आज कल सरकार का बहुत कडा रूख है।" किचित मात्र से होने पर पुलिस वाले बडा परेशान करते है। स्थिति महिलाओ के लिए बडी भयावह है। आपको बहुत सावधान रहना चाहिए । महादेवी जी की आखे सहसा लाल हो गई और दृढता से उन्होने कहा – "यह सब तो मै जानती हूँ पर विश्वास और आशा से आये हुए देश–प्रेमी विद्रोही को सहानभूति और सरक्षण देने से इन्कार भी नही किया जा सकता।"

इस प्रकार अन्याय की दुर्दमनीय स्थितियो के प्रति मन मे विद्रोह स्वभाविक है। पर उसे क्रियात्मक रूप देने की क्षमता जिस अपराजय आत्मदान की अपेक्षा रखती है, वह महादेवी जी की निजी विशेषता है। यही कारण है कि उनके विद्रोह की प्रखरता जिसके प्रति अटूट आस्था की सजलता मे बादल के बीच बिजली की तरह अर्न्तनिहित रहती है। इनके विद्रोह मे किसी प्रकार का उद्दाम वेग, नहीं एक दृढ सयम है, आग की लपटों का उच्छ्वासित आवेग नही, दीपक की लौ की आलोकवाही स्निग्धता है चमत्कारी बुद्दि का उतावलापन नही भावावेश को स्पदित करने वाली हार्दिकता का विश्वास है। सकोच, सदेह तथा भय पराजय का भाव नही, विजय की यह भावना विनम्रता और उदारता है, जिस पर साधना का पानी चढा हुआ है। आशय यह की विद्रोह की मगल–मुखी भावना पर ही उनकी आस्था है।

स्पष्ट है कि साहित्य सृजन के अतिरिक्त उन्होने सामाजिक कार्य क्षेत्र मे भी सक्रीय भाग लिया और नीरस साहित्यिक रचनात्मक कार्यभार सभालने मे भी सलग्न रही हैं। इस प्रकार हम देखते है, कि अपनी जीवन अवधि मे महादेवी जी ने एकनिष्ठ होकर के अपने मादक सृजन और कर्ममय जीवन की साधना मे साथ–साथ सलग्न रहकर अपनी इस घोषणा को प्रत्यक्ष और सार्थक बनाने मे अनन्य सफलता प्राप्त की है। कला के पारस का स्पर्श पा लेने वाले का कलाकार के अतिरिक्त कोई वर्ग नही, सत्य के अतिरिक्त कोई व्यापार नही, और कल्याण के अतिरिक्त कोई लाभ नही है। इसीलिए सतोष के साथ उन्होंने कहा है। ––

जीवन के तुतले उपक्रम से लेकर अबतक मेरा मन अपने प्रति विश्वासी रहा है। मार्ग चाहे जितना स्पष्ट रहा दिशा चाहे जितनी कुहराच्छम रही परन्तु भटकने दिगभ्रमित हुए चली राह मे पग–पग गिनकर पश्चाताप करते हुए लौटने का प्रयास किया। मेरी दिशा एक ओर, मेरा पथ एक रहा है। केवल इतना ही नही वे प्रशस्त से प्रशस्तर और स्वच्छ से स्वच्छतर होते गये है।'' यह उनके आवरण और सगठित व्यक्तित्व का ही परिणाम है। कथनी करनी और रहनी की यह एकता जो रचना विचार और जीवन के रूप मे अविरोधी जान पडे कोई सामान्य विशेषता नही है। महादेवी जी की इस असमान्य विशेषता के बारे मे हमे निश्चयी होना चाहिए।

सहित्यको और साहित्यिक सस्थाए समाज और सरकार ने – सम्पूर्ण राष्ट्र ने उनकी विजय यात्रा की उपलब्धियो की महत्ता को स्वीकारा है। उन्हें समाहित और अभिनंदित किया है। यह किसी से छिपा नहीं है।

(ख) कृतित्व :

महादेवी की काव्य साधना एक दृढवती साधिका की काव्य साधना है। उनकी आधुनिकता का बोध इतना व्यापक और गम्भीर है कि वे आज की सस्कृति, बौद्विकता, राजनीति एवं विभिन्न प्रवृत्तियो के बाह्य एव आन्तरिक दोनो रूपो को पूर्ण रूप से हृदयगम किये हुए है। वे आस्था एव आदर्शों को साधना की ज्योति विकीर्ण करती हुई भविष्य के अन्धकार से जुडने मे रगी हुई है। वे पन्चजन्य का उद्घोष करती हुई आगे और बढ रही है–

और आगे चरण हारे
अन्य है जो लौटते दे शूल को सकल्प सारे
दृढवती निर्माण उन्माद
यह उभरता नापते पग
बाध देगे अक ससृति से तिमिर मे स्वर्ण बेला।

महादेवी साहित्य का लक्ष्य सौन्दर्य के स्थान पर सत्य को मानती हैं। उनके समस्त साहित्य में भावात्मक सौन्दर्य की अपेक्षा सत्य का औदात्य अधिक है। महादेवी का दार्शनिक पथ अद्वैत है। और जीवन दर्शन बौद्ध मत से है। दोनो का सामान्य हित रूपो का समन्वय उनके काव्य मे देखा जा सकता है। इसी प्रकार इनका युग बोध अतीत और वर्तमान मे समन्वय स्थापित करता है। उनके काव्य के वेदना करूणा और दुःख ऋग्वेद का सूचक है। उनकी करूणा की प्रवृत्ति मानव से लेकर कीट पतगो और जीव जन्तुओं तक प्रसारित है। महादेवी के काव्य मे प्रकृति के लिए स्थिर रूप

एव बाह्य सौन्दर्य की अपेक्षा उसके अध्यात्मक और आन्तरिक औदात्य का चित्रण अधिक हुआ है।

महादेवी की विषयवस्तु रहस्योन्मुख है परन्तु शैली छायावादी है। छायावादी प्रवृत्तिया उनके शैली पद मे ही मिलती है। उनके शैली में पाश्चात्य शब्दावली मे प्रतीक योजना और भारतीय शब्दावली मे ध्वनि की प्रमुखता है। प्रतीक रूप मे 'दीपक' का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है। दीपक उनकी साधना का प्रतीक है, दीपक के पश्चात पुष्प कमल का प्रयोग है, कमल अरूण का अवलम्बन है। महादेवी के काव्य मे वैज्ञानिक दृष्टि से बौद्विक आकर्षण काव्यशास्त्रीय दृष्टि से शान्त रस और सौन्दर्य शास्त्रीय दृष्टि से प्रधानता है।

भावपक्ष

छायावादी अनुभूति और अभिव्यक्तिः

महादेवी जी ही छायावादियो मे एकमात्र वह चिरन्तन भाव योजना की कवयित्री है। जिन्होने नए युग के परिप्रेक्ष्य में राग तत्व के गूढ सवेदन तथा राग तत्व की अधिक मर्मस्पर्शी गम्भीर अन्तर्मुखी तीव्र सवेदनात्मक अभिव्यक्ति की है।

महादेवी न केवल छायावादी कवयित्री है अपितु वे सधी प्रौढ चिन्तक और व्याख्याकार भी हैं। महादेवी के काव्य की यह सबसे प्रमुख विशेषता है, कि वह आरम्भ से लेकर अन्त तक एक ही लक्ष्य को लेकर चली है। महादेवी जी निरन्तर शान्त, मन्थर, मृदुल संयमित गति से एक ही लक्ष्य की ओर बढती रही है। युग प्रवाह उनको मिल न सका । वे निरन्तर अकेली

अपने साधना के दीप जलाए हुए लक्ष्य की ओर अविचलित भाव से अग्रसर रही।

महादेवी जी छायावाद को सूक्ष्म, शुद्व, पारलौकिक, अध्यात्मिक या काल्पनिक तत्व मानकर उसे स्थूल जगत और यथार्थ जीवन की भावना से उत्पन्न सूक्ष्म अनुभूति मानती है। छायावादी की विभिन्न प्रवृत्तिया महादेवी के काव्य मे विशेष रूप मे मिली हैं।

छायावाद के मूल मे स्वच्छन्दता की प्रवृत्ति निहित है, महादेवी के कव्य मे यह प्रवृत्ति प्रारम्भ से मिलती है। वे शूलो को चुनौती देती हुई दृढता और आत्म विश्वास के साथ साधना के पथ पर एकाकी बढती देखी जा सकती है–

पथ होने दो अपरिचित
प्राण खोने दो अकेला
और होगे चरण हारे
अन्य है जो लौटते दे शूल को सकल्प सारे
मै लगाती चल रही नित
मोतियो की हार और चिनगारियों का एक मेला।

छायावादी चेतना मूल रूप से रगात्मक है। छायावादी कवि जीवन और जगत के प्रति रगात्मक सम्बन्ध की स्थापना करता है। महादेवी की रगात्मकता बहुत ऊँची उठी है उसमे एन्द्रियकता के स्थान पर अतिन्द्रियता और नैतिकता है। महादेवी की प्रणय भावना और रंगात्मकता का केन्द्र अध्यात्मिक रहा है। वे नैतिक प्रणय की नही अपितु रहस्यवाद की गायिका हैं। वे पहले रहस्यवादिनी हैं और बाद मे छायावादिनी।

महादेवी ने प्रकृति पर अन्य छायावादी की तरह मानवीय भावनाओ का आरोपण किया है। परन्तु यह उनकी भावनाओ का आलम्बन कही नही बन पायी। कही–कही तो वे मानव दु ख के सामने प्रकृति के सम्पूर्ण वैभव की उपेक्षा करती हुई दिखायी देती है–

कह दे मॉ क्या अब देखू।

देखू खिलती कलिया या

प्यासे सूखे अधरो को

तेरी चिर यौवन–सुषमा

या जर्जर जीवन देखू।

महादेवी ने आलम्बन रूप मे प्रकृति का चित्रण बहुत कम किया है।

वैयक्तिकता :

वैयक्तिकता छायावादी काव्य के अभिव्यक्ति पक्ष की प्रमुख व्यवस्था है। महादेवी के काव्य मे वैयक्तिकता की यह प्रवृत्ति पर्याप्त विकसित एव परिष्कृत रूप मे मिलती है निम्न गीत मे वे अपना सूनापन एकान्त विरह आदि को सहन करती हुई गर्व के साथ कहती है–

मेरी लघुता पर आती

जिस दिव्य लोक की बीडा

उसके प्राणो से पूछो

वे पाल सकेगे पीडा

उसमें कैसा छोटा है।

मेरा यह भिक्षुक जीवन

उनमे अनन्त करूणा है

इसमे असीम सूनापन।

महादेवी की यह वैयक्तिकता अन्य छायावादियो से पृथककर रहस्यवादियो के निकट लाती है।

काव्य शैली ·

महादेवी की काव्य शैली छायावादी काव्य शैली का प्रतिनिधित्व करती है। उन्होने सहस्यवादी विषय– वस्तु छायावादी शैली में अभिव्यक्त कर के की है। गीतात्मकता, वास्तविकता, प्रतीकात्मकता, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय, मूर्त विधान, कोमल कान्त पदावली आदि छायावादी शैली की समस्त विशेषताए महादेवी जी की गीतो मे मिलती है। प्रसाद, निराला, पन्त और महादेवी छायावाद के प्रमुख स्तम्भो मे महादेवी ही आदि से लेकर अन्त तक अडिग रह सकी।

रहस्य भावना :

महादेवी के काव्य मे रहस्यानुभूति की अभिव्यक्ति ही महादेवी के काव्य की प्राणधारा है, उन्होने कहा है कि– "रहस्यानुभूति भावावेश की आधी नही वरन् ज्ञान के अनन्त आकाश के नीचे अज्ञान की प्रवाहमयी त्रिवेणी है इसी से हमारे तत्व दर्शन बौद्धिक तथ्य को हृदय का सत्य बना सके।"

महादेवी ने दीपक और उसकी बत्ती के माध्यम से मानव–जीवन के दु:ख–सुख रूपी अन्धकार को अध्यात्म प्रेम के संयोग की भावना से दूर करने की भावना व्यक्त की है। महादेवी साधना के क्षेत्र में दीपक का निर्वाह अपनी प्रारम्भिक कविताओ से लेकर दीप–शिखा तक बराबर किया है–

मधुर–मधुर मेरे दीपक जल।

*****

दीप मेरे जल अकम्पित

धूप सा तन दीप सी मै

यह मन्दिर का दीप उसे नीरव जलने दो।

पुजारी दीप कहां सोता है।

महादेवी ने दीपक के माध्यम से सर्वत्र आत्म वेदना विश्व करूणा एव आध्यात्मिक प्रेम को व्यक्त किया है। महादेवी की रहस्यानुभूति उनकी वैयक्तिक वृत्तियो उनके पारिवारिक सस्कारो भारतीय इतिहास की परम्पराओ मध्यकालीन सन्तो की भाव–धारा तथा सामयिक कवियो की रचनाओ के प्रभाव से युक्त है। महादेवी की रहस्वादी काव्य अपने चत्मोत्कर्ष पर पहुचा हुआ है। उनकी रहस्यानुभूति शुद्व एव यथार्थ रहस्यानुभूति है उनकी अभिव्यक्ति लौकिक शब्दावली मे हुई है। नीहार के प्रथम गीत से लेकर दीप–शिखा तक रहस्यानुभूति की धारा अविच्छिन्न रूप से प्रवाहित हुई है। रहस्यानुभूति की पाच अवस्थाए मानी गयी है–

1 जिज्ञासा

2 आस्था

3 अद्वैत–भावना

4 विरहानुभूति

5 मिलन की अनुभूति।

महादेवी की काव्य जीवन प्रारम्भ मे ही अलौकिक सत्ता के प्रति उनका दृष्टिकोण एव बोध एक गम्भीर रगात्मक भाव मे परिणत हो चुका था। अत उनकी रहस्यानुभूति मे जिज्ञासा का अस्तित्व ही नही मिलता आस्था की अभिव्यक्ति सर्वत्र गम्भीरता से हुई है–

छिपा है जननी का अस्तित्व

रूदन मे शिशु के अर्थ विहीन

मिलेगा चित्रकार का ज्ञान

चित्र की जडता मे लीन।

साधक और साध्य की एकात्मक अनुभूति रहस्यवाद का मूलाधार है, महादेवी की दार्शनिक मान्यताओ मे भारतीय अद्वैतवाद के सभी तत्व मिलते है। उन्होने सर्वत्र आत्मा और परमात्मा का निरूपण किया है–

मै तुमसे हूँ एक, एक है,

जैसे रश्मि प्रकाश

मैं तुमसे हूँ भिन्न, भिन्न ज्यों,

घन मे तडित विसास।

महादेवी प्रत्येक स्थित मे स्वय को भिन्न देखती है।

"बीन भी हूँ मै तुम्हारी रागिनी भी हूँ।"

महादेवी की रहस्यानुभूति अत्यन्त सुदृढ आधार पर अवस्थित है अलौकिक प्रणयानुभूति का वर्णन महादेवी ने स्थान–स्थान पर किया है।

मूक प्रणय से, मधुर व्यथा से

स्वप्न लोक के से आहान

वे आये चुपचाप सुनाने

तब मधुमय मुरली की तान।

महादेवी की अलौकिक प्रणय मिलन की कहानी से प्रारम्भ होती है। परन्तु क्षणिक प्रारम्भिक मिलन सदा के लिए विरह मे परिणत हो जाता है। प्रियतम की एक मात्र चितवन ने विरह वेदना का स्थायी साम्राज्य दे दिया है।

इन ललचाई पलको पर
पहरा था जब पीडे का
साम्राज्य मुझे दे डाला
उस चितवन ने पीडा का

वे जीवन दीप जलाए हुए उसी की मौन प्रतीक्षा मे लीन है।

अपने इस सूनेपन की
मै हूँ रानी मतवाली
प्राणो का दीप जलाकर
करती रहती दिवाली।

विरह वेदना :

भारतीय काव्य शास्त्रियो ने विरह दशाओ का निरूपण किया है—

1 अभिलाषा
2 चिन्ता
3 स्मृति
4 गुण कथन
5 उद्वेग
6 प्रलाप
7 उन्माद
8 जडता और
9 मरण

महादेवी की विरह वेदना विशुद्व रूप से आध्यात्मिक है अत क्रमिक रूप से विरह—दशाओ का निरूपण नही मिलेगा परन्तु भाव दशाओ के मार्मिक उदाहरण सहज ही मिल जायेगे।

अभिलाषा ·

अखि कैसे उनको पाऊ

वे आसू बनकर मेरे इस कारण ढल—ढल जाते

उन पलको के बन्धन मे मै बाध—बाध पछताऊ

तुम विद्युत बन आओ पाहुन

मेरी पलको मे पग धर—धर

तुम्हे बाध पाती सपनो मे

तो चिर जीवन प्यास बुझा

लेती उस छोटे क्षण अपने मे

गुण कथन :

उनकी वीणा का नव कगन

डाल गई री मुझमे जीव।

उद्वेग :

फिर विकल है प्राण मेरे

तोड दो यह क्षितिज मैं भी देखू उस ओर क्या है।

जा रहे जिस पथ से युग कम्प उसका छोर क्या है।

महादेवी की विरह व्यथा कही कही निराशा मिश्रित होकर रीण, क्षोम, अमर्ष से उद्वेलित हो जाती है—

मत करो हे विश्व! झूठे

है अतुल वरदान तेरे।

चिता क्या है, हे निर्मम, बुझ जाये दीपक मेरा।

हो जायेगा तेरी ही पीडा का राज्य अधेरा।।

अन्तत महादेवी को भक्तो का दैन्य और आत्म चरमोत्कर्ष पर पहुच जाता है–

सिधु को क्या परिचय दे देव,

बिगडते बनते बीचि विलास।

क्षुद्र है मेरी बुदबुद प्राण,

तुम्ही मे सृष्टि तुम्ही मे नाश।

प्रकृति के मौन सकेत बादल महादेवी को प्रिय का सन्देश देने आये है–

लाये कौन सन्देश नये घन।

प्रिय का सन्देश पाकर वह प्रिय मिलन के लिए आह्वान से भर जाती हैं–

मुस्कराता सकेत भरा नभ

अति क्या प्रिय आने वाले है।

मिलन की आशा रोम–रोम मे स्पंदित हो उठती है।

नयन श्रवणमय श्रवणनयनमय आज हो रही कैसी उलझन।

रोम–रोम मे होता री सखी एकात्मा उर का स्पदन।।

महादेवी के अध्यात्मिक मिलनोभ्यास और अह्लाद का भी वर्णन किया गया है। मानो क्षण भगुर जीवन को अपनी गोद मे लेने के लिए साक्षात आनन्द ही उपस्थित हो गया है–

अक मे तम नाश के

लेने अनन्त विकास आया।

महादेवी की रहस्यानुभूति की धारा क्रमश· प्रारम्भिक मिलन, दीर्घ वियोग, पुन क्षणिक मिलन के तटवर्ती बिन्दुओ को स्पर्श करती हुई अन्तत उस स्थान तक पहुच जाती है। जहा विश्व और मिलन का सामंजस्य स्थापित हो जाता है वे साधिका रूप मे परम तम्व के अस्तित्व का बोध कराने लगती है द्वैत और अद्वैत में सामन्जस्य स्थापित हो जाता है आधुनिक युग के कवियो मे महादेवी की ही रहस्यानुभूति में यथार्थ, व्यापकता, गम्भीरता व उसकी अभिव्यक्ति मे कलात्मकता मिलती है। अत यह कहना सत्य है कि महादेवी के रहस्यवाद के हृदय भक्तिमय और हृदय भक्तिपरक होता चलता है।

वेदना, करूणा, और दुःख :

महादेवी के काव्य का स्थायी भाव अलौकिक प्रणय एव रहस्यानुभव है। वेदना करूणा निर्वेद उसके साहचर्य बनकर उपस्थित हुए हैं। मृत्यु उनके लिए निर्वाण के समान है–

पीडा का साम्राज्य बस गया

उस दिन दूर क्षितिज के पार

मिटना क्या निर्वाण जहा

नीरव रोक्ष का पहरेदार।

महादेवी की प्रणय वेदना करूणा और दु:ख परस्पर प्रेरक एव साधक है। वे उनके अध्यात्मिक चिन्तन से सहमत है। महादेवी ने कहा है।——

''दु:ख मेरे निकट जीवन का ऐसा काव्य है जो सारे ससार को एक सूत्र मे बाध रखने की क्षमता रखता है। मुझे दु:ख के दोनो रूप प्रिय है एक वह जो मनुष्य के सवेदनशील हृदय को सारे ससार से एक अविच्छिन्न बधन मे बाध देता है। और दूसरा वो जो काल और सीमा के बंधन मे पडी असीम चेतना का क्रन्दन है।''

महादेवी के काव्य मे व्याप्त वेदना करूणा और दु:ख को क्रमश वेदनाभाव, करूणावाद, या दु:खवाद की सज्ञा दी गयी है। महादेवी ने पीडा, व वेदना को प्रणय के अर्थ मे प्रयुक्त किया है। वेदना और पीडा के साथ मधुर विशेषण आये है–

वेदना मधु मदिरा सी धार

मेरी मधुमय पीडा को कोई ढूढे पर कोई ढूढ न पाये।

महादेवी की अलौकिक चितवन को आहत करके पीडा का साम्राज्य दे दिया –

इन ललचाई पलको पर, पहरा जब था बीडा का।

साम्राज्य मुझे दे डाला, उस चितवन ने पीडा का।।

उस घटना को खीचते हुए युग व्यतीत हो गये––

गये तब से कितने युग बीत
हुए कितने युग निर्वाण।

निर्गुण निराकार प्रियतम की स्पष्ट झलक महादेवी के प्रकृति के रूप वैभव मे दिखती है। उनको ब्रम्ह आत्मा के साथ आख मिचौली खेलता दीख पडता है–

मेघो मे विद्युत सी छवि उनकी बनकर गिर जाती
आखो के चिटपटी मे जिससे मै आक न पाऊ।
मै फूलों मे रोती वे बाला करूण मे मुस्कुराते
मै पथ मे बिछ जाती हू वे सौरभ मे उड जाते।

यह प्रेम वेदना प्रकृति के उपकरणो से उदीप्त हो जाती है। महादेवी प्रकृति के क्रिया कलापो में पप्रणय सपनो का साक्षात्कार करती हैं।

जिस दिन नीरव तारों से
बोली किरनो की अलके।
सो जाओ अलसाई है
सुकुमार तुम्हारी पलकें।

वेदनाभूति की व्यजना महादेवी वर्मा ने शारीरिक, मानसिक एव सात्विक अनुभवो के द्वारा की गई है। उसका वेदना भाव मे विभिन्न मानसिक अवस्थाओ, भाव दशाओ एव सचारी भावो का निरूपण विस्तार से हुआ है। मिलन और आशा से उसका मन और ह्रदय विह्वल हो जाता है।

पुलक–पुलक उर, सिहर–सिहर तन

आय नयन आते क्यो भर–भर।

हे नभ की दीपावलिया

तुम पल भर को बुझ जाते

मेरे प्रियतम को भाता है

तम के पर्दे मे आना।

महादेवी की वेदना अनन्त प्रिय के प्रणय की वेदना है। प्रणय की भाव दशाओं का निरूपण अत्यन्त भावात्मक अनुभूति से है उसमें शारीरिकता एव कामुकता का लेश भी नही है।

महादेवी के काव्य मे करूणा से तात्पर्य भावना या भावनाभूति और सवेदना की भावात्मक अनुभूति है। उनकी करूणा बाल्यकाल से ही पशु–पक्षियों, कीट–पतगो, एव मानवमात्र के लिए रही है। आगे बौद्व साहित्य के अनुशीलन से उसके प्रसार को प्राप्त किया उनकी करूणा भावना का आलम्बन का मुख्यतः पुष्प है करूणा का उद्वेक गम्भीर रूप से हुआ है निम्न गीत मे मेघो के दु.खपूर्ण रूप का चित्रण किया गया है।

आंसू का तन विद्युत का मन

प्राणो मे वरदानो के प्रण

धीर पदो से छोड चले पथ

दु ख पाथेय सम्भाले।

महादेवी कमश करूणा से दु ख और निर्वेद की ओर अग्रसर हो जाती है। महादेवी से अपने दु खवाद के सम्बन्ध मे 'यामा' की भूमिका मे लिखा है।

"सुख और दुख के धूपछाही डोरो से बुने जीवन में मुझे केवल दु ख ही गिनते रहना क्यो। इतना प्रिय है दु ख मेरे निकट जीवन का ऐसा काव्य है जो सारे ससार को एक सूत्र मे बाधे रखने की क्षमता रखता है। हमारे असख्य सुख हमे चाहे मनुष्यता की पहली सीढी पर न पहुच सके परन्तु हमारा एक बूद आसू भी जीवन को अधिक मधुर अधिक उर्वर बनाये बिना नही गिर सकता मनुष्य सुख को अकेला भोगना चाहता है। परन्तु दुख को सबको बाटकर विश्व जीवन मे अपने जीवन को विश्व चेतना मे अपनी वेदना को इस प्रकार मिला देना जिस प्रकार एक जल बिन्दु समुद्र मे मिल जाता है कवि का मोक्ष है।"

(यामा की भूमिका)

महादेवी के दुखवाद का उनके व्यक्तिगत दुख या अभाव से कोई सम्बन्ध नहीं है। बौद्ध दर्शन के दुखवाद का भी उन पर प्रभाव पडा है। उनके दुखवाद के मूल रूप में उनके जन्म से ही कुछ सस्कार हैं। साथ मनोवैज्ञानिक एवं अध्यात्मिक दृष्टि से जीवन और समाज के व्यापक दुख

का भी महादेवी पर प्रभाव है। जन्मजात प्रवृत्तियो के कारण महादेवी के काव्य मे करूणा की भावना प्रबल रही है। बौद्ध दर्शन के प्रभाव के कारण यह करूणा दुख की स्वीकृति मे प्रबल हो गई महादेवी मे दुख की भावना अनेक स्रोतो से विकसित होती हुई जहा दुख न रहकर अन्तर्रात्मा का अभीत्सित साध्य बन जाता है। और दुख सुख की प्राप्ति बन जाता है। महादेवी मे दुख की भावात्मक स्थितिया मिलती है वे अपने सूनेपन को प्रकृति मे देखती है।

कन कन मे बिखरा है निर्मम,
मेरे मानस का सूनापन।

सुख–दुख का द्वन्द भी उनके सामने आता है उनके सामने प्रश्न उपस्थित होता है।

सौरभ पी पी कर बहता
देखूँ यह मन्द समीरन
दु ख के घूटे पीती या
ठडी सासो को देखू।

उनको बोध हो जाता है कि दुख रूपी साधन से साध्य की उपलब्धि सम्भव है वे प्रियतम के दुख रूपी मे ही आमत्रित करने लगती है।

तुम दुख बनकर इस पथ मे आना
शूलों नित मृदु पाटल सा
खिलने देना मेरा जीवन

प्राण हस कर ले चला जब

चिर व्यथा का भार

अब न लौट आने को कहो

अभिशाप की वह पीर

बन चुकी स्पदन हृदय मे

वह नयन मे नीर

अमरता उसमे मनाती है मरण त्यौहार।

(दीपशिखा)

निष्कर्ष मे कहा जा सकता है कि महादेवी दुख को जीवन की साधना मानती हुई उसके साथ चिर स्थायी सम्बन्ध स्थापित करती है। महादेवी ने उस सम्बन्ध मे स्वय लिखा है कि 'नीहार' के रचनाकाव्य मे मेरी अनुभूतियो मे वैसी ही निहित वेदना उमड आती है रश्मि को उस समय आकार मिला जब मुझे अनुभूति से अधिक मिलन प्रिय का परन्तु 'नीरजा' और 'सान्ध्यगीत' मेरी उस मानसिक स्थिति को व्यक्त कर सकेगे जिसमें मेरा हृदय सुख दुख का अनुभव करने लगा पहले बाहर खिलने वाले फूल को देखकर मेरे रोम रोम में ऐसा पुलक दौड जाता था मानो वह मेरे हृदय मे खिला हो परन्तु उसके सामने भिन्न अनुभूति एक वेदना भी छपी फिर वह सुख–दुख मिश्रित अनुभूति ही चिन्तन का विषय बनने लगी जिसने सुख दुख को उस प्रकार बुन दिया है कि एक के प्रत्यक्ष अनुभव के साथ दूसरे का अप्रत्यक्ष आभास मिलता रहता है।

महादेवी के काव्य प्रकृति–चित्रण :

महादेवी को प्रकृति के प्रति बचपन से ही अनुराग रहा। पेडो–पौधो एव पशुओ से अनुराग उनके जीवन का अग बन गया जीवन दृष्टि के विकास के साथ साथ उनका प्रकृति सबन्धी दृष्टिकोण भी विकसित होता रहा उनके काव्य मे प्रकृति के विभिन्न रूप मिलते है। शद्ध आलम्बन रूप मे महादेवी के प्रकृति चित्रण बहुत कम किया है। फिर भी रश्मि, ऊषा, बसन्तरजनी, सध्या आदि का स्वतत्र चित्रण मिल जाता है। निम्न उदाहरण मे ऊषा का स्वतत्र चित्रण है परन्तु अन्त मानवीकृत रूप मे होता है।

''रूपसी तेरा धन केश पाश

श्यामल श्यामल कोमल कोमल

लहराता सुरक्षित केश पास।''

उद्दीपन रूप मे प्रकृति चित्रण के अन्तर्गत महादेवी ने प्रकृति का उपयोग पृष्ठभूमि और वातावरण दोनो रूपो मे किया है। वे अपनी अनुभूतियो और भावनाओ की अभिव्यक्ति के तद्नुकूल पृष्ठभूमि का निर्माण प्रकृति के माध्यम से करती है।

निशा को धो देता राकेश

चादनी मे जब पलके खोल

कली से कहता था मधुमास

बता दे मधु मदिरा का मोल

झटक जाता था पागल बात

धूलि मे तुहिन कणो के हार

सिखाने जीवन का सगीत

तभी तुम आये थे इस पार।

प्राकृतिक दृश्यो का अपनी भावनाओ के रग मे रग कर उनकी स्वाभाविकता और सहजता को अक्षुण्य बनाये रखने की कला मे महादेवी जी कुशल है। महादेवी ने प्रकृति के मानवी रूप मे आकर्षण रूप मे वर्णन किया है। उनका प्रकृति चित्रण संबन्धित कोई भी ऐसा गीत नहीं मिलेगा जहा इसके किसी न किसी पक्ष या अग पर कोई मानवीरूप आरोपित न किया गया हो। 'निहार' के या कली के रूप शैशव मे है। सूखे सुमन मे पुष्प की पूरी कहानी मानवीरूप मे प्रस्तुत की गयी है। उपमान रूप मे प्रकृति का प्रयोग महादेवी ने काव्यकला की सज्जा या उसके अलकरण के लिए किया है। कही कही उपमान और उपमेय दोनो का कार्य प्रकृति से लिया गया है।

कनक से दिन मोती सी रात

सुनहली सांझ गुलाबी प्रात।

प्रतीक रूप मे प्रकृति का चित्रण महादेवी के काव्य प्रचुर रूप से मिलता है। 'मधुर–मधुर मेरे दीपक जल' में दीपक जीवन का प्रतीक है महादेवी अपने दार्शनिक विचारों एवं बौद्धिक तलो के प्रतीक रूप मे प्रकृति के विभिन्न अगो का ग्रहण करती है। तम, अंजन, घटा, निराशा, और सागर

ससार के अर्थ मे प्रयुक्त हुआ है। निम्न उदाहरण प्रकृति का खण्ड चित्र प्रस्तुत कर देता है।

घोर तम छाया चारो ओर

घटा घिर आयी घनघोर

वेग मारूत का प्रतिकूल

हिल जाते है पर्वत मूल

गरजता सागर बारम्बार

कौन पहुचायेगा उस पार।

प्रतीक रूप मे प्रकृति महादेवी काव्य मे भावो को स्पष्ट कर उसे अनुभूतिगम्य बनाने मे सहायक है। मानवीकरण के साथ में प्रकृति कही कही अन्योक्ति रूप मे भी आई है। निम्न उदाहरण मे पुष्प के माध्यम से उदार व्यक्ति की कहानी प्रस्तुत की गयी है।

कर दिया मधु और सौरभ

दान सारा एक दिन

किन्तु रोता कौन है

तेरे लिए दानी सुमन।

निष्कर्ष रूप मे कहा जा सकता है कि महादेवी ने प्रकृति चित्रण शुद्व प्रकृति चित्रण के लिए न केवल भावो और विचारो की अभिव्यक्ति के माध्यम रूप मे किया है। प्रकृति के बारह सौन्दर्य की अपेक्षा करके उसके आन्तरिक सौन्दर्य को ही अधिक अंकित किया है। प्रकृति के सारे चित्र

गत्यात्मक है उनका प्रकृति चित्रण 'सत्यम्–शिवम्–सुन्दरम्' की समन्वित लक्ष्य की पूर्ति आदर्श प्रस्तुत करता है।

काव्य–रूप

गीति काव्य की परिभाषा देते हुए महादेवी ने लिखा है "सुख–दुख की भावमयी अवस्था विशेष का गिने चुने शब्दो मे स्वर साधना का उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीत है।"

महादेवी ने गीतिकाव्य का विवेचन और विश्लेषण ही नही किया बल्कि सुन्दर गीतो की रचना भी की। उनका सारा काव्य गीतिकाव्य के प्रमुख तत्व है।

1 भावत्मकता

2 सगीतात्मकता

3 वैयक्तिक्ता

4 सक्षिप्तता और

5. भावानुकुल भाषा।

भावात्मकता :

महादेवी की गीतिकाव्य मे अलौकिक प्रणय भाव, करूणा और निर्वेद की अभिव्यक्ति हुई है। अलौकिक प्रणय गीतो की आश्रय स्वय महादेवी है। अत· वे रगात्मक तत्वो से परिपूर्ण है।

बिछाती थी सपनो के जाल

तुम्हारी वह करूणा की कोर

गयी वह अधरो की मुस्कान

मुझे मधुमय पीडा मे बोर

नही अब गाता जाता देव

थकी अगुली है ढीले तार

विश्व वीणा मे अपनी आज

मिला लो यह अस्फुठ झकार

महादेवी के गीतो में अतिसय भाव प्रवणता की कभी छूने पर उनके सवेदनशीलता सवेदना और रागात्मक अधिक है। वे तरल भावुकता एव अभिनव धारा के द्वारा पाठक के हृदय को आप्लावित करने के साथ मनमोहक एव कलात्मक भाव चित्र भी प्रस्तुत कर देते है।

संगीतात्मकता :

महादेवी काव्यकला चित्रकला एव सगीतकला तीनो की मर्मज्ञा है उनके गीतो मे संगीतात्मक का पूर्ण निर्वाह हुआ है। उनके गीतो की विशेषता यह है कि वह पूरे गीत के भाव को स्पष्ट कर देती है। महादेवी के गीत मे छन्द, लय तथा ध्वनि एव स्वर योजना मूल भाव के अनुकूल हुई है। संगीतात्मकता उनके गीतो को गेय बना देती है। उनकी गीतों मे सगीत का वह मोटा मत्र है। जो मन को लोरी देकर स्वप्नाविष्ट करने की शक्ति रखता है।

वैयक्तिकता :

महादेवी का सारा काव्य सहानुभूति पर आधारित होने के कारण वैयक्तिक्ता पर आधारित प्रधान है। उनके प्रेम का आलम्बन सूक्ष्म अलौकिक और अस्पृश्य है उनके गीतो मे सर्वत्र ही मनोदशाओ, भावदशाओ और भावानुभूतियो का स्वर सुनाई पडता है।

''प्रिय साध्य गगन मेरा जीवन

मै फूलो मे रोती, वे

वातारूण मे मुस्कुराते

यह शेष नही होगी

मेरे प्राणो की क्रीडा

तुमको पीडा मे ढूढा

तुममे ढुढूगी पीडा।

इस प्रकार महादेवी के गीतिकाव्य के मे अलौकिक प्रिय से प्रथम परिचय लेकर निर्वाण प्राप्ति साधनो के विभिन्न सपनो की कहानी सर्वथा उनकी वैयक्तिक कहानी है। वैयक्तिकता उनके गीतो मे सम्पूर्ण वैभव के साथ विद्यमान है इस दृष्टि से महादेवी का गीतिकाव्य हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ गीतिकाव्य है।

संक्षिप्तता :

महादेवी की काव्य कला के विकास के साथ उनके गीतों में सक्षिप्तता का गुण बढता गया ''क्या पूजा क्या अर्चन है।'' गीत केवल नौ

पक्तियो का है। उनके गीतिकाव्य मे सक्षिप्तता का गुण सर्वत्र नही मिलता है।

भावानुकूल भाषा :

महादेवी के गीतो की प्रमुख विशेषता भाषा की भावानुकूलता है। निम्न उदाहरण मे नयन श्रवण श्रवण—नयन रोम—रोम आदि का प्रयोग उस ढग से हुआ है मिलने की भावात्मक स्थिति ध्वनित हो उठती है।

नयनश्रवणमय श्रवणनयनम आज हो रही कैसी उलझन

रोम—रोम मे सखि एक नये उर का सा स्पदन।

आधुनिक गीतिकारो मे महादेवी के गीति—काव्य का विकास चरमोत्कर्ष पर है। औदात्य भावना के सयम कल्पना सौन्दर्य शैली के सामजस्य एव सतुलन से महादेवी के गीत सर्वश्रेष्ठ है।

काव्यशिल्प :

महादेवी जी की काव्य कला की दो विशेषताये हैं। छायावादी काव्यगत विशेषताएं और निजी विशेषताए 'महादेवी जी की कला पक्ष भी उतना ही सुन्दर है जितना की भावपक्ष और चूकि वह छायावाद की कवयित्री है तथा छायावाद के कला सौन्दर्य की प्रमुख प्रसाशिका रही है। अत उनकी काव्य रचना में छायावादी कविता के शैलीगत तत्व ही प्रयुक्त हुए हैं।'

(डॉ इन्द्र नाथ मदान)

भाषा :

महादेवी ने आरम्भ मे ही ब्रजभाषा मे ही कविताए लिखी थी। तथापि उनकी वे ही कविताए प्रकाश मे आईं जो खडी बोली की कविताए है। अत उन्हे खडी बोली की कवयित्री ही नही बल्कि उन्हे खडी बोली को काव्योचित भाषा बनाने मे अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान किया है। इस प्रकार उसकी भाषा भावो को कोमलता के अनुरूप ही और उसमे माधुर्य वे अभिनव सुकुमारता के साथ प्राजलता सगीतात्मकता व सवेदनशीलता भी है।

मधुरिमा के मधु के अवतार
सुधा के सुषमा से छविमान
आसुओ मे सहमे अभिराम
तारको से है मूक अजान
सीखकर मुस्कानो की बान
कहा आये हो कामल प्राण।

अन्य छायावादी कवियो की भाति महादेवी भी अपनी शब्द चयन के प्रति अत्यन्त जागरूक है। उन्होने सस्कृत के तत्सम शब्दो का बहुलता से प्रयोग किया है। कतिपय स्थलो को छोडकर उनकी भाषा दुरूह नही हो पाती है।– कारण यह है कि इन्होने लोक प्रचलित शब्दो का निसंकोच भाव से ग्रहण किया है।

लाये कौन सदेश नये घन

अम्बर गर्वित हो आया नत

चिर निस्पद हृदय मे उमडे री पुलको के सावन

चौकी निद्रित रजनी अरसित

श्यामल पुलकित कम्पित कर मे दमक उठे विद्युत के कण।

अप्रस्तुत विधान :

छायावादी काव्य मे अधिकाशत सूक्ष्म उपमानो का प्रयोग पाया जाता है कि महादेवी ने भी सूक्ष्म उपमानो का प्रयोग किया है–

"इन पर सौरभ की सासे लुट पुट जाती दीवानी।"

यहा सासो को सौरभ के समान बताया है। पुष्प सुगन्ध निश्चित से सूक्ष्म तत्व है निम्न उदाहरण मे सूक्ष्म उपमानो की बारात सी दिखाई देती है।

करते करूणा घन छायी वहा झुलसता निदाध सा दाह नही मिलती शुचि आसुओ की सरिता मृगवारि का सिधु अथाह नही हसता अनुराग का चन्द्र सदा छलना की कुछु का निर्वाह नही फिरक अति भूल कहा भटका यह प्रेम के देश की राह नही।

अलंकार की प्रकृति :

शब्दालकारो के प्रति महादेवी जी की रूचि बहुत कम दिखाई देती है। शब्द शेष शायद ही कहीं मिले है। अनुप्रास जहा अपने आप आ गया है इसी प्रकार यमक का दर्शन भी केवल इने गिने स्थानो पर ही होता है–

जगती जगती की मूक प्यास।

अर्थालकारो मे उपमा सागरूपक समासोक्ति अलकारो का प्रयोग पाया जाता है। वैसे अपन्हुति व्यतिरेक दीपक विरोधाभास तथा अन्योक्ति के भी दर्शन होते है। अग्रेजी काव्य पद्वति के मानवीकरण एव विश्लेषण विपर्यय अलकारो के भी सुन्दर प्रयोग पाये जाते है। स्वाभाविक एव उपमा का यह विधान देखते ही बनता है।

अवनि अम्बर की रूपहली सीप मे तरल मोती जा जलधि जब कापता।

महादेवी के काव्य मे यमको का समृद्ध भण्डार भरा पडा है। विरह की साधिका होने के कारण विश्व सबन्धी रूपक अधिक सख्या मे है। और भावोत्कर्षकारी भी है। इस सदर्भ मे विरह का जल जात जीवन प्रिय साध्य गमन मेरा जीवन शलभ मै शापमय वर हू – "मै नीर भरी दु ख की बदली" आदि गीत देखे जा सकते हैं। ये सागरूपक हैं। निरग रूपक पद मिल जाते है। महादेवी का काव्य प्राय व्यग प्रधान है। उसमे समासोक्ति का खुलकर प्रयोग हुआ है।

निम्नलिखित मे उपमा क्रम और अपहनुति तीन–तीन अलकार उलझे हुए दिखाई देते है।

एक प्रिय दृग श्यामलता सा

दूसरा स्मित की विभा सा

यह नही निशि दिन

इन्हे प्रिय का मधुर उपहार ऐ कहा।

महादेवी के प्रकृति चित्रण मे मानवीकरण के उदाहरण भरे पडे है।

लाक्षणिकता

लाक्षणिकता का प्रयोग छायावादी कविता की प्रमुख विशेषता है। उसके द्वारा अमूर्त वस्तुओ के लिए मूर्त विज्ञान की योजना की जाती है। महादेवी जी के काव्य मे ढेरो लाक्षणिक प्रयोग दिखाई पडते है उसमे कभी प्रभास हसता है। कही आहे सोती है। और कही किरणे बदलती है।

> चाह इन्द्र धनुष मे चितित सा सजल मेघ सा धुमिल है जग
> देखकर कोमल व्यथा को ऑसुओ के सजल रथ मे
> मीन सा साधे बिठा दी थी इसी अगार पथ मे
> स्वर्ण है मत करो अब क्षार मे उनको सुला लूँ।

प्रगीत शैली

महादेवी जी ने सामान्यत चित्रशैली सम्बोधनशैली आदि विविध प्रकार की शैलियो का प्रयोग किया है परन्तु सबसे अधिक प्रगीत शैली का प्रयोग किया है, उनके काव्य का ध्येय प्रगीत शैली को ग्रहण करना था तथा इस दृष्टि से उन्होने अपने काव्य में गीतो की विभिन्न काव्य विशेषताओं का सुन्दर समन्वय किया है।

सगीत एव छन्द का अभाव यद्यपि महादेवी जी सगीत शास्त्र से भलि–भॉति परिचित है उन्होंने कोमलकात पदविन्यास के आयोजन के द्वारा ही अपने गीतो मे सहज सगीतात्मकता का समावेश कर दिया है–

मै पलको मे पाल रही हूँ,

यह सपना सुकुमार किसी का

धूममयी बीघी–बीघी मे

लुक–छिप कर विद्युत सी रोई।

महादेवी जी ने गेय पदो मे ही काव्य की रचना की है। कही–कही 'गीतिका' व 'सार' छन्दो का प्रयोग दृष्टिगोचर हो जाता है। उनके काव्यो मे छन्दो के उपयोग के लिए विशेष अवसर रह ही नही जाता है। महादेवी जी ने पिगल शास्त्र मे निर्दिष्ट छन्द योजना के लिए अवश्य गति नियम यति–बधन व तुक पालन का सर्वत्र ध्यान रखा है।

महादेवी जी के शैली–शिल्प की विशेषताएं ·

महादेवी के काव्य मे कला पक्ष सबधी कुछ विशिष्ट विशेषताएं है उनमें प्रमुख विशेषताए इस प्रकार है–

1 प्रतीक–योजना

2 सजीव चित्रात्मकता

3 सीमित उपकरण

4 वर्ण मैत्री

5 लोक गीत के तत्व

1 **प्रतीक योजना** : यद्यपि छायावादी काव्य मे प्रतीको का प्रयोग बहुलता के साथ पाया जाता है तथापि महादेवी जी ने इस प्रकार से अपने काव्य मे प्रतीकों की योजना की है वह निजी विशेषता ही समझी जायेगी। इन्होने प्रतीक विधान के लिए प्रतीक उपकरणो को

ग्रहण किया— बदली, साध्य गगन, सरिता, दीप, सजल नयन, रात्रि गगन, जलधारा, अधकार, ज्वाला, पकज, किरण, स्वप्न, विद्युत आदि इनके प्रतीको मे प्रमुख है। इनके कुछ प्रतीक रूप मे प्रयुक्त होने के कारण बोधगम्य है जैसे— सागर ससार के लिए तेही जीव के अर्थ मे, जलचर वृन्द कुवासनाओ के लिए, तम अज्ञान के लिए, वीणा के तार, हृदय की भावो के लिए इत्यादि। कुछ प्रतीको का प्रयोग इन्होने विशिष्ट एवं निजी अर्थ मे किया है ऐसे स्थल पर इनका भावार्थ ग्रहण करने मे कुछ बाधा उपस्थित हो जाती है। लेकिन महादेवी जी ने दीपक के रूप मे आत्मा की कल्पना करते हुए सलभ को भाव मूलक सासारिक प्रतीक माना है। महादेवी ने अन्य कई प्रतीको को अपने निजी अर्थों मे प्रयुक्त किया है, जैसे— 'मै नीर भरी दुख की बदली।' यहा बदली का अर्थ करूणा से परिप्लावित हृदय है। 'प्रिय साध्य गगन मेरा जीवन।' यहा लौकिक के प्रति विराग और अलौकिक के प्रति अनुराग के अर्थ मे साध्य गगन का प्रयोग हुआ है।

2 सजीव चित्रात्मकता— महादेवी एक कुशल कवयित्री होने के साथ—साथ एक कुशल चित्रकार भी है चित्र भी उनकी कला के अग है। 'यामा' और 'दीपशिखा' के चित्र स्वयं इन्होंने बनाये है। महादेवी जी कुछ शब्दो के द्वारा ही सजीव चित्र चित्रत करने में सिद्ध हस्त हैं। बसन्त रजनी का यह सजीव चित्र देखते ही बनता है—

धीरे—धीरे उतर क्षितिज से आ बसंत रजनी।

तारकमय—नव—बेणी—बंधंन, शीश फूल कर शीश का नूतन

रश्मि–बलय सित धन अवगुहन

मुक्तहाल अभिराम बिक्षोह, चितवन से अपनी।

धीरे–धीरे उतर क्षितिज से आ बसत रजनी।

इन पक्तियो मे बसत रजनी के रूप मे नवयौवना अल्हड नायिका का स्वरूप साकार हो उठा जैसा कि सुमित्रानन्दन पन्त मे अपनी काव्य–कृति पल्लव प्रवेश मे कहा है कि "कविता के चित्र भाषा की आवश्यकता पडती है उसके शब्द सस्वर होने चाहिए, जो बोलते हो, शेष की तरह जिनके मधुर रस की लालिमा भीतर न समा सकने के कारण बाहर झलक पडे, जो अपने भाव अपनी ही धुन मे आखो के सामने चित्रित कर सके जो इतकार मे चित्त हो और चित्त मे झकार हो। महादेवी जी कवयित्री एव चित्रकार दोनो है, डॉ नागेन्द्र ने उनकी कला को तितली के पखो और फूलो की पंखुडियो से चुराई हुई कला बतलाया है। उनका कहना है कि "पन्त की कला में जडाव और कढाव है महादेवी की कला मे रगधुली तरलता है, जैसे पखुडियो पर पडी ओस मे होती है, उनके चित्रो की रेखाए पाठक के सामने सजीव–चित्र खडा कर देती है जिस किरणागुत्थि के स्वप्न भरे, मृदुकर सम्पुट मे गोद लिया चितवन से ढला अत स्नेह, विश्वासों का आमोद। कही–कही सगीत व चित्रकला का सम्मिश्रण हो जाने के फलस्वरूप इनकी कविता मे कोमल पदावली, चित्रात्मकता एवं ध्वन्यात्मकता की सुखद त्रिवेणी का दर्शन होता है, यथा चितवन तन श्याम रग, इन्द्र धनुष भृकुटि भंग, विद्युत का अगराग, दीपित, मृदु, अंग–अंग, उडता नभ मे अछोर तेरा नव नील,

चिर, अवलोकन, सशिलिवट, चित्रण व उपर्युक्त वर्ण प्रयोग से उनके चित्रो मे अनुठी प्रभिविष्णुता भी विद्यमान है और सभिप्राय विशेषणो का प्रयोग चित्त को एकदम प्रत्यक्ष कर देता है।

कई स्थलो पर महादेवी जी के शब्दो–चित्रो की योजना है उसकी रगीन कल्पनाओ पर हृदय बलात रस विभोर हो उठता है, जैसे–

जब कपोल गुलाब पर शिशु प्रात के सूखते नक्षत्र जल के बिन्दु से रश्मियो की कनक धारा मे नहा मुकुल हस्ते मोतियो का अर्ध्य दे।

महादेवी जी की कविता मे कल्पना के ऐश्वर्य के साथ प्राय विराट कल्पना का दर्शन हो जाता है।

उभर आये सिधु उर मे वीचियो से लेख,
गिरि कपोलो पर सुखी ऑसुओ की रेख।

सीमित उपकरण : महादेवी जी की कला मे उपकरण बहुत ही सीमित है परन्तु इन सीमित उपकरणों मे ही उनका भाव–सागर लहराता हुआ दिखाई देता है, उदाहरण के लिए 'दीपक' को लेकर ही इन्होने अनेक गीतो की रचना की है, 'नीहार' से लेकर 'दीपशिखा' तक यह उपकरण निरतर प्रतीक रूप मे प्रयुक्त हुआ है, जैसे–

1 शिखा दो ना ने ही का रीति अनोखे मेरे दीप (नीहार)।

2 कुहरे–सा धुधला भविष्य है/अतीत का तम घोर कौन बता देगा/जाता यह किस असीम की ओर (रश्मि)।

3. मै ॲचल की ओर किये हूँ /अपनी मृदु पलकों से चचल/सहज–सहज मेरे दीपजल (नीरजा)।

4 दीप–सी युग–युग जलूँ / पर वह सुभग इतना बता दे।

5 शलभ मै शापमय वर हूँ / किसी का दीप निष्ठुर हूँ। (दीपशिखा)

इस प्रकार उन्होने 'रात' को भी विभिन्न गीतो मे प्रतीक रूप मे रखा है। बसत–रजनी, रूपार्स, मिलन–यामिनी, विभावरी, सुकेशनी, सपने जगाती आ, आदि गीतो मे रात को, प्रेयसी वातशल्यमयी जननी, सखी, प्रेरक या पथ–प्रदर्शिका आदि रूपो मे प्रस्तुत किया गया है।

इस प्रकार कला के सीमित उपकरण ग्रहण करके ही कवयित्री ने उनका बहुत ही भावपूर्ण प्रयोग किया है उन्होने अधिकाशत सात्विक उपकरणो का ही प्रयोग किया है जैसे– पूजा, अर्चना, दीपक, आरती, धूप, अक्षत आदि।

वर्ण मैत्री : महादेवी जी का शब्द चयन अप्रतिम है, इन्होने शब्द चयन सर्वथा भावव्यजना के अनुकुल ही किया है इसमे अधिकाशत तत्सम शब्दो का बाहुल्य है परन्तु काव्य मे तद्भव शब्दो का भी अभाव नही है– बिछौना, सॉस, सुहाग, छॉह, पीर, रीता आदि उसके अतिरिक्त इन्होने हौले–हौले अलबेला, मतवारे, पाहुन आदि देशज शब्दो का प्रयोग किया है। इस वर्ण मैत्री भी इनकी शब्द–योजना की प्रमुख विशेषता है।

लोकगीत के तत्व : महादेवी के गीतों में साहित्यिक गीतो की विशेषताओ के साथ लोकगीतो की भी विशेषताए पायी जाती है। लोकगीतों का लयात्मक सगीत इनके अनेक गीतो में उपलब्ध होता है, जैसे–

जो तुम आ जाते एक बार।

हाय उठते पल मे आद्र नयन घुल जाता ओठो का विषाद

छा जाता जीवन बसत लुट जाता चिर सचित विराग

ऑखे देती सर्वस्व धार।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि महादेवी का काव्य–सौदर्य, शास्त्र, काव्य–शास्त्र एव वैज्ञानिक दृष्टि से उच्च कोटि का है। वह काव्य–शास्त्रीय दृष्टि से हवन्यात्मकता, प्रतीकात्मकता और रसात्मकता से परिपूर्ण है, साहित्य विज्ञान की दृष्टि से उसमे बौद्धिक सरलता है। वह सत्य–बोध दर्शन की अभिव्यक्ति भावना के औदात्य, जीवन के सौदर्य एव विश्व कल्याण की दृष्टि से महान है सत्य उनके काव्य का साध्य और सौदर्य साधना है भगवान बुद्ध के सदेश से प्रभावित होते हुए भी वह जीवन को पलायन की ओर न ले जाकर बाधाओ एव सकटो से जुझने का सदेश देता है। उनके काव्य मे निम्न का सदेश प्रदीप्त हो उठता है–

"और होगे चरण होर

अन्य है जो लौटते

दे शूल को सकल्प सारे

दु:ख व्रती निर्माण उन्माद,

यह अमरता नापते पद

बांध देगे अग संसृति

से तिमिर मे स्वर्ण बेला।"

राकेश

समीक्षा – अस्तु, 'रजकणो मे खेलती विरज विधू की चॉदनी,'– महादेवी जी का कवित्व समान्यभाव की साधना से जितना सरल, मधुर, करूण तथा कोमल है, उनका कृतित्व उतना ही उदात, व्यापक, विराट एवं महान है। हिमालय का सबोधन करते हुए उन्होने अपने कवित्व और कृतित्व का अनाभास ही जैसे उद्घाटन कर दिया है–

हे। चिर महान।

यह स्वर्ण रश्मि धू श्वेत माल बरसा जाती रगीन हास

सेली बनता है इन्द्रधनुष परिमल मलमल जाता बतास

पर रागहीन तू हिम निधान।

नभ मे गर्वित भुकता न शीश पर अक लिए है दीन क्षार

मन गल जाता नत विश्व देख तन सह लेता है कुलिश भार

कितने मृदु कितने कठिन प्राण।

टूटी है कब तेरी समाधि झझा लौटे शत हार–हार

बह चला दृगों से किन्तु नीर सुनकर जलते कण की पुकार

सुख से विरक्त दु:ख मे समान।

मेरे जीवन का आज मूक तेरी छाया से हो मिलाप

तन तेरी साधकता छू ले मन ले करूणा की थाह नाप

उर मे पावस दृग मे विहान।''

वास्तव मे महादेवी जी से तुलना करने के लिए हिमालय ही सबसे अधिक उपर्युक्त है। उनके व्यक्तित्व वही उन्मत और दिव्य रूप वही विराट तथा विशाल प्रसार, वही अमल–धवल, एवं अटल–अचल, धीरता–गम्भीरता,

वही पर दुःख–कातरता, करूणा तथा स्नेह सिक्त तरलता और सबसे बढकर वही सर्व–सुखद, सुभ्य मुक्तहास– यही तो महादेवी है।

अत मे मै यह कहना चाहती हूँ कि समीचीन और समयानुकुल जान पडता है कि यदि हम उनके सदेश को अपने जीवन मे चरितार्थ कर सके तो इससे उनकों परम सतोष और आनन्द तो मिलेगा ही, हमारा अपना पथ भी प्रसस्त और सर्व कल्याणमय होगा।

प्रतीक : अर्थ, उद्भव, स्वरूप और विकास

कलाकृति, सर्जक की रहस्यमय रचना प्रक्रिया का प्रत्यक्ष स्वरूप होती है और उसकी सफलता तथा सार्थकता इस बात पर निर्भर करती है कि रचना प्रक्रिया के अदृश्य भाग कलाकार की अनुभूतिया, सवेदनाओ, अतर्मथन और उसके वाछित अर्थ, को पाठक तक सप्रेषित करने और जगाने मे वह किस सीमा तक सफल हुई है। अपनी अपूर्व अनुभूतियो की अभिव्यक्ति के लिए, साहित्यकार भाषा के प्रतीकात्मक और सामाजिक माध्यम का विशिष्ट प्रयोग करता है– वह आवश्यकतानुसार शब्दो के नए अर्थों से सम्बन्धित करता है, उपर्युक्त एक विधान और शिल्प– पद्धतियो की खोज करता है तथा अपने अनुभूत की अभिव्यक्ति के लिए एक–एक प्रतीक की तलाश करता है। एक कवि के लिए एक जाल की तरह है जिसमे अनुभव को उसकी समग्रता मे बाधा– पकडा जाता है। भाषा और उसके उपकरणों के साथ निरतर चलने वाले, ये प्रयोग और अनुसधान कवि सामर्थ्य की पहचान तो है ही, वे इस बात की भी पुष्टि करते है कि जब भी पर्यावरण और युग की अतश्चेतना मे परिवर्तन होते है तो साहित्य में परिवर्तन आ जाता है और साहित्य में आने वाला हर बदलाव प्रकारातर से भाषा के धरातल को देता है। इस धारा के दो पहलू है– एक तो यह कि भाषा के विकास का इतिहास साहित्य तथा समाज और उनके परस्पर

सम्बन्धो का इतिहास है और दूसरा यह कि रचना लेखक के और सपूर्णत· साहित्य–समाज और युग के अतर्जगत का प्रतीक है।

यदि पाठक के दृष्टिकोण से देखा जाय तो अभिव्यक्ति ही कला है, क्योकि जैसा कि ऊपर भी निर्दिष्ट किया जा चुका है, रचना–प्रक्रिया का यही अग है जो पक्ति के सन्मुख रहता है, जिसके माध्यम से वह रचना के उस अदृश्य ससार मे प्रवेश कर सकता है जिसकी अभिव्यक्ति से अलग कोई सार्थक तथा स्वतत्र सत्ता नही है और जो उसके भीतर–बाहर ही सुरक्षित रहता है। इसीलिए अपनी कलात्मक अनुभूति को सही–सही रूप देना ही लेखक का सबसे बडा सकट है। सृजन प्रक्रिया में, रचनाकार का अनुभव जैसे भी वैयक्तिकता से निर्वैयक्तिकता की ओर बढता है यह अनुभव विचित्र रूप से अन्य मनस्तत्वों से जुडता हुआ, स्वयं प्रक्षेपित कर स्वय ही बदल जाता है। शब्द–बद्धता और उसकी इस पूर्ववर्ती प्रक्रिया के क्रम मे रचनाकार अनुभूति के तनाव से मुक्त होने की चेष्ठा में उसके लिए कलात्मक विन्यास की खोज करता है। (यहा यह ध्यान रखने योग्य बात है कि मुक्ति की यह चेष्ठा पलायन नही, वरन् सक्रिय सहयोग है।) अद्वितीयता की स्थिति में उसकी स्मृति पर पडे असख्य बिम्ब उसके इस बदले हुए अन्य मनस्तत्वो से जुडे, निर्वैयक्तिक अनुभव को मूर्त करने मे– प्रतीको और बिम्ब–युगलो के माध्यम से उसकी सहायता करते हैं, प्रतीको के द्वारा वह अपनी अन्त और वाह्य, परोक्ष और अपरोक्ष, गोचर और अगोचर स्थितियो मे सामंजस्य उत्पन्न करता है तथा आत्म और अनात्य के सश्लेषण की ओर उन्मुख होता है। कविता में बुने हुए ये प्रतीक भाषा के अग तो होते है किन्तु सामान्य शब्द मात्र नहीं क्योंकि वे कहते नही है

अनुभव को ही अपने भीतर सुरक्षित रखते है। इस रूप मे प्रतीक कवि को पाठक तक पहुचाने वाला या पाठक को कवि की अनुभूति को आंतरिकता तक ले जानेवाला, एक अनिवार्य भाविक सेतु है।

लेकिन प्रतीक केवल अभिव्यक्ति के नही अनुभव के, सत्य और यथार्थ के आत्मसात् करने के माध्यम भी है। अज्ञेय ''प्रतीक को काव्य मे सत्यान्वेषण तथा ज्ञानार्जन का साधन मानते है। सत्य अमूर्त और सामान्यत अग्राह्य है।उसे केवल प्रतीको के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है क्योकि प्रतीक वास्तव मे ज्ञान का एक उकरण है जो सीधे–सीधे अमिधा मे नही बधता, उसे आत्मसात् करने या प्रेषित करने के लिए प्रतीक काम देते है। इसी वजह से जहां एक ओर निरंतर नए प्रतीक रखे जाते है वही कुछ पुराने प्रतीक भी सदा जीवत बने रहते है क्योकि जो क्रियाए सनातन है उनका निराकरण करने वाले प्रतीक भी सनातन हो जाते है।'' अज्ञेय से बहुत पहले अर्नेस्ट कैलिटर ने यह सिद्ध करने की चेष्ठा की थी कि ''हम वास्तविकता को केवल प्रतीकात्मक रूपो द्वारा ही जान सकते है। जो वस्तु, हमारे सामने है उसकी सत्ता केवल हमारी बुद्धि तक ही है। उसमे जिस चीज को जिस रूप मे समझा उसका वैसा ही नाम रख दिया है। इसलिए जो कुछ हमारे सामने है वह मानसिक प्रतिबिम्ब प्रतीकात्मक रूप मात्र है।''

प्रतीक का प्रसार आज मानव जीवन और चिंतन के सभी क्षेत्रो मे है। विज्ञान, गणित तथा तर्कशास्त्र मे भी प्रतीक की सत्ता अनिवार्य है और कविता तथा अन्य कलाओ मे भी। लेकिन कविता तथा ज्ञान के इन क्षेत्रों के प्रतीको मे एक परस्पर और मूलभूत अतर है। गणित के प्रतीक किसी अनुभूति रहित तार्किक सत्य को निश्चित व्यंजना करते हैं जबकि कविता

का प्रतीक किसी विशिष्ट मन स्थिति, भाव, अन्तदृष्टि और चितन का स्वरूप होता है। इसका अर्थ जैसा कि श्रीमती सूसान लेगर की मान्यता है कि "इसके सपूर्ण विन्यास पर आश्रित होता है।" इसके द्वारा चित्र, बुद्धि, इच्छा, सवेग, गति विकास अनुभूति और मानसिक तनाव आदि को मूर्तमान रूप दिया जाता है। यह कहा जा सकता है कि विज्ञान या गणित तथा कविता कला आदि के प्रतीको मे परस्पर वही अतर होता है, जो अतर विज्ञान और कला मे बीच होता है। लेकिन इन प्रतीको तथा धार्मिक या दार्शनिक या अन्य किसी भी प्रकार के प्रतीको में जो परस्पर मूलभूत समता है– जिसके कारण हमे इस चर्चा की आवश्यकता भी महसूस हुई– वह यह है कि ये सभी प्रतीक, अपने से इतर किसी बेहतर अर्थ की ओर इगित करते है। इस सदर्भ में रेने वेलेक तथा जस्टिन वारेन की मान्यता का उल्लेख करना अनुचित न होगा। वे यह कहते है कि "प्रतीक का प्रयोग जीवन के अलग–अलग क्षेत्रो मे होता है लेकिन इन सभी प्रचलित प्रयोगों मे सर्वनिष्ठ सत्य सभवत यह है कि कोई वस्तु, किसी अन्य चीज के स्थान पर प्रयोग की जाती है, या उसका निरूपण करती है। परन्तु जिस ग्रीक क्रिया से "सिम्बल" शब्द निकाला है, उसका अर्थ है, एक साथ जोडना तुलना करना, और इससे यह सूचित होता है कि प्रतीक चिन्ह और इससे व्यक्त की जाने वाली चीज के बीच सादृश्य धारणा, इसके मूल रूप में विद्यमान थी। गणित और तर्कशास्त्र के प्रतीक रूढ और सर्व मान्य चिन्ह है परन्तु, धार्मिक प्रतीक निर्देशक और निदेश्य के बीच किसी तत्व की लक्षण का रूपक विषयक आतरिक सबध पर आधारित होतें हैं, जैसे क्रूस, मेमना, अच्छा, चरवाहा, आदि। साहित्य सिद्धान्त मे इस शब्द का प्रयोग इस अर्थ
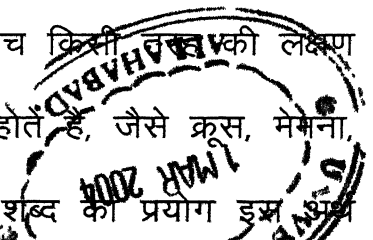
मे करना अभीष्ट होता है, एक ऐसी वस्तु जो किसी अन्य वस्तु की ओर सकेत करती है, पर एक प्रस्तुतीकरण के रूप मे जिसके अपने स्वरूप की ओर भी ध्यान देने की आवश्यकता होती है।

उपर्युक्त व्याख्या मे सादृश्य शब्द का प्रयोग हुआ है किन्तु (कविता के प्रतीको के सन्दर्भ में इस सादृश्य का अर्थ किसी बाह्य समता मात्र से नही है) वस्तु और विषय के बीच ऐसे किसी भी सादृश्य मात्र को प्रतीक का आधार मानने से आचार्य शुक्ल पहले ही इन्कार कर चुके थे। प्रतीक का आधार सादृश्य साधर्म्य नही, बल्कि भावना जागृत करने की विहित शक्ति है। यहा पर सादृश्य का तात्पर्य उस आतरिक और सूक्ष्म एकता से है, जो कि प्रतीक और विषय की गहरायी मे जोडती है और इस प्रकार उस सगति को प्राप्त करती है, यह सगति विज्ञान के प्रतीको मे भी होती है, किन्तु, जैसा कि हम पहले भी कह चुके है– इन प्रतीको के आधार मे सवेदना या अनुभूति नही वरन् तार्किकता और अर्थ की रूढि होती है। ऐसे प्रतीक कविता के वाहक नही हो सकते। क्रिस्टोफर कोडबेल ने जब अपनी पुस्तक "इल्यूजन एन्ड रियलिटि" मे कविता की "अप्रतीकात्मक" होने की माग की थी तो सभवत उनके मस्तिष्क मे वैसे ही प्रतीक रहे होंगे।

दूसरा प्रश्न एक प्रस्तुतिकरण के रूप मे प्रतीक के अपने स्वास्थ के बारे मे है। कविता मे प्रतीक का प्रयोग, एक साधन– एक उपकरण के रूप मे होता है एक ऐसे साधन के रूप मे जो कवि की कल्पना और अनुभूति का वहन करता है। वह उस रूप मे कविता का साधन नहीं होता जिस रूप मे कि प्रतीक वादियों ने उसे स्थापित करने की चेष्टा की थी। प्रतीक भाषा के प्रयोग का एक खास लक्षण है। इस प्रकार एक उपकरण और एक

शब्द के रूप मे उसे अपने उस काव्यात्मक परिवेश के सौन्दर्य की अभिवृत्ति करने मे सहायक होना चाहिए, जिसमे कि उसका प्रयोग हो रहा है। यह काव्यात्मक परिवेश प्रतीक के निजी परिवेश से सामान्यत अलग होता है और प्रस्तुतीकरण के रूप मे प्रतीक की सफलता इस बात मे है कि उसका निजी परिवेश, कविता के सदर्भ मे धुल जाये लेकिन अपनी विशिष्टता को भी बनाये रखे। प्रतीक को एक सामान्य शब्द के रूप मे भी सफल होना चाहिए और अर्थ सन्दर्भ के रूप मे भी। यदि ऐसा नही होता तो वह कविता के प्रवाह को खण्डित करता है, चाहे फिर उसके भीतर निहित अर्थ, कितना ही आध्यात्मिक या सुन्दर क्यो न हो। एजटा पाउन्ड ने भी इस ओर से चेतावनी देते हुए कहा है कि "यदि कोई कवि प्रतीको का प्रयोग करता है तो उसे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उनका 'प्रतीकात्मक प्रचार' बहुत अधिक विस्तृत और अग्रगामी न हो जाए, ताकि वे लोग भी जो कि प्रतीक के प्रतीकार्थ को नही समझते, कविता मे एक भाव और काव्यात्मक सौदर्य को प्राप्त कर सके।" एक उदाहरण से वे अपनी बात को स्पष्ट करते है– अगर कोई कवि अपनी कविता मे पक्षी हाक को प्रतीकवत् इस्तेमाल करता है तो यह प्रयोग इस प्रकार होना चाहिए कि वह पाठक, जिसके लिए हॉक कोई प्रतीक नही बल्कि सिर्फ सामान्य बाज है, भी कविता के सौन्दर्य और भाव को ग्रहण कर सके।

ऊपर इस बात की ओर सकेत किया जा चुका है कि जीवन के अलग–अलग क्षेत्रो–साहित्य ज्ञान, तर्क, गणित या समाजशास्त्र में प्रतीक को अलग–अलग तरीके से परिभाषित और प्रयुक्त किया जाता है। केवल साहित्य के क्षेत्र में ही प्रतीक की परिभाषाएं विद्वानो और सप्रदायो के साथ

बलवती रही है। बालेक तथा वारेन के विचारो का उल्लेख पहले किया जा चुका है। इनके अतिरिक्त इसमे पूर्ववर्ती केलिटर, लेगर, अर्दन और व्हाइटले जैसे प्रतीक चितको की परपरा भी है जो कि प्रतीक की भाषा की सावयत सघटना का प्रमुख तत्व तथा विशिष्ट अभिव्यक्ति का वाहक मानती है प्रतीक वादियो का वह वर्ग भी है जिनके लिए प्रतीक दैवी तत्व के अश और साहित्य के आध्यात्मीकरण के साधन है और फ्रायड और युंग जैसे मनोविश्लेषको का वह महत्वपूर्ण समूह भी जिसने कि अवचेतन के स्तर पर कविता और उसके प्रतीको को समझने और व्याख्यायित करने की परपरा को जन्म दिया है।

अपनी पुस्तक "सिम्बॉलिज्म एण्ड विलीफ" मे प्रतीक को परिभाषित करते हुए एडविन बेवन कहते है कि "मेरे विचार से प्रतीक इद्रिय अथवा कल्पना – सामान्यत इन्द्रिय के सम्मुख प्रस्तुत कोई वस्तु है, जिसका किसी अन्य वस्तु के लिए प्रयोग होता है– इस रूप मे प्रतीक वस्तु के लिए स्थानापन्न होने वाली कोई दूसरी वस्तु है। हिदी के सभी सादृश्य मूलक अलकार इस परिभाषा के अनुसार प्रतीक माने जाते है। लेकिन आचार्य शुक्ल तो इस ओर से हमे पहले ही चेतावनी दे चुकें है। दृश्य या धर्म या प्रभाव की समता मे एक वस्तु दूसरी वस्तु के लिए प्रयुक्त तो हो सकती है कितु वह सदा पतीकवत् नही होती। प्रतीक होने के लिए वह 'समता' की अपेक्षाकृत स्थूलता को पारकर अर्थ की आतरिकता और सगति की माग करती है।

प्रतीक मे समानातरता या समता को तो डब्ल्यू. वाच टिण्डाल ने भी स्वीकार किया है किन्तु वे यह भी कहते हैं कि वह सदर्भ और तर्क की

सीमाओ को अतिक्रमित कर विचारो और अनुभूतियो की एक सघटना और स्वरूप प्रस्तुत करता है। उनके अनुसार प्रतीक न तो पूर्णतया अनुवाद्य होता है और न ही स्थानापन्न सभव। इस प्रकार के प्रतीक को बेकन की परिभाषा की अतिव्याप्ति के दोष से तो बचा लेते है किन्तु और आगे चलकर जब वे यह कहते है कि इस विशिष्ट क्षमता का पूर्वार्द्ध इसके उत्तरार्द्ध को समेट लेता है इसीलिए प्रतीक वह है जो वह प्रतीकीकृत करता है, तो समूचा कथन काफी भ्रामक हो जाता है। संभव है इस कथन के मूल मे कैसिटर की वह मान्यता विद्यमान हो, जिसके अनुसार प्रतीक मे विषय और वस्तु के बीच एक अविभाज्य और अतरग सबध स्थापित होता है।

इस संदर्भ मे बेवस्टर की परिभाषा अपेक्षया स्पष्ट है– प्रतीक अपने सबध, सामजस्य, रूढि अथवा सयोग से, किसी अन्य वस्तु की ओर सकेत करता है, परंतु उसका उद्धेश्य समानता या सादृश्यता ही नही है, वरन मुख्यत: अदृश्य वस्तु का दृश्य सकेत है।

कला को पुर्णतया रहस्य और सौदर्य के धरातल पर स्थापित करने वाले कवियो और चितको ने प्रतीक को एक बृहतर परिप्रेक्ष्य प्रदान किया है। रहस्य भावना, मानव मन की एक आदिम भावना है और पूर्व ऐतिहासिक युग से ही वह सस्कृति के दो वाहको धर्म तथा साहित्य मे, समान रूप से सचारित होती रही है। अपने विविध रूपो अनत सभावनाओ, उदारता और भयप्रदत्ता के कारण प्रवृत्ति, मनुष्य हृदय को शाश्वत प्रश्नों, उत्तरो, विश्वास, कौतूहल और विस्मय की मिलावटों से मरती रही हैं। यह अनिवर्चनीय और अपूर्व अनुभूति विचार जिसकी मार तक नही सह सकते

केवल प्रतीकीकरण मे अभिव्यक्ति हो सकती है, और इस रूप मे प्रतीक निरूपण का वह माध्यम है जिसके द्वारा जीवन के आरभिक मूल्यो का उद्घाटन और ईश्वर से मनुष्य के सबधो का स्पष्टीकरण होता है। एक अकेला प्रतीक, जीवन के सभी पक्षो तथा जन्म–मृत्यु, प्यार–घृणा, अमरत्व आदि मूलभूत प्रश्नो को प्रकाशित करता है।

रहस्यवादी कॉलिरित्ज के लिए प्रतीक एक पारदर्शी माध्यम है, जो कि उसे 'ससीम' और 'असीम' 'सामान्य' और 'विशेष' 'नश्वर' और 'अनश्वर' का साक्षात्कार कराता है प्रतीक की यह विशेषता है कि वह कष्ट मे विशेष या विशेष मे सामान्य अथवा सामान्य मे किसी वैश्विक का आभास देता है और सबसे ऊपर वह नश्वर मे अनश्वर की मालक पैदा करता है। दरअसल रहस्यवादी के लिए प्रतीक – 'शब्द' या 'वस्तु' से बहुत आगे 'सत्य' और 'सौदर्य' का घनीभूत रूप है। (इसीलिए प्रतीक के एक गुण साकेतिकता को वे अतिरंजना के स्तर तक आगे ले गये है।) चारो ओर विस्तृत यह विविध रूपासीम सृष्टि और उसमे मनुष्य का सीमाबद्ध व्यक्तित्व, उसकी नश्वरता और उसके चारो ओर काल का निरर्वाध विस्तार, रहस्यवादी को कौतूहल और रहस्य से तो मरता ही है, उसे अपनी सीमाओं का अतिक्रमण कर 'असीम' और 'अनत' के साक्षात्कार के लिए भी प्रेरित करता है। ऐसी स्थिति मे विविध रगों और रूपो से भरा हुआ यह दृश्य जगत ही उसके लिए प्रतीकवत् हो जाता है – असीम अनत, 'सत्य' और सौन्दर्य का प्रतीक। प्रतीको में प्राप्त यह असंख्य अनुभूति, प्रतीको के माध्यम से ही अभिव्यक्ति हो सकती है, इसलिए प्रतीकाश्रित होना रहस्यवादी कवि की बाध्यता है। इस बात की ओर आगे तक ले जाते हुए हाउसर यहा तक

कहता है कि "प्रतीकात्मक भाषा वह है जिसमे बर्हिलोक अन्तर्लोक का हमारी आत्मा और मन का प्रतीक होता है।"

परिभाषा और विवेचन के इस भ्रम को अभी हम बहुत आगे तक ले जा सकते है। रहस्यवादियो से काफी कुछ अभिन्न, और केवल सवेगो और सवेदनाओ की महत्व देने वाले मलार्मे, वाल्तेयर और यीट्स के प्रतीको से भरे ससार तक, जिसमे कवि अपने स्वर्गीय – सगीत, सौदर्य और जादुई लोक की प्रतीक के द्वारा अर्जित और अभिव्यक्त करता है या फ्रायड और अर्नेस्ट जोन्स जैसे मनोवैज्ञानिक तक, जिनके लिए प्रतीक अवचेतन मे निहित दमित इच्छाओ का मूर्तीकरण है। लेकिन परिभाषाओ की बहुलता से कोई बात स्पष्ट नही होती, वे हमे अतत यही निष्कर्ष निकालने मे सहायता देती है कि साहित्य मे प्रतीक एक कलात्मक उपकरण भर है। एक उपकरण के रूप मे उसका महत्व अपेक्षाकृत अधिक अवश्य है गलती यहॉ होती है जहॉ उसे उपकरण के बजाय, उद्देश्य मान लिया जाय– जैसा कि प्रतीकवादी –रहस्यवादी करते रहे है। एक उपकरण के रूप मे उसका प्रयोग, कवि सामर्थ्य की वैसी ही अपेक्षा रखता है– जैसे कि अलंकारो का। लेकिन वह अलकार नही है, क्योकि उसका उद्देश्य अलकरण करना नही वरन् पाठक की सूक्ष्म और गहरी अर्थ सभावनाओ के छोर तक पहुचाना है। जब कोई उपमान भी सूक्ष्म आतरिक सगति या बहुआवृत्ति के द्वारा इस क्षमता को प्राप्त कर लेता है तो वह भी प्रतीक से जाना जाता है।

दूसरी बात यह है कि सूक्ष्म आंतरिक संगति और साम्य के बारे मे। प्रतीक की योजना चेतना या अचेतन के स्तर पर एक तार्किक संगति से अवश्य जुडी हुई होती है। इसका अर्थ यह है कि प्रतीक और उसके अर्थ

का (या 'विषय' और वस्तु का) किसी न किसी स्तर पर परस्पर सम्बद्ध होना अनिवार्य है। इस सम्बद्धता के द्वारा ही प्रतीक अपने विषय की महत्ता को ऊँचा उठा सकता है, जो कि उसका प्रमुख उद्देश्य है। एस के लैगर और डब्ल्यू एम अर्मन मो इस बात पर बहुत बल देते है कि प्रतीक और प्रतोकैय के बीच, भाव और उसके मूर्तिकरण के बीच किसी न किसी प्रकार की समता या कोई न कोइ तर्क सगत सम्बन्ध अवश्य होना चाहिए अन्यथा असम्बद्ध होने के कारण वह प्रतीक नही वरन् कोइ कल्पना (एम्प्रटी इमजिनिग) बनकर रह जाएगा। यहा बार–बार यह याद दिलाने का कोई औचित्य नही है कि यह सम्बद्धता या समानता, अलकारो मे पाये जाने वाले साम्य की अपेक्षा, बहुत सूक्ष्म और भिन्न है।

अब तक मै निश्चयात्मक रूप से यह कहने की स्थिति मे आ चुकी हूँ कि साहित्य मे प्रतीक अभिव्यक्ति के ऐसे उपकरण है जो कि अपनी शब्द परम्परा, वस्तुगत अथवा काव्यगत परिप्रेक्ष्य में अपनी विशिष्टता, समता और सन्दर्भ, या मानसिक सम्बन्धो के कारण–अप्रस्तुत तथा अमूर्त अर्थोवस्तु भावना सिद्धान्त अथवा विश्वास के सवेदन को किसी भी स्तर पर मूर्त और सप्रेषित करने की क्षमता रखते है।

प्रतीक उपकरण है इसलिए उनका प्रयोग जैसा कि कहा जा चुका है – कवि– सान्मधूर्य की अपेक्षा रखता है। एक ही प्रतीक मे अनेक अर्थ या अर्थ के अनेक स्तर हो सकते है। यह कवि का दायित्व है कि वह उसमे से सन्दर्भ अनुकूल और वाछित अर्थ को तराश कर उभारे। कविता मे प्रतीक कोशिराएं, समूचे सन्दर्भ से रक्त ग्रहण करती है, इसलिए प्रतीक अपने काव्यात्मक सन्दर्भ मे ही जीवत होता है। उससे अलग वह अर्थ

सभावनाओ का एक समूह मात्र है। कवि दाते नितात निजी धरातल पर जन्म लेने वाले प्रतीक के साथ यही समस्या एक दूसरे रूप मे सामने आती है – प्रतीक के अत्यधिक व्यक्तिगत और दुरूह हो जाने को। यो तो कविता के सभी प्रतीक, कवि के निगत्व मे डूबे हुए और उसके व्यक्तित्व के रगो को अपने मे समेटे हुए होते है लेकिन परम्परा बद्धता की स्थिति मे उनकी भीतरी तहो तक पहुच पाना बहुत कठिन नही होता। क्योकि वहा उनका निर्माण एक निर्धारित ढाचा की भीतर होता है। व्यक्तिगत प्रतीको के साथ यह बात नही है। उन्हे कवि ग्रहण नही करता वरन् अपने नितात निजी ससार मे 'रचता' है। यदि कवि अपनी अनुभूति की बीहडता और जटिलता से ऊपर उठाकर उन्हे एक निश्चित और ग्राहक आकार प्रदान कर पाता है। (जैसा की प्रसाद मुक्तिबोध और शमशेर की कविता की उन निजी प्रतीको मे हुआ है, जो कि कवि के व्यक्तिगत मोह को गरिमा से आवेष्टित है) तो उनका प्रयोग सफल है। लेकिन अगर वह उन्हे निजी धरातल से ऊपर नही उठ पाता, तो वे समूचे रचना–प्रवाह को खण्डित कर देते है। निजी अनुभूतियो का दस्तावेज मात्र कविता नही होता। कविता होने के लिए अनुभूति का, और प्रतीकों का भी, कलात्मक सामान्यीकरण होना आवश्यक है। कविता का कोई भी प्रतीक स्वय मे सुदर या असुदर नही होता, कवि के द्वारा किया गया उसका प्रयोग ही उसे वैसा बनाता है।

ऊपर हमने प्रतीक की अर्थ संभावनाओ की और उसके पहले, उसकी क्षमता की बात की है। अर्थ को सप्रेषित करने को यह क्षमता प्रतीक मे कहा से आती है ? इसके उत्तर मे कहा जा सकता है, कि प्रतीक के अर्थ के तीन प्रमुख आधार है–

1 सास्कृतिक परम्परा

2 आरोपण

3 विशिष्टता।

(क) जातीय–सांस्कृतिक परम्परा :

कुछ वस्तुओ, व्यक्तियो अथवा सन्दर्भो से अपनी सवेदना, रूचि तथा विश्वास आदि को जोडकर उन्हें अर्थ समन्वित कर देती है। ये उस अर्थ को धोते हुए परम्परा के साथ पीढी–दर–पीढी प्रवाहित होते रहते है। गगा हिदुओ की पवित्र नदी है। अनेक धार्मिक विश्वास उससे जुडे है और वह 'पवित्रता' की प्रतीक भी बन गई है। 'सोने की लका' वैभव और शक्ति की अनिश्चतता से उत्पन्न होने वाले विलास, क्रूरता, अहकार, मूर्खता आदि दुर्गुणो का प्रतीकोकरण करती है, क्योकि उसके साम्य रावण के राक्षसपन का सास्कृतिक सन्दर्भ जुडा हुआ है। इस प्रतीक मे हर सोने की लंका के भस्म होने का सास्कृतिक विश्वास और तमस तथा पापपूर्ण के नष्ट होने की समन्वित है। ऐसे प्रतीक जिनके साथ कोई सन्दर्भ जुडे होते है तभी वास्तविक ही पाते है जब वे इस सन्दर्भ से जुडे होकर भी अपना एक अलग सन्दर्भ बना लेते है। प्रतीक में निहित अर्थ सन्दर्भ प्रतीक की क्षमता पर और कवि द्वारा उसमे जोडा गया सन्दर्भ, रचनाकार की क्षमता पर निर्भर करता है। पहला लगभग अपरिवर्तनशील होता है जबकि दूसरे मे युग और मानसिकता के अनुरूप परिवर्तन होते रहते है। परपरा, युग और कवि व्यक्तित्व का यह 'सघर्ष' सदा प्रतीक के अर्थ मे नया आयाम जोडता है।

(ख) आरोपण

प्रतीक की क्षमता का एक आधार उस पर किया गया आरोपण भी हो सकता है। मूर्ति मे निहित 'ईश्वरत्व' ऐसा ही प्रतीक है। सूर्य तेज और प्रकाश का स्रोत है, उसकी तीर बरसाती सुनहरी किरणे अधेरे का नाश करती है, वह समस्त जीवन का नियमन और सचालन करता है। इसलिए वह ज्ञानविवेक, तेजस्वित प्रखरता दृढता और विकास के प्रतीक के रूप मे स्थापित कर दिया गया है। इसी चिर परिचित आरोपण के कारण कमल शान्ति सौदर्य तथा पवित्रता का, फूल–निश्छिल सौदर्य और जीवन को नश्वरता का दीपक अधेरी शक्तियो के विरूद्ध व्यक्ति के अस्तित्व और आस्था का, और वीणा सपूर्ण कलाओ या ह्रदय का प्रतीकीकरण करती है। कभी–कभी जब कोई कवि किसी एक बिम्ब का एक निश्चित सदर्भ मे प्रयोग करता जाता है तो आगे के रचनाक्रम मे चलकर उस पर एक निश्चित अर्थ आरोपित हो जाता है और वह प्रतीक बन जाता है। आरोपित से शक्तिमान होनेवाले इन प्रतीको को भी एक सामाजिक या व्यक्तिगत परम्परा होती है, लेकिन उनके मूल मे 'संस्कार' से अधिक 'अनुमय' होते है।

(ग) विशिष्टता :

प्रतीक को अर्थ क्षमता के आधार मे एक महत्वपूर्ण तथ्य प्रतीक के रूप में प्रयुक्त वस्तु की विशिष्टता और उसका आकर्षण भी है। छायावादी कविता में प्रयुक्त प्रचुर प्राकृतिक प्रतीकों के पीछे अर्थ का यह एक प्रमुख

आधार है। इसी प्रकार नागफनी कैकट्स या आक्टोपस नई कविता के ऐसे अभूतपूर्व प्रतीक है जिन्होने कि अपनी विशिष्टता के कारण, प्रारम्भ मे आधुनिक विषय परिस्थितियो मे मानव जीवन की बहुत सफल मीमासा और अभिव्यक्ति को। यह एक अलग बात है कि अत्यधिक भावहीन आवृत्ति के कारण ये प्रतीक शीघ्र ही जड हो गये और नई कविता को रूढि बनकर रह गए।

अगली बात प्रतीक के साकेतिक सप्रेषण – धर्म के बारे मे है। वैसे भी कविता समाज और परिवेश से प्राप्त होनेवाली व निजी अनुभूति को सामान्य और विस्तृत बनाकर सप्रेषित करती है। कथन मात्र (स्टेटमेण्ट) किसी भी स्थिति मे कविता नही बन सकता। सामान्य कथन की स्थिति से ऊपर उठने के लिए – अनुभूति के सही सप्रेषण के लिए कवि प्रतीको और बिम्बो की बहुस्तरीय और बहुआयामी भाषा का अनिवार्य रूप से प्रयोग करता है। साहित्य मे प्रतीक, सामान्यत सवेदना के स्तर पर उद्धभूत होते है, सवेदना के स्तर को ही छूते है, इसलिए पे पदार्थ को सूचित या परिभाषित मात्र नही करती वरन् उससे आगे धारणा को ही अनुभूति के धरातल पर स्थापित कर देते है और पाठक को किसी 'ठोस' या 'स्थिर अर्थ तक नही वरन अर्थ की दिशा को और ले जाते। इस संदर्भ में सूसान लेंकार ने चार प्रयोग माने है। तात्पर्य (मोनिग) वौशेष्टिय (सिगनोकि केन्स) उपलक्षण (सिनोटेशन) तथा साहच्य (कोमोटैशन)। लैगर के अनुसार प्रतीक किसी लक्ष्य वस्तु का 'स्थान ग्रहण' नही करता बल्कि वस्तुओं को धारणा (कसेप्शन) कोठी वपहन करता है। वह हमें धारण बोध तक ले जाती है। उसके बाद हमारी दुरूह मानसिक यात्रायें प्रारम्भ होती है, जहां अनुभूति है,

अनुभव है, अवचेतन और चेतन है, अस्तित्व और भाविता (विकमिग) है, तथा चितिमय यथार्थ है।

इस रूप मे प्रतीक मे अर्थ वही, अर्थ की दिशा निश्चित होती है। क्योकि उसका सप्रेषण साकेतिक होता है अत· अर्न का निर्धारण कही न कही पाठकीय सम्बद्धता की माग करता है। सी डी ल्यूहस के इस कथन का कि "प्रतीक मे अको की सी निश्चितता होती है। यह अर्थ नही लगाया जाना चाहिए कि प्रतीक पूर्ण रूपेण निश्चितार्थी और निषिद्ध होता है" — ऐसी स्थिति मे तो वह जड सकेतमात्र रह जायेगा और उसमे काव्यात्मक सप्रेषण की सभावनाये ही नही रहेगी। उनका मतैक्य सभवत केवल यही है कि अपने कलात्मक परिवेश के भीतर प्रतीक, किसी निश्चित अनुभूति या विचार का सप्रेषण करने के उत्तरदायित्व से हमे कवि द्वारा इच्छित किसी विशिष्ट अर्थ को और जाने के लिए प्रेरित करता है, क्योकि यही आगे उन्होने यह भी कहा है कि वह केवल उसी चाव या विचार का प्रतिनिधित्व करता है, जिसके लिए वह लाया गया होता है।

प्रतीक का सप्रेषण साकेतिक होता है। यह सांकेतिकता पाठकीय सम्बद्धता से भी जुडी हुई है, व इसलिए उसमे निहित अर्थ का 'एहसास' उसकी समझ से पहले हो सकता है और दूसरे—भावनाओं, संस्कारो और वातावरण के अनुकूल एक ही प्रतीक का दो अलग—अलग व्यक्तियो के लिए अलग—अलग अर्थ होना भी संभव है। अण्डरहिल सांकेतिकता को प्रतीक की सबसे बडी सामर्थ्य और विशेषता मानते हैं। और हीगैल ने भी प्रतीक के सन्दर्भ मे दुरूहता की अनिवार्यता स्वीकार करते हुए प्रकारान्तर से इसी सांकेतिकता की स्वीकृति दी है। सांकेतिक व्यंजना— अर्थ के एक

साथ गायन और प्रकाशन की क्षमता के कारण प्रतीक अद्वितीय और अमूर्त को सप्रेषित करने के आकाक्षौ कवि को सदा से आर्कषित करता है, क्योकि उसके माध्यम से वह अपनी जटिल अनुभूति के ग्राह्य सकेत दे सकता है। इस प्रकार साकेतिकता प्रतीक की एक अनिवार्य विशेषता है उसमे यह गुण जितना वृहद होगा, उतना ही अधिक सत्य वह सप्रेषित कर सकेगा। एक अच्छी प्रतीक योजना, केवल चित्रीकरण या अन्योहित मात्र से अधिक कुछ होती है उसमे सौदर्य और आवेग के स्त्रोतो का बहुत गहराई से उपयोग किया जाता है और उसका प्रभाव प्रखर बुद्धि के लिए नही वरन् उत्सुक हृदय, आदमी के स्वय प्रकाश्य बोध के लिए होता है।

प्रतीक– हम कह चुके है कि किसी अमूर्त या सूक्ष्म का सामान्यत· मूर्त या अन्यथा ग्राह्य उपकरण होता है और एक उपकरण के रूप मे उसकी महत्ता उससे प्राप्त होने वाली अनुभूति को मात्रा और स्वरूप पर निर्भर करती है। यथार्थ प्रतीक स्वय गौण होता है– मुख्य वह दिशा होती है जिसकी ओर वह सकेत कर रहा है। डॉ केदार नाथ सिह ने अपनी पुस्तक 'कल्पना और छायावाद' मे एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार यह बात स्पष्ट की है। "मानव सृजनात्मक शक्ति का प्रतीक है"– इस वाक्य को सुनकर हमारे सामने कोई मानव मूर्ति नही खडी होती। हम मानव के माध्यम से उस अदृश्य शक्ति का अनुभव करते है जो सृजनात्मक है। 'सृजनात्मक शक्ति' क्या है? हम नही जानते हमने उसे देखा नही। हमने उसका स्पर्श नही किया। हम उसके आकार से अपरिचित हैं। पर जब हम किसी से सुनते हैं कि मानव सृजनात्मक शक्ति का प्रतीक है, तो यद्यपि हमारे सामने उसकी कोई स्पष्ट रूप नहीं आता फिर भी उस शक्ति को

हम बहुत दूर तक अपने भीतर अनुभव कर लेते है। ध्यान से देखने पर ज्ञात होगा कि उपर्युक्त वाक्य मे 'मानव' शब्द का अर्थ गौण है। प्रधान वह अदृश्य 'सृजनात्मक शक्ति' है जिसकी व्यजना मानव की स्थूल सत्ता द्वारा हो रही है। तात्पर्य यह है कि 'मानव' प्रतीक के द्वारा हम किसी अधिक सूक्ष्म और अदृश्य सत्ता को जानने का प्रयत्न करती है। सभी प्रकार के प्रतीको की यह विशेषता है। यहा हमे व्हाइट हेड के उस कथन को फिर से याद कर लेना चाहिए— "प्रतीक का उद्देश्य अपने विषय की महत्ता को ऊँचा उठाना है"।

इस प्रसग की समाप्ति से पूर्व यह भी जान लिया जाना चाहिए कि प्रतीक सदा मूर्त नही होता। अमूर्त को अभिव्यक्त करते हुए, वह स्वय भी अमूर्त रह सकता है। जैसे मै यह कहूँ कि मातृत्व समस्त मनुष्यता का प्रतीक है यहा मनष्यता— विषय और 'मातृत्व' प्रतीक दोनो वैसे ही अमूर्त है, जैसे पिछले उदाहरण मे 'सृजनात्मक शक्ति' लेकिन इस कथन के साथ ही हम 'मनुष्यता' मे निहित सृजन, त्याग, ममता, उदारता, करूणा आदि उन समस्त सहगुणो और उस व्यापकता का अनुभव कर लेते है जो कि अनिवार्य रूप से मातृत्व के साथ जुडे हुए है। मातृत्व किसी दृश्य संकेत या वस्तु के रूप मे उपलक्षय नही होता— वह एक अन्तनिहित भावना मात्र है। वस्तुत मूर्त होना प्रतीक के लिए अनिवार्य नही है क्योंकि उसका ध्येय मूर्तिकरण मात्र नही है— यथापि यह सही है कि मूर्त होने पर वह अपेक्षया अधिक ग्राह्य हो जाता है।

प्रतीक के पहलुओ को देखने के बाद अब हमारे सामने उसके वर्गीकरण की समस्या है। मन की जितने भी किस्म की गलिया हो सकती

हैं उतने ही रूप प्रतीक के भी हो सकते है। इसलिए वर्गीकरण का कोई भी प्रयास तब तक पूर्ण नही हो सकता जब तक कि वह सामान्यीकरण की शर्तें या विकृतीकरण के खतरे न लिये हुए हो। हम किसी ढांचे में प्रतीक को ढुढने के बजाय, कुछ सामान्यीकरण ही पसन्द करेंगे क्योंकि उस स्थिति में प्रतीक को अलग से व्याख्यायित करना संभव है। आगे के अध्यायों में जहां कहीं भी प्रतीकों को अलग–अलग करके देखने की आवश्यकता हुई है वहां भी हमने वर्गीकरण के कोई ठोस निर्देश नहीं दिये है बल्कि तात्कालिक आवश्यकता अथवा विशेषता के आधार पर ही उनका विवेचन किया है। अंतरर्चना के आधार पर हमने प्रतीक के दो प्रकार माने है–

1. परम्मरागत
2. व्यक्तिगत।

इन दोनो प्रकारो के अनगिनत रूप हो सकते हैं और कविता में उनके अनगिनत उपभेद भी– पौराणिक, धार्मिक विचारात्मकभावात्मक, रूपकात्मक, लक्षणान्मूलक, शुद्ध– व्यापक आदि तो केवल कुछ उदाहरण है। सुविधा के लिए यथास्थान स्रोत के आधार पर प्रतीक के–

1. प्राकृतिक
2. सांस्कृतिक

    (अ) पौराणिक

    (ब) धार्मिक

    (स) ऐतिहासिक

3 सैद्धातिक

(अ) वैज्ञानिक

(ब) दार्शनिक

(स) राजनैतिक

4 मानवकृत वस्तु जगत और

5 व्यावहरिक

जीवन के प्रतीक मे विभेद कर लिये गये है। आवश्यकतानुसार सप्रेषण की प्रक्रिया को परखते हुए छायावादी रचना सदर्भो मे हमने प्रतीको को काव्यशास्त्रीय परपरा में भी देखा है। यह वर्गीकरण सामान्यत उन प्रतीको पर लागू किया गया है जो मूलत अप्रस्तुत है और ऊपर उठकर प्रतीक बन गए है। इस प्रसग को आगे बढाते हुए हम पहले कुछ अन्य विद्वानो के द्वारा किये गये प्रतीको के विभिन्न वर्गीकरणो का अवलोकन करेगे।

(घ) प्रतीको का वर्गीकरण :

डब्ल्यू एम अर्मन के अनुसार प्रतीक तीन प्रकार के होते है–

1 स्वच्छन्द प्रतीक

2 व्याख्यापरक प्रतीक

3 अन्तदृष्टि परक प्रतीक।

स्वच्छन्द प्रतीक ऐसे प्रतीक है जिनका प्रतीकेय के सहज व्यापार से कोई सीधा सम्बन्ध नही होता। वे केवल साहचर्य और सम्बंध ही परपरित स्थापना करने वाले प्रतिनिधि होते है। धर्म, कला और विज्ञान मे समान रूप से इन प्रतीकों का प्रयोग होता है। व्याख्यापरक प्रतीक काव्यात्मक होते हैं

और उनकी अर्थ–क्षमता केवल साहचर्य पर आधारित नही होती, वरन् उसके नीचे विषय और वस्तु का आन्तरिक सम्बध होता है। अन्तर्दृष्टिपरक प्रतीक जो कि काव्य और धर्म मे प्रयुक्त होते है, प्रस्तुत को गहन अभिन्नता लिये होते है।

प्रतीकवादी कवि विलियम बट्लर चेट्स जो कि "प्रतीक को सम्पूर्ण शिल्प का सार मानते है," वे भावात्मक तथा वैचारिक–प्रतीक की ये दो काटिया निर्धारित की है। भावात्मक प्रतीक जिसे कि वे 'ध्वनि प्रतीक' कहते है, के बारे मे उनके विचार है कि 'सब ध्वनिया' रग, रूप अपनी पूर्व अर्जित उर्जा अथवा अपने दीर्घ साहचर्य के कारण अत्यास्थेय कितु समुचित अनुभूतियो या कुछ सूक्ष्म आतरिक शक्तियो को उद्धृत करते है। जब ध्वनि, रग और रूप के बीच परस्पर सगीतमय और समन्वयात्मक सबध स्थापित हो जाता है, तो वे एकाव्य हो जाते और हमारे एक ऐसे सम्बद्ध भाव को जगाते है जो इन ध्वनियो रंग और रूपो के अलग–अलग उद्धबोधनो से निर्मित होते हुए भी एक है।

दूसरे प्रकार के प्रतीक बौद्धिक है। ये प्रतीक केवल विचारो या अनुभूति मिश्रित विचारो को ही उत्पन्न करते है। आगे एक उदाहरण द्वारा अपनी बात को स्पष्ट करते हुए चेट्स कहते हैं कि अगर मै कविता को किसी सामान्य पक्ति मे सफेद या बैगनी कहती हूॅ तो वे ऐसी विशिष्ट भावों को जगाते हुए जिनके बारे मे मै नही जानती कि वे मुझे क्यों प्रभावित करते है, लेकिन अगर मै उन्हे उसी पक्ति मे क्रास या काटो के मुकुट के जैसे स्पष्ट प्रतीको के साथ प्रयुक्त करती हूॅ तो वे मुझे पवित्रता या प्रभूसत्ता का बोध होता है यही पर उन्होने यह भी कहा है कि असख्य अर्थ

जो कि एक सूक्ष्म साकेतिकता द्वारा 'सफेद' या 'बैगनी' से जुडे हुए है, कथन के साथ ही मस्तिष्क मे प्रभाहित होने लगते है तथा उससे भी परे, अन्तलोक मे प्रवृष्ट होकर हमारे अपरिभाषेय विवेक को जागृत कर देते है। यहा प्रतीको मे वैचारिक तत्व को स्वीकारने वाले चेट्स अपने अन्य प्रतीकवादी सहयोगियो से भिन्न है जिनके लिए कविता मे विचार की सत्ता निषेधात्मक और अस्वीकार्य थी।

चेट्स द्वारा किये गए भावात्मक और विचारात्मक प्रतीकों के इस वर्गीकरण को प्रकारातर से डॉ लक्ष्मी नारायण सुधाशु ने अपने काव्य मे 'अभिव्यजनावाद' और प रामदहिन मिश्र ने अपने काव्य–विमर्श मे भी स्वीकृति दी है। इस वर्गीकरण के साथ पण्डित मिश्र ने यह निर्देश भी दिया है कि दोनो मे से किसी एक का भी शुद्ध उदाहरण चुनना कठिन है। प्राय सब भावोत्पादक प्रतीको मे विचार मिलते रहते है और उसी प्रकार प्राय सब विचारोत्पादक प्रतीको मे भाव की स्थिति बनी रहती है। संभवत श्री मिश्र की यह शका सही है, लेकिन इसके बाद इस वर्गीकरण का औचित्य ही क्या रह जाता है?

प्रतीक का वर्गीकरण करने की तत्परता कुछ मनोवैज्ञानिको द्वारा भी प्रदर्शित की गई है और यद्यपि इसका सीधा सम्बध प्रस्तुत विषय से नही है, फिर भी उनमे से कुछ पर एक सक्षिप्त दृष्टि डालना अनुपयोगी नही होगा। मनोवैज्ञानिक सिलवेटर के अनुसार प्रतीक तीन प्रकार का होता है–

1 कार्यात्मक

2. भौतिक

3 कायिक।

प्रथम मानस की क्रिया के स्वरूप को प्रस्तुत करता है, दूसरे मे चितन के उपादान को प्रतीक के माध्यम से निरूपित किया जाता है और तीसरा कायिक सवेदनो को प्रतीक रूप मे प्रस्तुत करता है। सिलबेटर के इस वर्गीकरण को अपूर्ण मानकर फिस्टर ने एक दूसरा वर्गीकरण प्रस्तुत किया। इनका कहना था कि उपर्युक्त वर्गीकरण अचेतन मन की क्रिया को सर्वथा छोडा गया है। इनका वर्गीकरण निम्नलिखित है–

1 चेतन

2 अचेतन।

प्रथम सप्रेषण के उद्देश्य को पूरा करके सामाजिक कार्य सपादित करता है और दूसरा कुछ हद तक अगम्य और अचित्य होता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि यह ऐसे तत्वो से उद्धृत होता है, जिनकी अभिव्यजना नियत्रित है। कुछ अन्य विचारको ने इस पर स्वप्न प्रतीको के सदर्भ मे विचार किया है और इस युग मे मानसिक और धार्मिक प्रतीको को उपजीव्य बनाया है स्टैकेल ने प्रमुख रूप से धार्मिक और नैतिक प्रतीको का उल्लेख किया है। इन मनोवैज्ञानिको मे से प्रमुख दो –फायड और चुग के प्रतीक चितन का विवेचन आगे किया गया है क्योकि कला सृजन की प्रक्रिया को समझने के क्रम मे वे अपना ऐतिहासिक महत्व रखते है।

अब मै पुन अपनी बात की ओर लौटती हूँ कि अन्तर्रचना की दृष्टि से प्रतीक दो प्रकार के होते है–

1 परम्परागत

2 वैयक्तिक।

शिल्पगत अध्ययन के लिए, स्रोत के आधार पर किये गए जिस वर्गीकरण को हमने स्वीकार किया है वह भी यहा समाहित हो जाता है क्योकि यह वर्गीकरण प्रतीक की आतरिक सरचना पर आधारित है, साथ ही जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है, यह वर्गीकरण अपनी व्यापकता मे हमे कविता के तात्कालिक सदर्भ मे प्रतीक को देखने और परखने की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्रता देता है। यहा यह भी स्पष्ट किया जा सकता है कि इस वर्गीकरण के आधार मे भी प्रतीक का स्रोत ही है क्योकि इसमे यह देखा जाता है कि कवि द्वारा प्रयुक्त प्रतीक का स्रोत परपरा मे है या कवि– मन मे। इसमे और पूर्वकथित वर्गीकरण मे अतर यही है कि यह प्रतीक के स्रोत की आतरिक पडताल करता है जबकि पहला उसे बहिजगत के सदर्भ मे देखता है। संभावनाओ से चूक जाते है। उनका ऐसा होना तो अपनी एक साथ जुडे और निर्बन्ध होने की बुनियादी विशेषता से अलग हो जाना होगा। परपरा कोई जड प्रक्रिया नही है। एक श्रेष्ठ कवि परपरा से जुडकर भी उससे आगे होता है और इसी मे परंपरा का विकास निहित है। ऐसा कवि जब परपरागत प्रतीकों का प्रयोग करता है तो वह उनके अर्थ की परपरा मे, अपने युग और अपने व्यक्तित्व को भी समन्वित करता है। परंपरागत प्रतीक जीवित हो इसलिए रह पाते है कि वे हमारे सुख–दुख, आदर्शों और विश्वासो, त्रासदी और उल्लास– हमारे सपूर्ण जीवन के अनवरत सहभोक्ता होते है, समर्थ कवि उसकी इस क्षमता का उपयोग, उसके स्वीकृत अर्थ को तोडकर, उसमें एक नया भावचित्र संयुक्त करके करता है। जिस प्रतीक के साथ ऐसा नहीं हो पाता वह मात्र एक सकेत, एक कथा रूढि या एक अभिप्राय बनकर रह जाता है। अगले अध्याय में

परपरागत मिथकीय प्रतीको का अध्ययन करते समय हमने विस्तार से इस पहलु पर भी विचार किया है और साथ यह भी दिखाया है कि इन प्रतीको मे किस प्रकार आधुनिक सवेदना को समन्वित करना सभव है।

डॉ रमेश कुन्तल मेघ ने भारतीय सास्कृतिक जीवन मे इन परपरागत प्रतीको— जिन्हे वे व्यापक प्रतीक कहते है— की तीन श्रेणिया की है। डॉ. मेघ का यह विवेचन वर्गीकरण इस प्रकार है——

(क) हिन्दू, बौद्ध, जैन और मुसलमान (विशेषकर सूफी) पौराणिकता के प्रतीक।

(ख) इनकी सीमाओ से परे अति प्राचीन अन्धविश्वासो के प्रतीक।

(ग) नयी शर्तों की खोज के पूर्व की कल्पना और रोमास पूर्ण यात्रा कथाओ की प्रतीक।

सम्पूर्ण के कला प्रयोजना तथा 'कथानक रूढिया' इनकी चारो ओर सजायी जाती रही है। अति प्राचीन और अति विश्वासो की कोटि मे वैदिक और प्राग्वैदिक प्रतिकात्मक आयेगी जब अग्नि, विद्युत, वरूण, मेघ, वायु आदि अलौकिक दैवीय शक्तिो के प्रतीक थे। कालांतर में उनका विकास हुआ और इन्द्र वर्षा के लिए भर्जन्य यान उर्वरता के लिए, वरूण वायु के लिए प्रतिष्ठित हुए। मिथकीय प्रतीको का तो हमारे यहा अनन्तर भंडार है। प्रत्येक धर्म के असख्य प्रतीक है जो कलाओ मे ग्रहण किये गये है। एक उदाहरण कमल की ही ले जो जैन, बौद्ध और हिन्दु तीनो ही कलाओ में प्रचुरता से उकेरा गया है। अजन्ता के विभिन्न— चित्रो मे कलाकारो ने कमलों की भरमार की है। बोधिसत्व हाथों में कमल लिए है खम्भों में अंकित परिचारिकाएं कमल लिये है, युवक—युवतियों के प्रेमी युगल कमलों

से घिरे है इत्यादि। हिन्दू शिल्प मे सरस्वती के साथ कमल विद्या की शाति और पवित्रता का प्रतीक हो गया है। इसी प्रकार ललित कलाओ मे अकित नारिया, नारीत्व के विभिन्न तत्वो का प्रतीक हो गये है। अजन्ता खजुराहो कि कलाओ मे तो नारियो की सृष्टि ही मिलेगी। नारिया कोमल लताओ सी प्रकृति के साथ जुडी है। कही वे कामातुर है कही उनके स्तनपान मातृत्व के बोझ से गोल है, कही वे आदि शक्ति के रूप मे वाह्य कर रही है। कही वे प्रेमोन्माद मे मुग्ध है। इनकी इतनी लौकिक रचना होने पर भी इनमे वासना की नग्नता शायद कम ही मिलेगी। इसी प्रकार सूफी प्रतीको मे प्रेमी–प्रिया के मिलन प्रतीको के माध्यम से जीवात्मा– परमात्मा के अनत सम्बन्धो का सूत्र स्थापन किया गया है। सूफी कथाओ ने यात्रा के रहस्य प्रतीको का रोमाटिक विस्तार किया। नायकों की दूर–दूर देशो की यात्रा, दूर–दूर द्वीपो के प्रतीक, नारियो की खोज के प्रतीक, मानव के अवस्थाओ के प्रतीक मध्यकालीन काव्यो मे खिलखिला उठे है। यात्रा के प्रतीक भारतीय कलाओ मे सर्वश्रेष्ठ और सर्वप्रिय रहे है यात्रा के प्रतीको का ग्रहण रोमाटिक काव्य के युग तक मे हुआ। प्रसाद के 'प्रेम पथिक' या महादेवी की 'प्रिय–मिलन' की यात्राओं मे आध्यात्मिकता और बौद्धिकता के बावजूद भी इनकी मूल दिनोदिन प्रेरणा मिलती है।

वैयक्तिक प्रतीको का संबध रचनाकार के अन्तर्गत से होता है । जब रचनाके केन्द्र मे कवि का अंतरग अनुभूति संसार होता है, तो उसे दोहरे दायित्व निभाने पडते हैं। एक ओर तो वह इस समुचे अर्न्तदृश्य का– उन अनुभूतियो का एक मात्र भोक्ता होता है, दूसरी ओर एक कृतिकार के रूप में उनका दर्शन और वाचक (नेरेटर) भी भोक्ता और दर्शक, व्यक्ति और

रचनाकार के इस परस्पर जटिल सबध को समझते हुए ही आर्कियाल्ल मैवलीश ने कहा है कि कवि के निजी और अतरग ससार का उद्घाटन करने वाली कविता मे उसके 'स्वर' का बहुत महत्व है, क्योकि वही कविता को प्रामाणिक बनाता है। अगर वह 'स्वर' जीवित, अतरग और विश्वसनीय नही है, तो अनुभूति के सपूर्ण आडबर के बाद भी कविता एक अविश्वसनीय छद मे बदल जाती है। निजी कविता के प्रतीको के बारे मे भी लगभग यही बात कही जा सकती है। अगर काव्यानुभूति वास्तविक है तो कविता का स्वर भी जीवित होगा और भावनाए या अर्थ प्रतीक मे सने हुए और उससे सयुक्त होगे, उस पर आरोपित नही। इस रूप मे इन प्रतीको और कविता के इस 'स्वर' के बीच एक घनिष्ठ और अनिवार्य सबध है। निजी प्रतीक भी कवि के विश्वासो पीडा आह्लाद और आकाक्षाओ आदि के साफोदार और अभिव्यजक होते है जैसा कि सैमुअल कालरिज ने हमे बहुत पहले बता दिया था। लेकिन इस सहयोग और अग्नि– व्यजन के बीच मे सम्पादन, ससोधन, उदारीकरण एक साथ गायन और प्रकाशन की विभिन्न प्रक्रियाए भी सपन्न होती है। जब कवि की कल्पना निर्बन्ध मुक्त और दिशा–स्वप्नमय होती है– ऐसा विशेषकर स्वच्छन्दता के दौर से होता है– तमाम कवि के अवचेतन की अनुगूज निजी प्रतीकों के माध्यम से अपना रूप बदलकर प्रसारित होता है। छायावादी कविता के प्रतीको में पायी जाने वाली वैयक्तिकता इस बात का प्रमाण है। स्वच्छन्दता के बाद के युगो मे भी जबकि हिन्दी कविता नयी चेतना से संपूर्ण हुई, वैयक्तिक प्रतीकों को महत्वपूर्ण स्थान मिला। शुद्ध व्यक्तिवादी अज्ञेय (दीपावली का एक दीप, प्रथम किरण, सावन–मेघ, सागर और मछली, सागर तट की सीपियां आदि

कविताए) सामाजिक असगतियो तथा विडबनाओ को अपनी वैज्ञानिक चेतना और मानवीय उष्मा के धरातल पर ग्रहण और अभिव्यक्त करने वाले मुक्तिबोध (ब्रह्म राक्षस, अधेरे मे मेरे लोग, वो काव्यात्मन्, फणिधर आदि कविताए) बिल्कुल निजी और अतरग ससार मे सौदर्य की दृष्टि करने वाले शमशेर (टुटी हुई– बिखरी हुई, आदि) तथा एक नये बोध पीडा और विवेक से युक्त 'साठोत्तरी' दूधनाथ सिह (सुनहरे समूद्र मे डुबने का भय, 'अपनी शताब्दी के नाम, हल, मेरी धरती' आदि कविताए) को कविता मे भी हम निजी प्रतीको के व्यापक प्रसार को देख सकते हैं वास्तव मे अनुभूति मे होने वाला हर बुनियादी परिवर्तन अभिव्यक्ति के प्रचलित ढाचे को इस हद तक तो तोड ही देता है कि हर युग मे कवि के लिए किसी न किसी सीमा तक वैयक्तिक प्रतीको की रचना और प्रयोग अपरिहार्य हो जाता है।

निजी प्रतीको के साथ सबसे बडी समस्या होती है उन्हे विस्त्रांसित करने और समझने की। काव्य के सारे आधार जब वे व्यक्गित मोह से ग्रस्त होते है आतरिक अनुभूति की सहज चेतना लिए होते है। व्यक्तिगत मोह, काव्यन या यू कहें सारे साहित्य, को एक आंतरिकता और गरिमा तो प्रदान करता है– लेकिन इस गरिमा और आतरिकता के साथ अग्राहयता का सकट भी जुडा हुआ है। प्रतीक अगर इतना निजी हो कि किसी भी स्तर पर दूसरे व्यक्ति के लिए सार्थक और बोधगम्य न हो पाये तो उसके मूल्य और महत्ता मे ह्रास हो जाता है। इस सकट को महसूस करते हुए ही अज्ञेय जी ने लिखा है "प्रतीक अपने आप मे अनिष्ट भावों है। आशकनीय बात यह है कि ये प्रतीक निजी न बन जाये– बन क्या जावे रह न जावें, क्योकि निजी को सामान्य बनाना हो तो कवि कर्म है"। प्रतीक

का इस प्रकार निजी रह जाना (अपने बनने की प्रक्रिया मे तो वे निजी होते ही है) एक बडा खतरा है और अर्तजगत को महानतम कविता को यह खतरा उठाना पडता है। प्रतीकवाद के महत्वपूर्ण अध्येता सी एम धावरा ने फ्रैच कवि मलार्मे की कविता की सुक्ष्मता के सदर्भ मे इस ओर सकेत किया है। अपनी आतरिक और अद्वितीय अनुभूति के सप्रेषण के लिए मलार्मे को नए प्रतीको की तलाश करनी पडी। अपने सवेदन के विविध क्षेत्रो से उसने उनका चयन किया और यद्यपि उनमे से कुछ उसकी कविता के सतर्क अध्ययन के जरिये समझा जा सकता है फिर भी कुछ प्रतीक कतई अँधियारें मे रह जाते है और कुछ दूसरे, उस अर्थ को सप्रेषित करने मे अगम्य है जो कवि के मस्तिक मे रहा होगा। इसी कारण से मलार्मे की कविता, विश्व के किसी भी दूसरे महान काव्य की अपेक्षा अधिक जटिल और दुरूह है। अपने अस्वाद के लिए वह एक ऐसे ज्ञान की मांग करती है, जिसे पूरी तरह प्राप्त करना, लगभग असम्भव है। इस क्रम मे हम यह भी जोडना चाहेगे कि निजी या वैयक्तिक प्रतीक चूकि कविता की आंतरिकता और कवि के अन्तर्गत की पहचान है, इसलिए उनकी जटिलता कवि की अनुभूति, उसके व्यक्तित्व और उसके दर्शन की जटिलता है। इस निजी प्रतीकात्मकता की अपनी एक व्यवस्था होती है और इसे एक बार समझ लिया जाय, तो वह सारी जटिलता, अर्थ और अनुभूति के उद्‌गम तथा सौदंर्य को ढाकने वाले, एक अस्थाह आवरण से अधिक कुछ नही रह जाती। वैयक्तिक प्रतीक विधान की इस व्यवस्था को वैसे भी समझा जा सकता है, जैसे कि "गुप्त मात्राओ का अध्येता, किसी रहस्यमय और अजनवी संदेश की तोड (डिकोड) लेता है"। अतिशय वैयक्तिकता और

जटिलता प्रतीक की सामाजिक स्वीकृति मे बाधक तो हो सकती है, किन्तु हमे यह मानना पडेगा कि वास्तविक अर्थों मे चेतना का विकास, अभिव्यजना की नई शक्ति नए रूपकात्मक सम्बन्धो और अनुभूति की सुक्ष्मता का विकास– वैयक्तिक प्रतीको मे और उनके माध्यम से ही सम्भव है। वे हमेशा से महान कला के साझीदार रहे है।

मै पहले सकेत कर चुकी हूँ कि कवि के मनोलोक मे रूप लेनेवाले वैयक्तिक प्रतीको के द्वारा उसके दर्शन को समझा जा सकता है। ये प्रतीक स्थिर नही होते और कलाकार के विकास के समानातर ही उनका विकास भी होता चलता है। इसीलिए इनके सम्बन्ध मे कोई सिद्धान्त निश्चित नही किये जा सकते। अलबत्ता ा के माध्यम से हम कवि के परिवर्तनशील प्रतीको की पक्ति के बीच से उसका मूल प्रतीक खोज सकते है। जैसे निराला की सर्वप्रथम नायिका 'जुही की कली' रीतिकालीन रूढियो का खण्डन करती हुई, एक स्वस्तिमनी नारी– रत्नावली (तुलसीदास) हो जाती है, प्रसाद के 'प्रेम पथिक' का सौदर्य अधु निधि कामायनी में आनन्द सिधु नदी हो जाता है, आरम्भ मे भुलावा देकर भरमाने वाले उस पार के लोक, कैलाश के आनन्द लोक के प्रतीक मे परिवर्तित हो जाते हैं। पत की 'ग्रथि' की अज्ञातनामा वय· सधिनी मुग्धा, बाद की 'भावी पत्नी' या अप्सरा हो जाती है। ये तो कतिपय उदाहरण ही है। मेरा कथन– प्रयोजन यही है कि इस विकास सूत्र को पकडकर हम कलाकार के मानसिक विकास के साथ–साथ मनोवैज्ञानिक विलक्षणताओं को भी समझ सकते है।

(ड.) कथारूपक और प्रतीक :

कथारूपक पद द्विस्तरीय कथा रचना है, जिसमे व्यापक सदर्भों को विशिष्ट प्रतीकात्मक अभिव्यजना से प्रस्तुत किया जाता है और साथ ही जिसमे अर्थ के दोनो सामानान्तर धरातलो का ग्रहण अलग–अलग सभव हो पाता है। इसमे कवि अपने विचारो, आदर्शों, मान्यताओं, यर्थाथ तथा अपने सत्य को, मौलिक उपादानो– व्यक्त या यथार्थ– के माध्यम से कर्म करता है। उसके सभी पात्र चाहे वे मानवीकृत प्रवृत्त तत्व हो (जैसे पत की कृति ज्योत्सना मे सुरभि, स्वप्न आदि पात्र है) चाहे सामान्य मानवीय कवित्व– अपने कथाक्रम मे वे वृहत्तर सत्य अथवा आर्दश की व्यजना करते है। हीगेल की मान्यता है कि कलारूपक के द्वारा प्रतीकात्मक दर्शन अपने उच्चतम रूप को प्राप्त करता है। इस प्रतीकात्मक विस्तार मे बाह्य तत्व, क्रमश सार्थक तत्व के साथ एकीकृत प्रतीत होते है और अत मे वह पूर्ण रूप से उस तत्व के व्यजक बन जाते है। मानवीकरण तथा पात्रो मे विशिष्ट प्रतीकात्मकता निहित होने के कारण कथारूपक का सबध पुरागाथाओ और धर्मकथाओं से जोडा जा सकता है और इसी रूप मे यह भी कहा जा सकता है कि रूपक एक परपरा है जिसके द्वारा मनुष्य को सामूहिक और वैयक्तिक चेतना के आतरिक मनोराग अभिव्यक्त होते है। प्रतीक रूप मे प्रस्तुत व्यक्ति और मन की क्रियाओ, दृश्य कथा और आभ्यतर कथा सूत्रो का परस्पर सतुलन और साथ ही आत्म निर्भरता इस कार्य को सपादित करते हैं।

डब्ल्यू एम अर्बन ने कथारूपक में पात्रो की विशिष्ट प्रतीकात्मकता को देखते हुए, उसे उपमा का बौद्धिक विकास माना है। वस्तुत कथारूपक मे प्राप्त सादृश्य और समीकरण का तत्व उसके अर्थ को अलग–अलग

परतो मे बाटकर उसका प्रसार करता है। उसमे प्रस्तुत और अप्रस्तुत दोनो निरूपण रहता है और उसके अर्थ ग्रहण के लिए ज्ञान अनिवार्य है। कथारूपक की प्रतीकात्मकता मे उपमा की इस असदिग्धकता को देखते हुए ही मोकाक ने इसे गहन प्रतीकावाद के द्वारा उपमा का निर्माण कहा है।

कथारूपक की पात्रगत प्रतीकात्मकता और उसके माध्यम से व्यक्त होने वाला महत् सत्य और व्यापक प्रतीकार्थ की चर्चा ऊपर की जा चुकी है। बाह्य तत्वो से महत् तत्व के अभिव्यजित होने की यह प्रक्रिया योशो की दृष्टि मे शकास्पद है और वह इसमें असतुलन के खतरे देखता है कथारूपक अपने मूल रूप मे दोषयुक्त प्रतीकवाद है जिसमे 'रूप' और 'तत्व' की असमानता रहती है जो प्रतीकवाद के सत्य स्वरूप का हृदयगम नही करा सकती है। अपने शोध ग्रथ 'हिन्दी काव्य मे प्रतीकावाद का विकास' मे डॉ वीरेन्द्र सिह ने दोषयुक्त प्रतीकवाद के इस आरोप को सर्वथा आधारहीन बताया है और यह मान्यता दी है कि प्रतीकवाद का सुन्दर विकास हमें कथारूपक मे ही प्राप्त होता है। संसार के सभी महान काव्य इसी शैली मे लिखे गये है जिनकी विश्वसनीयता के प्रति कोई संदेह व्यक्त करना सत्य पर आवरण डालना है। युगो–युगों से यह महाकाव्य तथा काव्य अपने प्रतीकों के द्वारा ही सास्कृतिक चेतना के अभिन्न अंग बन सके हैं। ये सभी निरतर न हो पाते, इनका साहित्यिक महत्व न जाने कब का रसातल में चला गया होता, यदि इनका 'प्रतीकवाद' दोषयुक्त होता। यही तत्व और रूप की बात। कथारूपक मे प्रतीकवाद दोषयुक्त नही है अत. उसमे तत्व समावेश का रूप भी अत्यन्त अर्थ गर्भित है। बिना अर्थ के

तत्व का स्वामित्व नही रहता और बिना रूप के तत्व की अभिव्यजना सुदर रूप से नही हो सकती है। असमानता का जो रूप दृष्टिगत होता है, वह धरातल से ही सबधित है पर उनकी समानता सूक्ष्म स्तर मे ही आश्रित होती है। सत्य तो यह है कि कथारूपक मे रूप तत्व की सार्वभौमिकता उसके 'तत्व' पर ही आश्रित रहती है। दोनो एक–दूसरे के पूरक होकर ही कथारूपक मे कार्य कारण की श्रखला से अनुस्यूत रहते है। योशो का खण्डन डॉ वीरेन्द्र सिह ने इस प्रकार निम्नलिखित बातो के आधार पर किया है–

1 ससार के सभी महान् महाकाव्य तथा काव्य कथारूपक शैली मे ही लिखे गये है।

2 ये सभी केवल अपने प्रतीको के कारण ही जीवित है। यदि इनका प्रतीकवाद दोषयुक्त होता है तो ये महान काव्य समाप्त हो गये होते।

3 चूकि कथारूपक का प्रतीकवाद दोषयुक्त नही है इसलिए इनमे 'रूप' और 'तत्व' का पूर्ण अन्योन्याश्रित समायोजन होता है। उनमे दृष्टिगत होने वाली असमानता बाह्य और सतही है।

डॉ. सिह के यह निष्कर्ष स्वयं में कोई स्पष्ट बात नही कहते और एक अप्रासगिक और अनावश्यक विस्तार के लिए प्रेरित करते है। यहॉ मै केवल योशो के मतव्य का इतना सकेत दे देना ही पर्याप्त मानती हूॅ कि कथारूपक में बाह्य तत्वों और 'महत्' तत्वों 'रूप' और 'तत्व' के बीच का

'हृदयगम' कराने में असमर्थ तथा दोषयुक्त बन जाती है।

कथारूपक और उसकी प्रतीकात्मकता के इस विवेचन तथा प्रतीक के उसके सबधों की पडताल के बाद इन दोनो के परस्पर अतर को जाच लेना भी उचित होगा। कथारूपक और प्रतीक की बुनियादी प्रक्रिया ही भिन्न है। सैम्युअल कॉलरिब्ज के इस बात का अनुभव बहुत पहले– तभी कर लिया था जब उसने कथारूपक को किसी अमूर्त विचार की विभात्मक प्रस्तुति पात्र और प्रतीक को व्यक्ति की सार्वभौम विशिष्टता की प्रतिमूर्ति और सीमित 'प्रत्यक्ष' 'दृश्य' और 'नश्वर' के माध्यम से 'असीमित' 'परोक्ष' 'अदृश्य और शाश्वत की मानक कहा था। पहला प्रस्तुत और अप्रस्तुत दोनो को साथ–साथ प्रस्तुति से अर्थ– विस्तार करता है, अर्थ के एकाधिक धरातलो की समानातर अभिव्यक्ति देता है वह– जैसा कि मै पहले भी बता चुकी हूँ– मूलत. गतिशील समीकरण का सादृश्य के आरोप पर आधारित होता है। प्रतीक मे इसके विपरीत केवल प्रस्तुत का ही निरूपण होता है, उसका सादृश्य भाव प्रतीक के भीतर ही निहित होता है और जो सबसे बडी बात है, प्रतीक मे अर्थ संकुचित रहता है। उसका ग्रहण साभाष सतर्कता से संभव है– वह सतर्कता जो सहज बृद्धि को प्रेरित करे। कथारूपक के अर्थ–ग्रहण के लिए ज्ञान आवश्यक है, उसका रहस्य उसके अंर्तमथन से ही स्पष्ट हो सकता है। प्रतीक और कथारूपक की भिन्नता के प्रश्न पर एक इतर संदर्भ में चेट्स ने भी कहा है– 'प्रतीकवाद' में अनुभूति को उस रूप में अभिव्यक्त किया, जिस रूप में यह अन्य किसी माध्यम से अभिव्यक्त नहीं की जा सकती थी। उसे समझने के लिए उपयुक्त

सहजवृति की अपेक्षा थी। कथारूपक अनुभूति को उस रूप मे प्रस्तुत करता है, जिससे अच्छे रूप मे वह अभिव्यक्त की जा सकती है। उन्हे समझने के लिए उपयुक्त ज्ञान की अपेक्षा होता है। एक ने मूक को मुखर बनाया और अमूर्त को मूर्त कलेवर प्रदान किया, जबकि दूसरे ने किसी दृश्य या श्रुत धरना को अर्थपूर्ण बनाया।

(च) सांकेतिक चिन्ह और प्रतीक :

अपने आधार रूप मे किसी अनिवार्यता और किसी साक्षात् सबध की स्थूल चित्रण द्वारा सूचना देने वाले चिन्ह, सकेत या साकेतिक चिन्ह होते है। उनमे प्रस्तुत की प्रधानता होती है और अप्रस्तुत के साथ उनका सबंध नितात सरल और सर्वमान्य होता है। सकेत अनुभव जन्य होता है। उसकी व्याख्या स्वयचालित ज्ञान का विषय होती है। व्यक्ति अपने दैनिक जीवन मे वस्तुओं के गुण के उल्लेख द्वारा उन्हे परखने और समझने की क्षमता प्राप्त करता है। कभी–कभी इन गुणो को मौलिक या लिखित रूप मे चित्रित किया जाता है। इस चित्रण से मानव क्रियाओं के साथ उस सह संबंध का भी अभिज्ञान होता है, जिसकी ओर ये क्रियाएं उन्मुख रहती है। इस तथ्य के आधार पर सांकेतिक चिन्ह को पोषित करने की विधा माना जा सकता है।

साकेतिक चिन्हो को प्रतीक का समानार्थी समझने का भ्रम बहुत सामान्य है। ऐसा सभवत· इसलिए है कि सांकेतिक चिन्ह का सबंध भी एक रूप मे अभिव्यक्ति की समान प्रतीत होने वाली प्रक्रिया से होता है– वह भी अपने से 'बाहर' के अर्थ की ओर संकेत करता है, कलात्मक अभिव्यक्ति में

विकास की दृष्टि से, वह प्रतीक के एकदम पहले की सीढी है, और भाषा के भीतर उसकी सत्ता, प्रतीक के समानातर और इतनी ही महत्वपूर्ण रहती है। भाषा मनुष्य के उन अनुभवो का समुच्चय है, जो अपनी सार्वजनिकता के कारण सकेत और प्रतीक बन गए है। मनुष्य का चितन यदि सही अर्थों मे देखा जाये तो भाषा के द्वारा नही, बल्कि भाषा के सकेतो और प्रतीकों के द्वारा होता है क्योकि भाषा 'बोले जाने' के बाद ही भाषा होती है। चार्ल्स विलियम मारिस ने बोले हुए शब्दो को श्रोता के लिए सकेत और प्रतीक की मान्यता दी है। लेकिन इस सब के बाद भी सकेत प्रतीक नही है इसमे प्रतीक का लालित्य बोध, विस्तार, विविधता और उसकी क्षमता नहीं होती।

सामान्य व्यवहार तथा विज्ञान की भाषा मे जिसे 'प्रतीक' कहा जाता है, वह वास्तव मे सांकेतिक चिन्ह ही होता है। संकेत का अर्थ हर सदर्भ और परिस्थिति मे एक ही रहता है, वह जड और स्थिर होता है। उसमें प्रस्तुत प्रधान रहता है लालित्यबोध से उसका सबंध नही होता, इसीलिये वह अकलात्मक होता है। प्रतीक इसके विपरीत प्रसंगानुकूल, गतिशील और कलात्मक होता है। उसमें प्रधानता अप्रस्तुत की होती है। निर्वेग बौद्धिक और वैज्ञानिक वक्तव्य मात्र न होना वे भाव स्फूर्त होते है और कवि का उद्देश्य इनके माध्यम से गहन अनुभूति को पकडना और व्यक्त करना होता है। भावनात्मक प्रतीको के स्थान पर सांकेतिक चिन्हो का प्रयोग रचना का शिथिल और सपाट बना देता है। लेकिन इसके साथ ही हमें यह भी याद रखना चाहिए कि प्रत्येक संकेत भाव सम्पत्ति के द्वारा 'ऊपर उठकर' प्रतीक बनने की सामर्थ्य रखता है और प्रत्येक प्रतीक के सामने यह खतरा होता है कि अर्थ की जडता कही उसकी गतिशीलता को

अवरूद्ध कर उसे सकेत देते हुए कहा है– 'सभी प्रतीक, किसी न किसी रूप मे सकेत ही है पर सभी सकेत प्रतीक नही है। इन दोनो के बीच कोई विभाजक रेखा नही खीची जा सकती। सकेत और प्रतीक एक–दूसरे का स्थान ले सकते है इसलिए विशेष प्रकार के सकेत प्रतीक कहे जा सकते है' ।

(छ) भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा और प्रतीक :

प्राचीन भारतीय काव्यशास्त्र मे यो तो शब्द और अर्थ की व्यापक छानबीन हुई, लेकिन एक विभाजन के रूप में प्रतीक का कोई विश्लेषण या उल्लेख भी उसमे नही किया गया। इस रूप मे हिन्दी समीक्षा के क्षेत्र मे भी उसकी चर्चा एक अपेक्षाकृत नयी बात है। पहले–पहल आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने ही अलकारो की सापेक्षता में प्रतीक का उल्लेख किया था और भावना जागृत करने तथा काव्य को बहुत अच्छी सिद्धि करने की उसकी विशिष्ट सक्षमता को स्वीकार किया था।

प्राचीन साहित्य शास्त्र मे निर्दिष्ट शब्द की तीन शक्तियो में अभिधा को केवल अर्थ के प्राथमिक रूप की वाहिका माना है। शब्द की तात्कालिकता से अलग, किसी अर्थ को वह व्यक्त नहीं करती। शब्द–शक्ति की मूल आधार लक्षणा और व्यजना है क्योंकि वे भाषा के इकहरेपन को पार करती है और अर्थ को विस्तार प्रदान करती है। अलकारो के क्षेत्र में शब्द को इन दो शक्तियो की महत्वपूर्ण भूमिका है, विशेषकर सादृश्य मूलक अलंकारो मे प्रतीकार्थ के संप्रेषण मे भी ये दोनो शक्तियां कार्य करती हैं। लेकिन जिस तरह अप्रस्तुत होते हुए भी अलंकरण

तक नही रूके रहते बल्कि प्रस्तुत को समूची सवेदना के साथ कविता की भाषा मे ही रूपातरित हो जाते है, उनमे वस्तु तथा 'रूप' का जो केन्द्रीकृत सगठन रहता है, उसकी व्यापकता को देखते हुए उन्हे अलकार की सीमा मे तो नही बॉधा जा सकता, लक्षणा और व्यजना के विस्तार मे भी पूरी तरह नही समेटा जा सकता।

लक्षणा के प्रतीक के अर्थ सप्रेषण का काफी निकटवर्ती सबध है, वह स्थूल वाच्चार्थ (अभिधा) तथा सूक्ष्म व्यग्यार्थ (व्यजना) के बीच अपनी मूर्तिमता से आवश्यक सेतु का निर्माण करती है। यह मूर्तिमता ऐन्द्रिक सवेदनाओ को जागृत करती है, एक कल्पना बिम्ब मूर्त होता है और बिम्ब का 'धर्म' अथवा 'गुण' प्रस्तुत से सम्बद्ध होकर अपेक्षित अर्थ को सप्रेषित करता है। छायावादी काव्य मे ऐसे अनगिनत अप्रस्तुत है– विशेषकर प्राकृतिक– जिन्होने प्रभाव साम्य–ग्रहण को परिवर्तित प्रक्रिया के द्वारा प्रतीकत्व धारण किया है और जिनको लक्षित करते हुए डॉ राममूर्ति त्रिपाठी ने कहा है कि इस प्रकार प्रतीको के माध्यम से लक्षण मूलक व्यजना का उत्तरोत्तर प्रसार हो रहा है, प्रतीको मे प्रयोजनवर्ती लक्षण को शुद्धा तथा गौणी साध्यवसाना लक्षणाए काम करती है।

प्रतीक और लक्षणा की इस घनिष्टता का अर्थ यह नही है कि वे एक ही है। लक्षणा मे एक स्थिति से भाव को दूसरी स्थिति मे प्रक्षिप्त किया जाता है– जैसे चन्द्रमा की किरणो का उसके साथ कहना। सुमित्रानन्दन पत ने तो 'बादल' मे लिखा ही है 'समुद्र पेरते शुनि ज्योत्सना मे। पकड इन्दु के कर सुकुमार'', परन्तु प्रतीक की स्थिति लक्षणा से भिन्न है। प्रतीक किसी एक शब्द के द्वारा व्यापक भाव को व्यक्त करता है या

कहिये उस भाव विशेष का अमूर्तन है। प्रतीक रूप मे बौना का अर्थ दो हो जायेगा, किसी विकास का अवरूद्ध हो जाना शारीरिक विकास रूढ अर्थ मे होता है, पर जातीय अथवा राष्ट्रीय सवेदना का विकास रूक जाना 'बौना' का प्रतीकार्थ होगा।

अब मै व्यजना पर आती हूॅ। प्रतीक के लिए जिस साकेतिकता के गुण को महत्ता बताई गई है, वह व्यजनिक साकेतिक ही है। व्यजना मे शब्द, अपने प्रस्तुत सयोजना से बाहर के अर्थ को व्यक्त करते है। इस रूप मे कविता के सभी प्रतीकात्मक बिम्ब व्यजना गर्मी होते है। रहस्यपरक अनुभूतियो की कविता ऐसे ही व्यजना गर्मी प्रतीको की श्रखला को रखती है क्योकि अभिव्यक्ति शब्दातीत है उसका अर्थ भी गुज से लिपटे हुए शब्दो मे— मात्र व्यजित ही हो सकता है। मध्यकालीन सतो की रचनाओ से लेकर छायावाद, मे प्रयोगवाद और नयी कविता तक व्यजना गर्मी प्रतीको का प्रचुर प्रयोग मिलता है।

भारतीय काव्यशास्त्र परपरा की सापेक्षता मे, समीक्षा के नये विभावन प्रतीक का मूल्याकन करते हुए डॉ राममूर्ति त्रिपाठी भी इसी निष्कर्ष पर पहुचे है कि कविता मे प्रतीक लक्षणा और व्यंजना के रूढ अलकारिक प्रयोगो से अलग आकाशवत् होता है— जिसकी गहनता में अर्थ की विकासमान सभावनाए सदैव विद्यमान रहती है। काव्य मे प्रतीक की आवश्यकता हमे तब पडती है जब हम जो कुछ कहना चाहते हैं, वह शब्द की अमिधा और लक्षणात्मक सामर्थ्य से बाहर हो जाता है। इसीलिए प्रतीक सादृश्य अथवा सादृश्येतर सबध गर्भ अप्रस्तुत का पर्याय नहीं माना जा सकता। 'खिडकी से चांद झाक रहा है'— यहां चाद प्रतीक नही है। कारण,

वह गौणी साध्यसाना लक्षणा के बल पर 'मुख' अर्थ का प्रत्यय कराता है। इस प्रयोग से व्यजना के द्वारा चाद की तमाम विशेषताए 'मुख' मे प्रतीक होकर प्रयोग को प्रभावशाली, असरकारी अवश्य बना देती है। प्रतीपाछ (मुख) की जगह दूसरे को माध्यम बनाकर वक्ता अपने प्रयोग को जितना प्रभावशाली बना सका है उसकी अमिधा का प्रयोग कर वह उतना प्रभावशाली बना सकता। इसी विवशता के कारण उसे किसी अन्य माध्यम को पकडना पडा है। फिर भी इसे हम प्रतीक नही कह सकते। यह तो आलकारिको का एक रूढ प्रयोग है जिसे वे रूपकातिश्योक्ति कहते है, प्रतीक रूपकातिश्योक्ति से कुछ और होता है। 'मधुर–मधुर मेरे दीपक जल'— यहा दीपक प्रतीक है। यद्यपि यहा भी लक्षणा शक्ति के द्वारा 'साधक' अर्थ लिया जाता है, परन्तु यहा रूपकातिश्योक्ति अलंकार नही होगा। यह प्रयोग का झुकाव 'साधक' अर्थ का बोध कराने की अपेक्षा, साधक की विशेषताओं को जो अनेकानेक और साधना परपरा मे प्रसिद्ध है, उनकी आकृति या अनुरजन पर ज्यादा है। निष्कर्ष यह कि रूपकातिश्योक्ति और प्रतीक— उभय लक्षणा और व्यजना का सहारा लिया जाता है, पर जहा पहले मे लक्षणा की सहायिका व्यजना होती है वहा दूसरे मे व्यजना स्वय प्रमुख बन जाती हैं, वहा परंपरा और सस्कार मे धसने की जिसकी जितनी क्षमता होगी अर्थ आकृतिया उतनी ही मात्रा मे अनुकरणात्मक ढग से पकड मे आती जायेगी। इसीलिए प्रतीक जब व्यक्तिगत अनुभवो के आधार पर आने लगते है तो दुरूहता आने लगता है जो काव्यास्वाद के लिए घातक मानी जाती है।

काव्य मे ऐसे अनेक प्रकार के प्रयोग मिलते है जहा व्यजना शक्ति सक्रिय रहती है, पर उन सभी स्थलो पर 'प्रतीक' शब्द का प्रयोग नही होगा। अन्योक्तिया अप्रस्तुत प्रशसा मे भी व्यजना सक्रिय रहती है, पर वहा दो समानातर व्यापार प्रवाह बिम्ब प्रतिविम्ब भाषापन्न होते है– एक से दूसरे की मानक मिल जाती है– व्यजना एक समानान्तर अर्थ प्रवाह तक जाकर रूक जाती है। प्रतीक मे व्यजना का प्रवाह रूकता नही जान पडता। यह आकाश है जहा पक्षी अपने पखो को सामर्थ्य के अनुरूप उडता है, प्रतीक आकाश मे ग्राहक की प्रतिमा पक्षी है। इसी प्रसग मे डॉ त्रिपाठी ने यह तर्कसगत निष्पति भी दी है कि काव्य प्रतीक पारिभाषिक और स्थिर प्रकृति नही होता। काव्येतर क्षेत्र से काव्य मे सचरित होने वाले प्रतीको मे 'प्रयोक्ता' को नयी अर्थ अवधारणा करनी पडती है, तभी वे काव्यात्मक हो सकते है। यह उसी बात का एक दूसरा पहलू है जो मै पहले भी बता चुकी हूँ कि हर युग मे नये कवि प्रतिभा अपने नये सवेदनागत वैशिष्ट्य, परिवेश बोध और नये अनुषगो के साथ प्रतीको को अपने समय से जोडती है और इस प्रकार उसकी विकासशील अर्थमयता को बनाये रखती है।

समीक्षा :

मनुष्य के सामाजिक तथा मानसिक जीवन में प्रतीक की इतनी व्यापकता और इतना महत्व है कि आधुनिक ज्ञान के विकास के साथ–साथ प्रतीक चिंतन की परपरा मे भी पर्याप्त वैज्ञानिक और क्रमबद्ध विकास हुआ है, इसलिए आलोचना और लालित्यबोध के क्षेत्र मे जब भी कला और उसकी सृजन प्रक्रिया का विश्लेषण किया गया तो प्रतीक के संदर्भ में

विभिन्न निष्कर्षों की प्राप्ति हुई। लेकिन इसके अतिरिक्त प्रतीक चितन की परपरा मे वे समाज शास्त्रीय विचारक भी आते है जिन्होने सामाजिक विश्वासो, सस्कारो, श्रद्धा, धर्म और रीति–रिवाजो के सदर्भ मे प्रतीक की व्याख्या की। वे मनोवैज्ञानिक भी आते है जिनके लिए प्रतीक मनुष्य के रहस्यमय अन्तर्लोक और मानसिक प्रक्रियाओ का प्रवक्ता है, और वे दार्शनिक भी जिनके लिए प्रतीक असीम है और जो इसके अन्तर्गत भाषा, भाव और मुद्रा से लेकर समस्त आनुभविक ज्ञान को समेटते है। प्रतीक सबधी यह समस्त ज्ञान इतना विस्तृत और विविधता मूलक है कि पूर्ण व्याख्या के लिए वह स्वय मे एक स्वतत्र विवेचन की माग करता है। प्रस्तुत अध्ययन मे केवल एक ऐसे प्रतिनिधि विश्लेषणो और निष्कर्षों पर विचार करने की चेष्टा की गयी है जिनके सदर्भ साहित्यिक है अथवा जिन्होने साहित्य चितन की दिशा को निर्धारित करने मे अपना योगदान दिया है।

छायावादी काव्य में प्रतीकों का अध्ययन

प्रत्येक युग अपनी मानसिकताओ, मान्यताओ और मूल्यो मे अपने पूर्ववर्ती युगो से कुछ न कुछ भिन्न होता है। परिवर्तित की वह प्रक्रिया, जो कि इस भिन्नता का कारण होती है, हांलाकि वस्तुगत परिवर्तन की सापेक्षता मे ही निहित होती है। लेकिन चरित्र चूकि सवेदनापरक और आतरिक होता है, इसलिए उसे सीधे—सीधे राजनैतिक परिवर्तन की तरहे रेखाकित करना एक कठिन काम है। सामूहिक चेतना मे निरतर होने वाला यह परिवर्तन तत्कालीन साहित्य मे अपने लिए जगह बनाते चलता है। इस वैचारिक तथा सवेदनात्मक विकास को प्रस्तुत करने मे अभिव्यक्ति का प्रचलित स्वरूप सक्षम नही होता। यही कारण है कि प्रत्येक नये युग का साहित्य अपनी बदली हुई अर्न्तवस्तु की माग के अनुरूप अपनी विशिष्ट सवेदना से मुक्त काव्य—भाषा और अपने शिल्प का विकास करता है। इस रूप मे महायुद्ध के बाद छायावाद के रूप में हिन्दी कविता की सरचना मे जो मूलभूत बदलाव दिखाई देते है वे एक साहित्यक आंदोलन मात्र की परिणति नही है। इससे भी अधिक, उनके पीछे एक युग तथा उनकी सचालक शक्तियो के बदल जाने, और सामूहिक चेतना मे एक महत्वपूर्ण परिवर्तन के घटित होने की पहचान निहित है।

यह केवल संयोग नहीं है कि हिन्दी कविता मे छायावाद का उदय लगभ उसी समय हुआ जिस समय महात्मां गॉधी अपनी भाववादी, नैतिक

लिए आए थे, देश मे अग्रेजी साम्राज्यवाद के जमने के साथ ही, परपरागत सामन्ती समाज–व्यवस्था मे परिवर्तन के चहन दिखाई देने लग गये थे। बीसवी शताब्दी के प्रारभ से ही नवोदित तथा तनशिक्षित मध्यवर्ग को, स्वाधीनता, वैयक्तिकता और जनतत्र की नई परिक्पनाओ से वैस होकर बढते हुए राष्ट्रीय जन–आदोलन के विभिन्न स्तरो पर सक्रिय होते पाया जा सकता है। मुद्रित शब्द के प्रसार, और लेखक तथा पाठक वर्गों के गठन ने, सास्कृतिक पुनर्जागरण की प्रक्रिया को तेज कर दिया था और उसमे बहुस्तरीय सम्मिलित हो रहे थे। पहले महायुद्ध के आरभ ने भारत मे पूजीवाद के अतर्विरोधो को बहा दिया और इसके साथ ही मध्यवर्ग की आत्म–चेतना में भी तीव्र विकास हुआ। यहा यह निर्दिष्ट करना विषयेत्तर नही होगा कि इस समय तथा देश मे पूर्णत विदेशी पूजी का वर्चस्व का, देश मे बुनियादी उद्योगो की स्थापना नही हुई थी और भारतीय पूजीवाद का अस्तित्व कच्चे माल के निर्यात की दलाली पर टिका हुआ था। युद्ध के दौरान जब विदेशो से होनेवाला आयात काफी कम हो गया तो देशी उपयोगों की भी पनपने के अवसर मिले, लेकिन वे देशी पूजीपतियो की बढती हुई महत्वाकाक्षाओ के लिए पर्याप्त न थे। दूसरी ओर बढते हुए शोषण, भयंकर गरीबी की चेतना तथा नये विचारो के प्रचार के साथ भारतीय जनमत भी लगातार सगठित हो रहा था।

इस पृष्ठभूमि में देखने पर देश के औद्योगिक विकास की उस वास्तविकता को समझा जा सकता है जो यों तो साम्राज्यवादी पूजी द्वारा शोषण का ही रूप था, लेकिन जिसने, अस्थाई तौर पर ही सही पुनर्जागरण

की चेतना और नूतन विचारो का सवहन करते बर्धमान मध्यम वर्गमे एक काल्पनिक आशावाद खण्डित हुआ– उत्तर छायावादी काव्य मे उसकी टूटन को सूना भी जा सकता है। लेकिन इस दौर मे, डॉ रघुवश के विशेषज्ञो का प्रयोग करते हुए कहे तो देश के सबसे अधिक शिक्षित तथा सचेत मध्यवर्ग का व्यक्ति अपने स्वय के प्रति जागरूक हुआ। दूसरी ओर दमनकारी अग्रेज शासन के प्रति दिपभता तथा बेरोजगारी से ग्रस्त आम जनता के प्रतिरोध भी बढ रहे थे। महात्मा गाधी ने पारपरिक नैतिक तथा आदर्शवादी मूल्यो से बधी भारतीय जनता के इस क्रातिकारी उभार तथा शिक्षित मध्यवर्ग मे विकासशील नयी मानवतावादी आशावादी रोमाटिक स्व–चेतना की शिनाख्त थी। उनकी अहिसा 'सत्याग्रह' और 'स्वदेशी' की धारणाए, भारतीय जनता के उन वर्गो की तत्कालीन मनोभावनाओ का दार्शनिक समन्वय है। अहिसा एक अर्न्तमुखी अवधारणा की जिसे बर्हिमुखी शक्तियो के विरूद्ध एक अस्त्र के रूप में परिभाषित और प्रतिपादित किया गया। हिन्दी कविता में स्वचेतना से युक्त यह अन्तर्मुखता 'छायावाद' के रूप में अभिव्यक्त हुई। डॉ. नगेन्द्र की यह मान्यता स्वय मे काफी वजन रखती है कि छायावादियो के दो रचनात्मक मूल्य प्रेम और सौंदर्य, तत्कालीन गाधीवादी राजनीति के अहिसा और सत्य के मूल्यो का ही परिवर्तित रूप है।

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि छायावादी कविता की सरचना और मान्यताओ पर 1913 का नोवेल पुरस्कार पाने वाले बगला कवि रविन्द्रनाथ ठाकुर तथा पिछली सदी के अंग्रेज रोमाटिक कवियो का गहरा प्रभाव है। स्वयं छायावादी कवि इस तथ्य को स्वीकार करते हैं। लेकिन इस प्रभाव के

पीछे भी यह वस्तुगत तथ्य है कि पूजीवादी के उदय और औद्योगिक विकास के प्रारभ मे 'व्यक्ति' की बदली हुई सामाजिक स्थितियो, कविता को रोमाटिकता की ओर ले जाती है। स्वचेतना, वस्तुगत प्रकृति के प्रति जिज्ञासा के भाव, सौदर्य प्रेम, परिवेश के प्रति असतोष जिसमे कवि एक ओर स्वप्न और आत्मभूति की ओर उन्मुख होता है और दूसरी ओर विद्रोह तथा मुक्ति की अकुलाहट की ओर रोमाटिकता के ये सारे तत्व छायावादी कविता मे मिलती है। सास्कृतिक पुनर्जागरण तथा राष्ट्रीय आन्दोलन – और उनमे भी मध्यम वर्ग के व्यापक योगदान के कारण रोमाटिक तत्वो को काफी बल मिला था। छायावाद के इस तत्व रूप का साहित्यिक तथा तर्क सगत प्रतिफलन हुआ है। इस ऐतिहासिक सास्कृतिक प्रक्रिया को समन्वित करते हुए डॉ नामवर सिह ने कहा है सास्कृतिक पुनर्जागरण का दूसरा चरण राष्ट्रीयता आन्दोलन की नयी लहर लेकर आया। समूचे भारतीय समाज मे अपूर्व आशा और आकाक्षा का सचार हुआ। कल्पनाजीवी युवकों का अभ्युदय हुआ। व्यक्तित्व मे विराटता आई। व्यक्तिगत रूढियो से मुक्त हो नयी उडाने भरने लगा। इस नये व्यक्ति की अभिव्यक्ति की नयी हो उठी। 'नया व्यक्ति' और 'नयी अभिव्यक्ति' – यह नयापन इस बात का द्योतक है कि कविता की अर्न्तवस्तु और रूप दोनो बदल गए हैं तथा सवेदनात्मक विकास के साथ विकसित होकर काव्य भाषा की एक उच्चतर धरातल तक पहुचने में सक्षम हुई है।

हिन्दी कविता के समूचे व्यक्तित्व को रूपान्तरित करने में छायावाद के महत्वपूर्ण योगदान का समुचित आकलन उसके ठीक पूर्ववर्ती युग की कविता के परिप्रेक्ष्य मे ही किया जा सकता है। इसी परिप्रेक्ष्य मे ये भी

समझा जा सकता है कि द्विवेदी युगीन कविता की 'स्थूलता' और 'अर्न्तमुखी' होने का आशय क्या है। भारतेन्दु काल मे, साहित्य की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप मे खडञ्ची बोली की प्रतिष्ठा हो तो दी गई थी किन्तु, उसका प्रयोग मूलत गद्य के क्षेत्र मे हो रहा था। पद्य मे खडी बोली की प्रतिष्ठा परवर्ती द्विवेदी युग की धरना है। इस युग मे श्रीधर पाठक, हरिऔध, मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी अदि कवियो ने खडी बोली मे अपने सृजन के आरभिक प्रयोग किये। (यह तथ्य भी स्वय मे काफी रोचक है कि इसी युग मे छायावादी काव्य के महत्वपूर्ण भावी कृतिकार प्रसाद बृजभाषा मे अपनी कविताए लिख रहे थे।) खडी बोली की इन आरभिक रचनाओ का आधार सामान्यत· पुनरूत्थान मूलक सुधारवाद था जिसके कारण उनमे इतिवृत्तात्मक, प्रत्यक्ष वस्तुपरक अनुभव अथवा भावुकता प्रधान पौराणिक कल्पना की बहुलता और निश्चय ही 'काश्मीर – सुषमा (श्री धर पाठक) जैसी सहज कल्पना–प्रवज तथा स्वच्छदता के आनेवाली कविताए भी इस युग मे लिखी गई लेकिन समूचे काल व्यक्तित्व की रचना मे उनकी भूमिका गौण है। इति वृत्तात्मक तथा प्रत्यक्ष अनुभव की प्रधानता के कारण स्वाभाविक तौर पर द्विवेदी युगीन रचना धार्मिता का सवेदना क्षेत्र बहुत सीमित बना रहा और भाषा के लिए जिस पारदर्शिता की अपेक्षा होती है उसकी इन कविताओ मे इतनी कमी है कि छदबद्धता के बावजूद वे मूलतः गद्य ही है। सवेदनात्मक गहनता और कल्पना की ऊर्जा के द्वारा, छायावादी कवियो ने इस जड़ता को तोडा और इस प्रकार काव्य भाषा के रूप मे खडीबोली हिन्दी का पहली बार परिष्कार किया। अगर द्विवेदी युग और छायावाद युग के कृतित्व को आमने–सामने रखकर देखा

जाय तो यह बात साफ–साफ दिखाई देती है – साथ ही यह तथ्य भी पता चलता है कि हिन्दी कविता के समूचे इतिहास मे इस तरह के कोई भी अन्य युग नही है जिनमे समान आधार भाषा के बावजूद, भाषा की सर्जनात्मकता का इतना बड़ा अतर हो। काव्यभाषा के इस क्रमिक विकास को निम्नलिखित उद्धरणो मे देखा जा सकता है। पहला उद्धरण मैथिलीशरण गुप्त की कृति 'भारत भारती (1912) से है, और दूसरा तथा तीसरा गीत, प्रसाद के नारको क्रमश स्कद गुपत (1918) तथा चन्द्रगुप्त (1931) से लिए गए है –

(अ) शैशव दशा मे देश प्राय जिस समय सब व्याप्त थे निशेष विषयो मे तभी हम प्रौढता को प्राप्त थे ससार को पहले हमी के ज्ञान भिक्षा दान दी आधार की, व्यापार की, व्यवहार की विज्ञान थी।

(ब) हिमालय के ऑगन मे उसे प्रथम किरणो का दे उपहार उषा ने हंस अभिनन्दन किया और पहनाया हीरक हार जगे हम लगे जगाने विश्व, लोक मे फैला फिर आलोक व्योम तम पुज हुआ तब नाश, अखिल ससृति हो उठी अशोक।

(स) अरूण यह मधुमय देश हमारा जहा पहुच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा हेम कुम्भ ले ऊषा सवेरे, भरती हलकाती सुख मेरे मदिर अंधते रहते जग जगकर रजनी भर तारा।'

इन तीनों ही उद्धरणो का तथ्य समान है और वह यह कि हमारा देश, विश्व की सस्कृति का आदि गुरू है। मैथिलीशरण गुप्त मे इस बात की अभिव्यक्ति सपाट, कथनात्मक और यह स्तरीय हैं स्कंदगुप्त के गीत

जो कि छायावाद की आरभिक रचना है– प्रसाद की 'छायावाद वक्रता' और नये विकसित होते बिम्ब विधान को देखा जा सकता है। तीसरी गीत एक पूर्णत विकसित काव्य–भाषा का उदाहरण है देश 'मधुमय' है। मधु का बिम्ब अपने सास्कृतिक आनुवगो और जीवन की सारी मिठास के साथ प्रतीक बन जाता है और देश को व्यवहारचित करने लगता है। इस तरू तरूजाई, स्वास्थ्य, सौदर्य और अनुराग की भावनाए 'अरूज' मे सपुजित हो जाती है। यह अरूज–मधुमय देश, अज्ञान के शून्य से ग्रस्त दूसरे देशो–अनजान क्षितिज को आश्रय देता है। मैथिलीशरण गुप्त की बात यहा तक आते–आते काव्यात्मकता के कितने स्तर पार करती है। वास्तव मे छायावादी कवियो ने अपने पूर्ववर्तियो की तथ्यात्मक कृतियो के आधार पर इस सूत्र को पा लिया था कि रचना मे अनुभव के सत्य को बहुत थोडी दूर तक कहा जा सकता है। उसके आगे तो उसे सप्रेषित ही करना होगा।

'कहने' के बजाय सप्रेषित करने की आवश्यकता को अनुभव करने के पीछे, वस्तु–जगत के साथ कवि के एन्छिय बोध का बदला हुआ रिश्ता – यथार्थ को अपनी नई सवेदना के रगो की पुनर्सृजित करने की एक नूतन रागात्मक दृष्टि क्रियाशील थी। इस सप्रेषण को सभव बनाने के लिए काव्य–भाषा की जो परिकल्पना छायावादी कवि के दिमाग मे थी, उसे पत द्वारा लिखित 'पल्लव' की प्रख्यात भूमिका मे देखा जा सकता है कविता के लिए चित्र भाषा की आवश्यकता पडती है। उसके शब्द सस्वर दोनो चाहिए, जो बोलते हो, सेब की तरह जिनके रस की अधुर लालिमा भीतर न समां सकने के कारण बाहर झलक पडे, जो अपने भाव को अपनी ही ध्वनि मे आखो के सामने चित्रित कर सके, जो झकार मे चित्र, चित्र मे झंकार हो –

भाव और भाषा का सामजस्य – उनका स्वरेक्य ही चित्रराग है। जैसे भाव ही भाषा मे घनीभूत हो गए हो। – जहा भाव और भाषा मे मैत्री अथवा ऐक्य नही रहता वहा स्वरो के पास मे केवल शब्दो के कटु समुदाय ही वानरो की तरह इधर–उधर कूदते–फुदकते अथवा सामध्वनि करते सुनाई देते है। ब्रजभाषा के अलकृत काल की अधिकाश कविता इसका उदाहरण है। बोलते, दिखाइ देते, अर्थ से कसमसाते–बजते शब्दो वाली, अलकारो के कोलाहल से बचती यह चित्र–भाषा, वस्तुत· प्रतीको से युक्त आधुनिक काकभाषा ही है। भाव और भाषा के बीच अद्वैत स्थापित करने की आकाक्षा इस काव्य–भाषा को अर्जित करने की आकांक्षा है।

छायावाद के व्यक्तित्व के अनुरूप ही उसकी काव्य–भाषा की रचना मे सर्जनात्मक रोमांटिक कल्पना का बहुत बडा हाथ है। इसके माध्यम से छायावादी कवि ने न केवल एक विशाल शब्द भण्डार की रचना की, बल्कि नये सन्दर्भो से जोडकर या पुराने अनुपगो को बदलते हुए अनेक रूप शब्दो को भी पर्नजीवित किया। यह बात इस संदर्भ मे और भी महत्वपूर्ण है कि इस समूची प्रक्रिया के समानान्तर कविता अधिकाधिक शब्द सयम की ओर झुकती गई है। यह विरोधाभाष की स्थिति नहीं है बल्कि एक काव्य–भाषा के निर्माण की प्रक्रिया है। शब्द–सयम की अनिवार्य परिणीत के रूप मे शब्द और उनका सौदर्य गौण होने लगा तथा इसके बजाय अर्थ का विस्तार करने वाले काकभाषा के बुनियादी उपकरणो विम्बो तथा प्रतीको की महता बढती चली गई। पुराने रूढ शब्दों के पुनरुज्जीवन तथा नये शब्दो की रचना के दोहरे नाम के स्वाभाविक परिणामस्वरूप छायावाद के प्रतीक विधान का गठन हुआ। असख्य नये प्रतीकों का सृजन हुआ तथा पारंपरिक

प्रतीको के अर्थ मे नए स्तर तराशने का सर्जनात्मक काम भी व्यापक पैमाने पर हुआ। एक नये जीवित साहित्य आदोलन के लिए ऐसा करना अपरिहार्य भी था क्योकि जैसा अज्ञेय ने भी बताया है – कोई भी स्वरूप काव्य साहित्य प्रतीको की, नये प्रतीको की सृष्टि करता है और जब वैसा करना बन्द कर देता है, तब जड हो जाता है – या जब जड हो जाता है तब वैसा करना बन्द करके पुराने प्रतीको पर ही निर्भर करने लगता है।

छायावादी काव्यभाषा की एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशिष्टता उसके साम्य विधान मे है और उसकी बिम्बात्मकता तथा प्रतीकात्मकता का विशेषकर निजी प्रतीको का सबसे ठोस आधार भी वही है। साम्य ग्रहण का तत्व कवि कर्म का केन्द्रीय तत्व है। हर युग और हर भाषा की कविता में यह तत्व नये ढग से विद्यमान रहता है और उस कविता को नयापन प्रदान करता है। साम्य के इस तत्व को छायावाद ने नितात नए सूक्ष्मता के धरातल पर ग्रहण किया है। जब रमेश चन्द्र शाह प्रसाद की कविता 'झरना' की नई बात और नए अदाज की बात करते है तो वस्तुत साम्य ग्रहण की प्रक्रिया मे आने वाले इस मूलभूत फर्क को ही रेखाकित कर रहे होते है : झरना कविता पढते हुए हमारा ध्यान उसके बन्द की बुनावट की ओर आकर्षित होता है तो क्यो होता है ? इसीलिए न कि वह नया है और सोचने– महसूस करने के नए ढग और तेवर की माग मे से ढलकर आया है। स्मरण हो रहा है शैल का कटना। कालातीत काल की धरना–। बात नई है क्योकि – और इसलिए कि अन्दाज नया है हमे लगता है कि बात इसी तरह, इसी वाक्य विकास में और शब्दों की चाल से कही जा सकती थी। यह भी हमारी समझ मे आने लगता है कि मैथिलीशरण गुप्त की

कविता से यह कविता किस प्रकार अपनी भिन्नता स्थापित करती है क्योकि लय और वाक्य विन्यास की वह मौलिकता नही आ पाती है और अप्रत्याशित की उत्तेजना भी न रहने से पद्य एकरस और इकहरा हो जाता है। कविता मे अनुभवो की ऐसी अनभूतपूर्व अभिव्यक्तिया नयापन और विशिष्टता आती है, जब पत लिखते है –

"तुम्हारी आखो का आकाश
साल आखो का नीलाकाश
खो गया मेरा खग अनजान
मृगाक्षणि मेरा खग अनजान।

तो आखो के नीले प्रसार को नीले आकाश की तरह रूमांचित करते ही 'खग' ह्रदय का प्रतीकार्थ ग्रहण कर लेता है।

अनेक बातर तो ग्रहण की प्रक्रिया अत्यन्त परिचित धरातल पर हुई है किन्तु उसका रूप इतना अभूतपूर्व है और साम्य का आधार इतना आतरिक है कि काव्यास्वाद का नितात नया अनुभव उत्पन्न होता है।

"कुहरा जैसे धन आतय मे
यह ससृति मूल मे लय होगी।"

धूप मे कोहरे का धुल जाना एक परिचित दृश्य है लेकिन उसके साथ ससृति के उसी कोहरे की तरह कवियों में लीन हो जाने की बात मे जो सूक्ष्म सौंदर्य निहित है वह बहुआयामी है। विशेष बात यह है कि कुहरे और ससृति के बीच केवल उनकी विलयनशीलता ही इस साम्य का आधार है।

छायावादी काव्य–भाषा की चित्र–भाषा कहने का आशय ही यही है कि उनमे निहित साम्य–ग्रहण की प्रक्रिया अलकारो के बजाय सवेदनात्मक बिम्बो को प्रमुखता देते है। साम्य पर आधारित ये सवेदनात्मक बिम्ब ही प्रतीक योजना के रूप मे आते है। इस सदर्भ मे प्रसाद की यह मान्यता दृष्टक है · सौदर्य बोध बिना रूप के हो ही नही सकता। सौदर्य की अनुभूति के साथ ही साथ, हम अपने सवेदन को आकार देने के लिए उसका प्रतीक बनाने को बाध्य है। आतरिक प्रभाव साम्य ग्रहण करने की प्रवृत्ति के साथ, प्रस्तुत और अप्रस्तुत के बीच का अलगाव घट गया और सर्जक की सवेदना ने उन्हे साकार दिया। अप्रस्तुत चित्र इतने स्वाभाविक हो गए कि प्रस्तुत को अलग से जानने की कोई आवश्यकता ही नही रही। सृजनात्मकता के इस एंतिहासिक विकास पर प्रकाश डालते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कहते है : " छायावाद बडी सहृदयता के साथ प्रभाव साम्य पर ही विशेष लक्ष्य रखकर चला है, कही–कही तो बाहरी सादृश्य अथवा साधर्म्य अतयन्त अल्प या न रहने पर भी आभ्यन्तार प्रभाव साम्य को लेकर ही अप्रस्तुतो का सन्निवेश कर दिया जाता है। ऐसे अप्रस्तुत अधिकतर उपलक्ष्य के रूप में या प्रतीकवत् होते है। जैसे–सुख–आनन्द, प्रफुल्लता, यौवनकाल इत्यादि के स्थान पर उनके द्योतक ऊषा प्रभात मधुकाल प्रिया के स्थान पर मुकुल, प्रेमी के स्थान पर मधुप श्वेत या शुभ के स्थन पर कुन्द, रजत, माधुर्य के सीान पर मधु दीप्तिमान या कान्तिमान के स्थान पर स्वर्ग : विषाद या अवसाद के स्थान पर अंधकार, अंधेरी रात संध्या की छाया, पतझड, मानसिक आकुलताया क्षोभ के सीान पर झाझा, तूफान भावतरंग के लिए झंकार, भाव प्रवाह के लिए संगीत या मूरली का स्वर

इत्यादि। मुख्यत प्रकृति के क्षेत्र मे सचरण करती प्रभाव साम्य की यह भावना, छायावाद के विपुल प्राकृतिक प्रतीक कोश का नियोजन करती है और इस सूत्र को जन्म देती है कि प्रमाद साम्य ही आगे चलकर प्रतीक योजना करा है।

इस सदीं मे छायावाद की प्रकृति की ओर उन्मुखता की भावना और उसके प्राकृतिक प्रतीको पर भी संक्षेप मे दृष्टिपात कर लेना उचित होगा। ये कवि प्रकृति कर स्वतत्र चित्रण मात्र नही करते। इसके विपरीत के प्रकृति से जीवन के साम्य को स्थापित करते उस पर आत्म प्रक्षेपण करते हुए उसका काकात्मक उपयोग करते है। एक ओर तो प्रकृति का रग गध ध्वनिमय विस्तृत लोक उनकी स्वच्छंद कल्पना को अनुभव की सीमित दायरे से निकालकर एक फैलाव प्रदान्न करता है। दूसरी ओर प्रकृति उनके हृदयगत गहन भावो को उदीप्त करती तथा आरोपण के माध्यम से उनकी अभिव्यक्ति मे सहायता भी करती है। जो अव्यक्त रहा अतर मे। मुक्त अतीत रहा ध्वनि स्वर मे। उसे प्रतीकों मे विम्बित रहे दो– रहने दो की प्रतिज्ञ से निबद्ध छायावादी के लिए प्रकृति का महत्व उन प्राकृतिक बिम्बो और प्रतीको के कारण है जिनके द्वारा वह अपनी धधली–अस्पष्ट अनुभूतियो को सकेतिक करता है, बोदलेयर की कविता के बारे मे सी.एम बाआरा ने कहा है

बादलेकर के लिए दृश्यमान सवेदनयुक्त जगत ऐसे प्रतीको से भरपूर था जो मनुष्य के हृदय को आनन्द तथा विषाद से भरते हैं और गधे, रगो और ध्वनियों के माध्यम से आत्मा के स्फुरण को सप्रेषित करते हैं। यह कुछ रहस्यवादी अवधारणा है और इसकी समुचित प्रतिफलन छायावाद की

रहस्यपरक कविताओ मे विशेषकर देखा जा सकता है— जैसे निराला की 'तुम और मै' मे शीर्षक कविता मे ही समूची प्रकृति प्रतीकबद्ध अनुभूत तथा अभिव्यक्त होती है।

''तुम तुग हिमालय श्रृग

और मै चचल सरिता

तुम गध कुसुम कोमल पराग

मै मृदुगति मलय समीर,

तुम आशा के मधुमास

और मै पिक कल कूजन तान।''

लेकिन रहस्यपरकता के अलावा अन्य भावो को व्यक्त करने का काम भी प्राकृतिक प्रतीक छायावाद मे बडे पैमाने पर करते है। 'आंसू' की प्रख्यात पक्ति ''झझा झकोर गर्जन था बिजली थी नीरद माला'' के समूचे प्राकृतिक उपकरण मनोदशाओ के व्यजक है और प्रभाव साम्य के माध्यम से 'प्रतीकवत्' प्रयुक्त हुए हैं। यही प्रतीकरण निराला की कविता मे 'अकेला' मे भी है

मै अकेला

देखता हू आ रही

मेरे दिवस की सांध्य बेला।''

यौवन और जीवन के बीत चुकने की अनुभूति को दिवस के बीत चुकने और आती हुई सध्या के अद्‌भुत गतिशील बिम्ब से जोडकर कवि अकेलेपन और उदासी के गहरे रगों से मंडित कर देता है। वास्तव में इस प्रकार के प्राकृतिक प्रतीकों की अनगिनत संख्या छायावादी काव्य में प्राप्त

होती है। जिनमे छायावाद की अभिव्यक्ति ने जिना अर्जित की है। प्रसाद के 'लहर' सागर जलनिधि निराला का 'बादल' पत के प्रति 'स्वर्ण' और महादेवी वर्मा की 'दीपशिखा' आदि प्राकृतिक प्रतीक तोछायावादी काव्य मे भी अपनी अलग पहचान बनाने मे सफल हुए है।

छायावाद मे पुराने शब्दो मे नये अर्थ भरने की भली भाति की गई है। एक गहनतर स्तर पर परपरागत प्रतीको के साथ भी यह घटित हुआ है जिन्हे इन कवियो ने अपनी अपम्परित भावभूमि को व्यक्त करने के लिए प्रयोग किया है। वैसे भी छायावादी रचनात्मक कल्पना का स्मृतिके साथ घनिष्ट सबध है। स्मृति अतीत की ओर उन्मुख होती है और उसका कवि मन मे सचित प्रतीक कोश कल्पना को उकसाने का कार्य करता है। सामान्यत यह प्रक्रिया कवि को अपने तात्कालिक वैयक्तिक अतीत की ओर ले जाती है लेकिन कवित्व के विकास के साथ–साथ यह सभव होता है कि ऐतिहासिक परिज्ञान से युक्त होकर कवि वैयक्तिक अतीत का अतिक्रमण कर सास्कृतिक अतीत समूची जातीय परपरा से जुडे टी एस इलियट ने तो इसे लगभग कवि कर्म के सार्थक विकास की शर्त दी माना है क्योकि इस प्रक्रिया के माध्यम से ही कवि परंपरा और अपनी निजी युगीन चेतना को एक साथ सूत्रबद्ध कर सकता है। कोई भी साहित्य अपने सास्कृतिक ऐतिहासिक अतीत से रागात्मक सामंजस्य स्थापित करके दी समर्थ व प्रामाणिक होता है। जातीय स्मृति के गहन मौन मे दबे हुए प्रतीको का पुनरुत्थान इस रूप मे रचनात्मक सामर्थ्य की पहचान है। इस सत्य से इंकार नही किया जा सकता कि छायावादी आन्दोलन ने जहा एक ओर कवि की निजी वैयक्तिक स्मृति को उत्तेजित किया वहां दूसरी ओर उसमे

इस वैयक्तिक स्मृति की नवजात सक्रियता के साथ–साथ जातीय स्मृति का भी सहज उद्रेक हो सका था और उस युग की कविता को नए रूपाकार दे सका था। उसके पहले भी कविताएं जातीय स्मृति सक्रिय थीं लेकिन उसका स्वर उद्‌बोधनात्मक का इसलिए संवेदन के गहरे स्तर पार करने की कलात्मक क्षमता उसमें नहीं आ सकी थी। छायावादी कवि, और उसमें भी विशेषकर प्रसाद और निराला ने सघन सांस्कृतिक बोध के चलने जातीय स्मृति को रचनात्मक उद्रेक से एकाकार किया तथा अपने समय और अस्तित्व की गुत्थियों को परिभाषित करने में उसे अपनी संवेदना के केन्द्र में रखा। इसी कारण उनके सांस्कृतिक प्रतीकों में प्रामाणिकता और रचनात्मक गहनात आ सकी है। 'कामायनी' और 'राम की शक्तिपूजा' जैसी मूलतः मिथकीय आधार वाली रचनाओं के अलावा स्फुट कविताओं में भी परंपरा और जातीय संस्कृति से इन कवियों के गहरे रिश्तें को देखा जा सकता है। 'ले चला मुझे भुलावा देकर मेरे नाविक धीरे–धीरे' प्रसाद के पलायनवाद को सिद्ध करने के काम में आने वाले इस प्रख्यात गीत के संदर्भ में रमेश चन्द्र शाह ने यह महत्वपूर्ण और चौंकाने वाली बात कही है कि प्रसाद का यह 'नाविक' 'स्वयं काल और इतिहास बोध का प्रतीक है। यहा 'अमर जागरण ऊषा नयन' से निखरती हो ज्योति धनी रेः वहां ले जानेवाला यह नाविक महज प्रसाद के कवि का व्यक्तिगत अतीत ही नही है, वह एक प्रकार से समूची जाति का अतीत है, संस्कृति है, सामूहिक अवचेतन भी आप चाहे तो उसे कह सकते हैं। वहीं हमारे क्षणिक अस्तित्व को सनातनकाल में से उत्तीर्ण करता है।

छायावादी कविता मे ऐसे अनेक प्रतीक मिल जायेगे शब्द के रूप मे ऐतिहासिक सास्कृतिक परपरा मे जिनके अनुषग बहुत गहरे है लेकिन जिनके भीतर छिपी प्रतीकात्मकता और अर्थ छायाओ की पहली बार इसी कविता मे पकडऋा गया है। जल प्लावन के बाद अकेले बचे हुए मनु के लिए बौद्ध ध्र्मा से जुडे 'स्तूप' का प्रतीक इसी तरह का है। सौदर्य मूलक विम्बात्मकता से सयुक्त होर यह प्रतीक अपनी ऐतिहासिकताए तक को सक्रमित कर जाता है और कालातीतता की एक सम्मोहक धुध को रचता हुआ अर्थ का विस्तार करता है·

"एक विस्मृति का स्तूप अचेत

ज्योति का धुधला सा प्रतिबिम्ब

और जडता की जीवन राशि

सफलता का सकलित बिम्ब।"

ध्यान देने की बात यह हे कि आदिम मनु के लिए स्तूप का यह प्रतीक ऐतिहासिक कालक्रम की दृष्टि से गलत है लेकिन कविता की सरचना मे वह इस तरह कसा हुआ है कि कालक्रम की बात अप्रासंगिक हो जाती है। उस पर ध्यान ही नही जाता– जब कि उसके अर्थ ग्रहण की प्रक्रिया ऐतिहासिक अनुषगो के बोध से ही शुरू होती है।

अनेक परपरागत प्रतीकों के अर्थ, छायावादी सर्जना के संस्पर्श से उदीप्त हो गए हैं या बदल गए है। 'अधकार' जडता का, अज्ञान और विवेकहीनता का पारपरिक प्रतीक है लेकिन हे अभी निशा उगलता गगन घन अधकार ' के रूप मे संयोजित होकर वह कातरता भरी निराशा का प्रतीक बन जाता है। "दीपक" ज्ञान के प्रकाश और साधना का प्रतीक है

लेकिन महादेवी 'दीपशिखा' मे उसे इन सबके साथ समूचे अस्तित्व का ही प्रतीक बना देती है

"चिता क्या है निर्भय बुझ जाये दीपक मेरा

हो जायेगा तेरी ही करूणा का राज्य अधेरा"

शुचिता व सौदर्य के सास्कृतिक प्रतीक 'कमल' का तो निराला मे अर्थ ही बदल दिया है। उनके लिए वह विकासशील सार्वभौम निष्कलुष मनुष्यता का प्रतीक है ·

'मानव मानव से नही भिन्न

निश्चय हो श्वेत कृष्ण अथवा

वह नही विलभ

भेदकर पक

निकलता कमल जो मानव का

वह निष्कलक

हो कोई सर"

पारपरिक प्रतीको का प्रयोग, निजी प्रतीको की अपेक्षा छायावादी कविता मे काफी कम हुआ है क्योकि वे क्लासिक कविता की विशेषता होती है। स्वच्छन्द कल्पना के युग मे कविता अधिकांशत निजी प्रतीकों की योजन करती है। पारपरिक उपमान जरूर साम्य के आधार पर छायावाद मे प्रतीकवत् प्रयुक्त हुए हैं। पारपरिक उपमान जरूर साम्य के आधार पर छायावाद में प्रतीकवत् प्रयुक्त हुए है। इतना अवश्य है कि इस प्रकार के प्रतीक जहां आर्थ है वहा कवि ने उन्हे अपनी आतरिकता से रंगने की चेष्टा की है और उनका काव्यात्मक उत्कर्ष किया है। यह तथ्य कि संवेदना और

अनुभूति ही प्रतीक का आधार हो सकती है। छायावादी कवि के लिए बहुत महत्वपूर्ण था। इसी को प्रतिपादित करते हुए पत ने कहा है 'यह भी हो सकता है कि कवि अपने अनेक प्रतीको को किसी दार्शनिक एवं साम्प्रदायिक विचारधारा से ग्रहण करे या उस विचार को अभिव्यक्त करने के लिए स्वय प्रतीको का निर्माण करे – परन्तु यहा भी दर्शन की अपेक्षा सवेदना का ही अधिक आग्रह होगा, तभी वह काव्य हो सकता है।

प्रतीको के प्रयोग की सामान्य दिशा देखते हुए छायावादी कवितयो की दो कोटिया कही जा सकती है। पहलये वे है जिनका कृतित्व सहजनुन्भूति केन्द्रित है – प्रसाद और महादेवी। जहा सहजानुभूति प्रधान होती है, वहा शुद्ध और निजी प्रतीको की प्रयोग बहुलता रहती है। प्रसाद के इस कथन कि 'लज्जा का हल्का अचल नीली किरणो से बुना हुआ और सौरभ सना है' से भीतर ही भीतर जो अर्थ छायाए खुलती है उनके आलोक मे इस कथन का तात्पर्य समझा जा सकता है, सूक्ष्म सहजानुभूति अभिव्यक्ति के प्रचलित सांचो मे स्वयं को मूर्त नही कर पाती। फलत अपने मूर्तिकरण की प्रक्रिया मे वह प्रायः प्रतीकों का सृजन करती है।

दूसरी कोटि सवेदन केद्रित कवियों की है। सवेदना का उद्दीपन अपने से भिन्न वस्तु जगत अथवा प्रकृति के सन्निकर्म से होता है। यही कारण है कि सवेदन केद्रित कवियो–जिनकी कल्पना आत्मेत्तर वस्तुगत प्रकृति पर निर्भर रहती है – मे प्रकृति की ओर पर्याप्त रूमान रहता है। निराला और पंत इस दृष्टि से एक दूसरे के समीप दिखाई देते हैं। निराला के प्रतीकोपन, अप्रस्तुतो तथा बिम्बो में जिस तरह वस्तु सानिध्य की तीव्रता

दिखाई देते है– 'कुकुरमुत्ता उसका एक घोर है– उसी तरह पत के अधिकाश प्रतीक भी अवचेतन द्वारा वस्तुगत से लिए गए है।

प्रस्तुत विवेचन का उद्‌देश्य किसी भी प्रकार से छायावादी कवियो या उनकी कविता मे प्राप्त प्रतीको का कोई निश्चित श्रेणी करना नही है। ऐसे किसी भी विभाजन की पूर्णता स्वय मे सदिग्ध भी है क्योकि कविता के प्रतीको का सही अध्ययन उसके आतरिक सदर्भो और प्रतीको की बनावट के आधार पर ही हो सकता है– आरोपित वर्गीकरण के आधार पर नही। यहा हमने केवल इन कवियो की विशिष्ट प्रवृत्तियो का सकेत मात्र दिया है।

छायावाद की साम्य ग्रहण बदली हुई प्रक्रिया के उन अप्रस्तुतो का हम विवेचन कर रहे है, जो छायावादी काव्य में प्रतीको के रूप मे विकसित हुए और उनके अर्थ सप्रेषण के सबसे महत्वपूर्ण वाहक बने। अप्रस्तुतो के प्रतीकत्व का इस रूप मे विवेचन, कई कवियो ने किया है। इसी काव्य मे पहली बार खडीबोली हिन्दी की कविता मे अप्रस्तुतो का प्रतीक के रूप मे इतना व्यापक प्रयोग हुआ। काव्य–भाषा के परिष्कार की इस प्रक्रिया के साथ ही हिन्दी कविता और पारपरिक काव्यशास्त्र के संबंध बदले दिखाई देते है। बाद की हिदी कविता मे तो यह सबध इतने बदले है और समीक्षा के नये औजारो की माग् इतनी तेज आवाज मे उठी है कि कविता को काव्य–शास्त्रीय दृष्टि से देखना सभव यदि हो तो, तब भी उसका कोई औचित्य नहीं है।

सूक्ष्म संवेदनात्मक आधार और विम्ब–विधान की प्रमुखता होने के कारण छायावादी कविता में रूप विकास का ऐन्द्रिय पत्र बहुत प्रबल हो

गया तथा अपमेय और उपमान के बीच की दूरी धट गई। उपमान के महत्व तथा सूक्ष्म अर्थ व्यजना की सामर्थ्य मे वृद्धि का परिणाम यह हुआ कि कवि कर्म के लिए परपरागत अलकार विधान की प्रासगिकता कम हो गयी। साम्य के सूक्ष्म ऐन्द्रिक आधार अप्रस्तुत से ही प्रतीक का काम लिया जाने लगा। छायावादी कविता के सन्दर्भ मे, उपमान और प्रतीक का अन्तर स्पष्ट करते हुए तथा इन प्रतीकवत् प्रयुक्त होने वाले– प्रतीकोपन उपमानो को महत्व स्वीकार करते हुए बहुत पहले जो आचार्य शुक्ल ने कहा था ' प्रतीक का आधार सादृश्य या साधर्म्य नही बल्कि भावना जागृत करने की विहित शक्ति है, पर अलकार मे उपमान का आधर सादृश्य या साधम्र्य ही माना जाता है। अत उपमान प्रतीक नही होने पर जो प्रतीक होते, के काव्य को बहुत अच्छी सिद्धि करते है।

चूकि छायावादी कविता के इन कथित 'प्रतीकोपम' उपमानों के पीछे अधिकाशत आतरिक प्रमाद साम्य की प्रक्रिया रहती है, इसलिए उन्हे उपमेय और उपमान के पारपरिक संबध को दृष्टि से नहीं देखा जा सकता। डॉ रामभूर्ति त्रिपाठी इसीलिए प्रतीक को एक विशेष प्रकार का 'उपमान' न कहकर 'अप्रस्तुत कहते है शुक्ल जी ने प्रतीक को एक विशेष प्रकार का उपमान ही बताया है पर ऐसा मानने मे कहीं–कही अडचन होती है। उदाहरणार्थ 'उषा' को आनन्द का प्रतीक माना गया है। यहा उषा आनन्द का उपमान नही है क्योकि इसमे साम्य की अपेक्षा होती है जो ऊषा मे नही है। वस्तुतः यहा 'उषा' और 'आनन्द' का 'कार्यकाव्य' भाव सबध है, उपमानोश्रेय भाव सबध नहीं। अब यदि उपमान को प्रतीक माना जाय तो उषा का प्रतीक नहीं कहना चाहिये, अतः उपमान के पर्याय रूप मे

प्रयुक्त होकर भी कही उससे व्यापक अर्थ रखने वाला अप्रस्तुत शब्द ही प्रतीक का परिचय ठीक दे सकेगा। दृश्य साम्य पर आधारित प्रतीको का प्रयोग छायावादी कविता मे अपेक्षया कम ही हुआ है क्योकि वे सर्वथा स्थूलाप्रित होते है। जहा कही भी वे अप्रस्तुत सादृश्य की स्थूलता को परिकर किसी सदर्भ सापेक्ष व्यापक अर्थ को वचित कर सके केवल वही पर वे प्रतीक है -

"तरल मोती से नयन भरे

तारे मरकत नील तरी से

सूर्ख पुलिनो सी वरूणी से फेकिल फूल झरे

पारद से अवबोध मोती"

महादेवी के गीत मे, प्रियमुख के लिए 'शशि' और आसुओ के लिए 'तरल' मोती' 'फेनिल फूल' और पारद से 'अनबोध मोती' का प्रयोग सादृश्य के आधार पर हुआ है किन्तु वे केवल दृश्य साम्य की ही व्यजना नही करते बल्कि उससे ऊपर उठकर कवि को मोहक और आत्मीय वेदना का सप्रेषण करते है। 'प्रसाद' के 'आसू' मे भी इस प्रकार के प्रतीक बहुत मिलते है।

धर्म–साम्य पर निर्भर प्रतीक, छायावाद मे प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध होते है। महादेवी का ऐकान्तिक आवेगोवाला प्रेम, निराशा और वेदना का काव्य, वस्तुत ऐसे ही प्रतीको द्वारा संयोजित हुआ है जिनका आकार प्रेम और वेदना नहीं दो अनुभूतियों का साम्य हैं। दीप, शलम, मोती, शूल, अधकार आदि उनके निरतर दुहराये जाने वाले प्रतीक ऐसे ही धर्म–साम्य पर आधृत है। इन प्रतीकों की बिम्ब–विधायिनी क्षमता बहुत प्रबल है किन्तु भावना के

सामर्थ्य को सूक्ष्म स्तर पर व्यजित करने की सक्षमता उन्हे प्रतीक बना देती है। महादेवी के व्यक्तित्व मे ये प्रतीक वहा अनुभूति के अनुरूप कोमल और तरल है, वही निराला ने इनका प्रयोग अपनी उदास चेतना के कारण विराट प्रतीको के रूपो मे किया है। 'राम की शक्ति पूजा' के हतोत्साहित निराश उद्वेलित और सशय से जुडे राम की मनोदशा की अभिव्यक्ति ऐसे ही विराट प्रतीको के माध्यम से हुई है वहा 'अमानिशा' हे सघन अधेरा उगलता हुआ सर्वव्यापी गगन है, निरतर नघाडे लाता हुआ उद्विग्न अनुभूति है। इसी प्रकार जहा राम की हताशा से विक्षुब्ध हनुमान का चित्रण किया गया है, वहा भी इस प्रकार के ध्वसमूलक प्रतीको का भव्य सयोजन है। प्रसाद ने 'कामायनी' और पत ने परिवर्तन मे भी इस प्रकार के धर्म–साम्य आश्रित विराट प्रतीको की सृष्टि की है।

हम देखते हैं कि दृश्य है कि दृश्य और धर्म साम्य पर आधृत प्रतीक किस प्रकार उपमानत्व से ऊपर उठकर प्रतीकार्थ व्यंजन की शक्ति प्रदान कर लेते है। किन्तु इस दशा मे भी यह स्पष्ट हो जाता है कि विशुद्ध दृश्य या धर्म के स्थूल साम्य पर आश्रित प्रतीको के आधार से पर्याप्त भिन्न होता है, चाहे उनकी अर्थव्यजना कितनी ही सक्षम क्यो न हो। प्रभाव साम्य को उभारने वाले इन प्रतीको मे लावा व्यापार अपेक्षाकृत सर्वाधिक सक्रिय रहता है अत· कुछ विद्वानों ने इन्हे लक्षण–मूलक प्रतीक भी कहा है। लेकिन डॉ राममूर्ति त्रिपाठी की मान्यता है कि इन्हे लाक्षणिक प्रतीक न कहकर 'धर्मो प्रतीक' या कुछ इसी तरह का कहना चाहिये। छायावाद के ऐसे प्रतीको का काव्य शास्त्रीयो विश्लेषण करते हुए वे कहते हैं कि इन लाक्षणिक प्रतीको में लक्षणा का कार्य बडा ही चक्करदार है। उदाहरण के लिए हम विचारों में

बच्चो की सास को ले सकते है। 'यह शब्द अग्रेजी के 'इनोसेट ब्रीथ' का हिन्दी रूप है। बच्चो की सास को भोलापन का प्रतीक बताया गया है । भारतीय प्रयोजन वही लक्षण की दृष्टि यदि इस प्रयोग की चीर–फाड की जाये तो वह यो होगी– इस प्रयोग मे विचारो में बच्चो की सास कहकर विचारो को आधार एव बच्चो की सास को आधेय बताया गया है। जो अभिधेमार्थ की दृष्टि से बिल्कुल असंगत है। एत· मुख्यार्थ वैध अतर वाछित अर्थ की प्रतोत्ति के लिए लक्षणा की ही उपासना करनी होगी। लक्ष्यार्थ ऐसा होना चाहिए जिसका मुख्यार्थ से संबध है और जिसमे यथाचुत (आधाराधेय भाव) सबध बन जाये। इस दृष्टि से यह लक्ष्यार्थ हुआ–भोलापन–सरलता–निष्कपटता। यह निष्कपटता मूल वाच्चार्थ से आधाराधेय भाव रूप से सम्बद्ध भी है और विचार के साथ उसका यथाच्युत (आधाराधेय भाव) सबध भी बन जाता है अर्थात विचारो मे निष्कपटता ही रह जाती है। इतना होने पर भी 'बच्चो की सास मे से केवल बच्चो लक्षणा हुई और तब स्वरूप हुआ–विचारो मे निष्कपटता की सांस है। अब निष्कपटता की सांस कब संभव है? अतः सास पड अब भी लक्षण की आवश्यकता रखता है। वस्तुत· 'सांस' पद की लक्षण 'सत्ता' रूप अर्थ मे है क्योकि 'सास' एवं व्यक्ति की सत्ता में द्योत्मोतक भाव सबंध है। इस प्रक्रिया से विचारो मे बच्चो की सास–इस वाक्य का लक्ष्यार्थ हुआ, विचारो में निष्कपटता की सत्ता है। सूक्ष्मता प्रेमी छायावादी कवि ने अपने काव्य मे ऐसे प्रतीको का प्रचुर प्रयोग किया है। इसी विशिष्टता को ध्यान मे रखकर कहे हुए रामचन्द्रशुक्ल के उद्धरण को हम पहले दे चुके हैं कि छायावाद बडी सहृदयता के साथ प्रभाव साम्य पर ही विशेष लक्ष्य रखकर चला हैं

जब अपनी काव्य चेतना के लिए महादेवी लिखती है 'मधुर–मधुर मेरे दीपक जल' या पत लिखते है 'तुम्हारे धुने मे था प्राण', सग मे पावन गगा स्नान तो वे ऐसेस ही प्रभाव साम्य मूलक प्रतीको का प्रयोग कर रहे होते है। प्रसाद ने भी लिखा है –

"ओ मेरे जीवन की स्मृति, ओ अन्तर के आतुर अनुराग
बैठ गुलाबी विजन उषा मे गाते कौन मनोदर राग?"

मोहक कल्पना लोक के लिए गुलाबी विजन उषा का प्रयोग ऐसे ही प्रभाव–साम्य पर आश्रित है। 'आसू' मे इस प्रकार के प्रतीको का अतिशय प्रयोग हुआ है।

छायावाद की रहस्य केन्द्रित कविता मे झिलमिलाहट की अनुभूति को पकड़ने और सप्रेषित करने के लिए व्यजना नमी प्रतीको का प्रयोग, उनके कवियों ने किया। जाह कोई वस्तु अपने सामान्य उपलक्षण का तिरस्कार करके अथवा उससे आगे बढकर अपने से असम्बद्ध प्रतीत होती हुर्अ किसी अन्य वस्तु की ओर सकेत करती है, वहा उसे व्यजना गर्मी प्रतीक समझना चाहिए। ऐसी प्रतीक व्यजना मे छायावाद की रहस्य कल्पना का हाथ है। छायावाद की रहस्याद्रमूतिपरक कविताओ में इन व्यजना गर्मी प्रतीको का विश्व प्रयोग हुआ है। इस रहस्य भावना के अतिरिक्त श्रृगार के सूक्ष्म एव साकेतिक चित्रण के लिए भी छायावादी कवियों ने ऐसे प्रतीकों का प्रयोग किया।

इस प्रकार के प्रतीकों की अतिरिक्त छायावादी कवियो ने विशुद्ध प्रतीतिमूलक, वैचारिक अवधरात्मक प्रतीको का भी प्रयोग अपने कृतित्व मे किया है, यद्यपि के अपेक्षाकृत बहुत कम है। काव्य चेतना में क्रमश· विकास

के साथ–साथ, जब इन कवियो का चितन भी एक विशिष्ट रूप ग्रहण करने लगा तो उनमे इस प्रकार के इस प्रकार के प्रतीको का प्रयोग करने की प्रक्रिया व प्रवृत्ति भी बढी। कामायनी के पात्रो की प्रतीकात्मकता तथा पत के निरतर 'सूक्ष्म' 'चैतन्य और उर्ध्व' होते हुए काव्य मे ऐसे प्रतीको के सघन प्रयोग मे इस बात को देखा जा सकता है। आगे, कुछ उदाहरण मात्र देख लेना उपयुक्त होगा। कामायनी मे चरित्रो की दुहरे स्तर है और वे अलग से प्रतीकात्मक अर्थ की व्यंजना भी करते हैं। वही श्रद्धा है–हृदय की अनुकृति वाहय उदार और उडा है जो अपने काव्य मे भव्य प्रस्तुतीकरण मे भी नारी लावण्य को व्यजित नही करती–वरन् जो कि 'विखरे' अलमे जो तर्क जाल– चरणों मे थी गति भी ताल' के साथ ही अपने प्रखर 'बुद्धि' स्वरूप की व्यजना कर देती है। मनु, मानव, किलाता कुलि तथा 'लज्जा' 'काय' आदि अशरीरी पात्र भी प्रतीकात्मक अर्थ की व्यजना करने के कारण विशिष्ट है 'कामायनी' मे प्राप्त होने वाले शैव मत के 'त्रिपुर' जैसे प्रतीक या निराला की राम की शक्ति पूजन मे शक्ति साधना से सम्बद्ध चक्र, त्रिकुटी आदि तांत्रिक प्रतीक भी इस रूप में प्रतीतिमूलक अवधारणात्मक प्रतीक ही है।

अपने संक्षिप्त प्रगतिवादी दौर में पत ने साम्य की विचारधारा से प्रेरित होकर एक नयी प्रतीक योजना विकसित करने की चेष्टा की और कृषक श्रमजीवी ताज जैसी अनेक कविताओं में उसके माध्यम से एक अपेक्षाकृत स्थूल अवधारणा को संप्रेषित किया। लेकिन धन्य मार्क्स चिर तमाच्छम पृथ्वी के उदय शिखर पर। 'तुम त्रिनेत्र के ज्ञान चक्षु से प्रकअ हुए प्रलयंकर' जैसी घोषणाओं के बावजूद यह कवि के वास्तविक मिजाज के

अनुकूल काम न था। यहा कारण है कि इन उद्‌बोधनात्मक विचारो की धुन के बजाय, पत की इस दौर की कविताओं के प्रतीको मे उनकी छायावादी 'बीजा' का चेहरा ही उभरता है ·

'कार्ता अन्धकार तन–मन का

नव प्रकाश के रजत स्वर्ण से

बुनो तरूण पर नव जीवन का।''

पूरी मानव जाति को मजदूर मे प्रतीकीकृत करता कवि उसका आवाहन करता है कि वह अपने अस्तित्व पर छाये विषमता के 'अधकार' को धुन गले और नयी चेतना के 'प्रकाश' के सोना–चादी सूत से समता करे, स्वरूप, नये जीवन का वस्त्र बुने। अवधारणा के नयेपन और प्रतीको मे उसके संप्रेषण के बावजूद प्रतीक छायावादी ही है। उनके अर्थ की जकडन यही बताती है कि कवि की सवेदना मे कोई गुणात्मक परिवर्तन नही हुआ है और उनका अर्थगत नयापन उनमे कवि द्वारा बतात् ठूसा गया है।

पत का परवर्ती काव्य ही ऐसे प्रतीको को लेकर चला है जिनका आधार कोई कलात्मक उपकरण नही वरन् विचार है – प्रगतिवादी विचार वाली और रचनाओ की तुलना मे वह 'सूक्ष्म' अवश्य हो गया है। 'अतिया' जहा तक पहुचते–पहुचते कवि अरविन्द के अध्यात्म–दर्शन से पूरी तरह अभिभूत हो चुका है–मे यह प्रवृत्ति विशेष विशेष रूप से दृष्टिगत होती है। यहां प्रतीक भौतिकता का अति भ्रमण कर, मन की 'उर्ध्व' स्थितिका चित्रण करते है ·

'' यह अतिमा

मन से उठ ऊपर

पख खोल शोभा क्षितिजो पर,

स्वर्ण नील आरोहो को तर

गध शुभ्र रज सासो मे भर

गीतो के नि:स्वर झरनो मे

स्वज द्रवित सुर धनु वर्णों मे

अतर शिखरो को नहलाती।"

कृति की भूमिका मे पत स्पष्ट कर चुके है कि 'अतिमा' के प्रतीक का प्रयोग उन्होने अतिक्राति अथवा महिमा के अर्थ मे किया है। लेकिन उनके प्रगतिवादी काव्य की तरह यहां भी यह दृष्टक है कि इस समूची प्रतीकात्मकता के मूल मे भी छायावाद की रागात्मक रमणीयता और आसक्ति ही विधमान है।

इस प्रकरण की समाप्ति के पूर्व छायावादी काव्य मे अतिम चरण मे विशेषकर निराला की कविताओ मे–अपने पैर पसारते उन प्रतीको का उल्लेख भी उचित होगा। जो अपने भीतर वाह्य जगत की हलचलो को समेटे हुए है। ये प्रतीक चरित्रो के रूप मे कविताओ मे आये है। अपनी यथार्थमूलक चरित्रगत काव्यकता मे वे प्रतीकत्व धारण करते हैं। 'तोडती पत्थर' की मजदूरिन की पीडा 'कुकुरमुत्ता' के गद्योत्मक संसार में व्यापकता होती है जहां नाई, धोबी, तेली, तम्बोली, कुम्हार, फीलवान, ऊंटवान, गाडीवान। एक खासा हिन्दू–मुस्लिम समाज का खानदान। एक ही रस्सी से बधा। काटता था जिंदगी गिरता–सधा। नये पत्ते की अलग–अलग कविताओ मे बाहरी जीवन के यथार्थ के दबाव से ये चरित्र साफ–साफ दो हिस्सों में बंट गये हैं। एक हिस्से मे मौका परस्त समाजवादी श्री गिडवानी,

बडे भारी नेता पडित जी, काग्रेसी जमीदार· डिप्टी साहब, थानेदार, और जमीदारो के लठैत है। दूसरे हिस्से मे बबलू अहीर है, मभी कुम्हार, कुल्ली तेली, भचुआ चमार है, महंगू और लकुआ है और उनके अपने छिपे हुए लेखक लोग भी है जो सही वक्त की प्रतीक्षा कर रहे है। तोडती पत्थर का पथराया हुआ करूण जीवन, तथा गुरू हथौडे और अट्टालिका की बीच का सूक्ष्म विरोध, इन कविताओ के ठोस प्रामाणिक भौगोलिक परिवेश मे इन पात्रो के माध्यम से मुखर हुआ है जो स्पष्ट रूपाकारो वाले स्थानीय चरित्र भी है और घटुतर सामाजिक यथार्थ के प्रतिनिधि प्रतीक भी। छायावादी कवियो की रचनाओ मे इन प्रतीको की सख्या बहुत कम है, लेकिन एक सौदर्यपूर्ण अभिजात काव्य श्रृगार के ससार के दरवाजे पर उनकी इस मदेसक्षीण उपस्थिति मे भी अगली कविता के सवेदनात्मक विकास की दिशा को पकडा जा सकता है।

अध्याय —4

महादेवी के काव्य में प्रतीकों का अध्ययन

हिन्दी कविता मे महादेवी की रहस्योन्मुख प्रेमानुभूति को मान्यता दी गयी है। उन्हे बार—बार आधुनिक युग की मीरा के विशेषण से अभिहित करके उनकी अनुभूति को मध्यकालीन भक्तो और रहस्यवादी साधक कवियो की अनुभूति और तडप के समान धरातल पर स्थापित करने का प्रयास किया गया है। स्वय महादेवी ने भी अपने लेखो में खुद को प्राचीन और मध्यकालीन भारत की साहित्यिक एवम दार्शनिक परम्परा से जोडकर प्रस्तुत किया है। यहा इस सम्बन्ध में फिर से किसी विवाद मे न पड हम उनके इस स्वीकृत रहस्यवादी कवि के प्रतीको का ही विशलेषण कर रही हूँ।

जैसा कि पहले भी निर्दिष्ट किया जा चुका है। "रहस्यवाद की भाषा ही प्रतीको की भाषा होती है।" और इस प्रकार प्रत्येक रहस्य—दृष्टा कवि अन्ततः प्रतीकवादी होने के लिए बाध्य है। महादेवी इस बात का जीवत उदाहरण है। उनके रहस्यपरक गीत, प्रतीकों की भाषा मे रचे गये है। अपनी और असीम की या थोडा स्थूल होकर कहे तो आत्मा और परमात्मा का मूल प्रेम लिप्सा और कवि को अपनी परोक्षानुभूति उनकी कविता में प्रतीकों के ही माध्यम से अभिव्यक्त हुई है। आध्यात्मिकता के धरातल से सृजनात्मकता के धरातल तक की हर यात्रा में प्रतीक सदा उनकी अनुभूति को अधिकाधिक सौन्दर्य परक बनाते हुए गए हैं। — और यही कारण है कि

महादेवी का काव्य मात्र कविता के धरातल से देखने पर भी निर्दोष और शुद्ध प्रसगवश यहा महादेवी काव्य मे 'आध्यत्मिकता ' पर भी एक सक्षिप्त दृष्टि डाली जा सकती है। इस प्रबन्ध के पहले अध्याय मे हमने सृजन प्रक्रिया के सन्दर्भ मे मनोवैज्ञानिको फायड और चुग के विचारो का विवेचन किया है। फायड ने तो समूचे सृजन को ही दभित अचेतन की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति माना है। कविता के प्रतीक इस सृजन को सौन्दर्यपरक विवृद्वि प्रदान करते है। युग ने मानोशक्ति या लिविडो के एक पद मे आध्यात्मिकता की चर्चा की है। लिविडो के रुग्ण और खण्डित होने पर प्रतीक बिखर जाते है तथा उनकी शक्ति प्राय· नष्ट हो जाती है। महादेवी को देखने का एक कोण यह भी सम्भव है। ऐसा देखने पर उनमे प्रतीकाच्छन्न कामनात्मक अभिव्यक्ति पायी जा सकती है। उदाहरणार्थ "हे नम वीणान्वलियो तुम दनण भर को बुझ जाना मेरे प्रियतम को माता हे तम के पर्दे मे आना—यहा हुई इच्छा की कसमसाहट खोजी जा सकती है। लेकिन महादेवी मे शारीरिकता का इस सीमा तक अभाव है जिस तक पहुच कर यह इच्छा उदात्त होकर अपार्मित हो जाता है। यह भावना लौकिक नहीं रह पाती प्रतीकीकरण के साथ ही उसका उदात्तीकरण भी हो जाता है।

महादेवी की कविता में दर्शन की अनुभूति के धरातल पर ग्रहण किया गया है फलतः उनके प्रतीक जहां एक दिशा विशेष के सूचक है वही उनमें भाव की दार्शनिकता तथा अनुभूतियों के आत्मीय आवेग का एक घुला—मिला रूप भी मिलता है असीम और निरपेक्ष की प्राप्ति के लिए जिस आध्यात्मिक और अंतरंग सम्बंध की अवधारणा कवि ने की है उसके मूल

बिन्दु मे साधिका का 'दीपशिखा' जैसा मन है जो झंझा से और प्रलय तक से तटस्थ है "जलधि कारा तोड़कर अब गा उठी उन्मूल आधी । उगलियो की ओट मे सुकुमार सग सपने बचा लू। सब बुझे दीपक जला लू "। दीपक के सतत प्रकाश मे पिघलती हुई एक सुनहरी चेतना है जो भाव को उदास करती है महादेवी की रचना ससार मे दीपक की तरह सर्वाधिक आवृत्त प्रतीक है। शाश्वत चेतना समूचे अस्तित्व का प्रतीक जिसका प्रकाश साधना के पथ को आलोकित करता रहता है। यही शक्ति है जो यहा निराशा या मृत्यु के शोक से बचाती है।

चिता क्या है हे निर्मम बुझ जाए दीपक मेरा

हो जाएगा तेरी ही करुणा का राज्य अधेरा।

दीपक के ही सामान्तर वीणा तार शलभ आदि ऐसे हो प्रतीक है जो आत्म चेतना के आखण्ड प्रवाह और शैली को रुपायित करने अथवा असीम के सापेक्ष आत्म दर्शन के स्वरुप को अभिव्यक्त करने के लिए महादेवी के काव्य मे बार–बार दोहराए गये है। लेकिन यहा यह दोहराव सदा वीणायुक्त नहीं होता। नए सन्दर्भो या कटु प्रयोगों से जोडकर उन्हे निर्जीव होने से बचा लिया जाता है। अनुभूतिगत सीमा ने उन्हे एकोन्मुखी अवश्य बना दिया है। लेकिन अपेक्षित भाव के सप्रेषण में वे सकल रहते हैं।

महादेवी के प्रणयमूलक रहस्य प्रतीकों का आधार सदैव एक निजी सम्बन्ध है। वे शाश्वत असहय की अखण्ड सुहागिनी अमर प्रेमिका है। निरपेक्ष असीम उनमे सापेक्ष होकर प्रियतम हो जाता है।, हालांकी यह प्रिय भी अशरीरी और अपार्थिव ही है। मुस्काता सकेत भरा– नम। आलि से क्या

प्रिय आने वाले है ? इस प्रियतम मे उनका अटल विश्वास उन्हे तम के पार जाने के लिए प्रेरित करता है और उनके विषादमय विरह को एक मौन और आकुल प्रतीक्षा मे ढाल देता है। यह आकुलता और पीडा जिसे महादेवी के सतर्क कवी ने हर बार एक आध्यात्मिक स्तर प्रदान किया है, चातक, पिक आदि प्रतीको के माध्यम से व्यक्त हुई है।

महादेवी का साम्य असीम है किन्तु उनकी लालसा ,उसे नए रुप देती रहती है। मेरे छोटे जीवन मे देना न तृप्ति का कण भरा रहने दो प्यासी आखे भरती आसू के 'सागर'– प्यासी आखो मे 'सागर' भरने की अतृप्त ही रहने की यह आकाक्षा , निष्ठा , साधना आत्मनिर्भर उल्लास और अन्तर्दृष्टि के विश्वास का प्रतीक है। वैसे दूसरी जगह, अपने प्रिय के साथ उनका एक अद्वैतमय सम्बध भी है प्रिय मुझमे भी खो गया अब दूत को किस देश मे भेजू इस अमूर्त अनुभूति को वे स्पष्ट अनुभव करती है– तब जब दिशा को हलके चादनी मे धुलती रहती है, केसर के सुरभिमय जान फैले होते है,वृक्षो का सगीत पर परा होता है– सदा उन्हे उसी अमर प्रियतम का अमर राग सुनाई देता रहता है। इस रहस्यमय प्रेमानुभूति की अभिव्यक्ति के लिए प्रकृति से प्रतीक नही लिए गए है वरन प्रकृति को ही उस सदा का प्रतीकवत बना दिया गया है। इस सदर्भ मे बाद लेयर के एक सा सानेट 'कारेस पाण्डेन्सेज' का उल्लेख करना अनुपयुक्त नहीं होगा जहा सम्पूर्ण प्रकृति को एक मन्दिर के रुप मे परिकल्पित किया गया है एक ऐसे प्राकृतिक मन्दिर के रूप मे वृक्ष जिसके जीवत स्तम्भ हैं। जब प्रतीकों के इस जंगल के बीच में से होकर हवा बहती है तो अस्फुटस्वर उच्चारित होते हैं। कवि अपनी विशिष्ट सामर्थ्य के कारण इन शब्दो को

पकडने मे सफल होता है क्योकी सम्पूर्ण सृष्टि मे एक प्रतीक भाव होता है और प्रकृति के हरेक उपादान का एक आध्यात्मिक काव्य के साथ अपना विशिष्ट सम्बन्ध होता है। वाल्तेयर के लिए भी सम्पूर्ण दृश्य जगत एक आध्यात्मिक यथार्थ का दृश्य सकेत था। और यद्यपि महादेवी की सवेदना और उनकी कविता का सत्य वाल्तेयर को सवेदना और सत्य के दूसरे छोर पर स्थित है तथापि यह समता स्वय मे दृश्टव्य हो सकती है।

प्रकृति के लिए सभी प्रतीक महादेवी की कविता मे सौन्दर्यमूलक है और उनका प्रयोग अधिकाशत अनन्त विरह और उसकी उस मधुर पीडा की व्यापक अभिव्यक्ति के लिए हुआ है जिसने उनके कवि को अखण्ड सुहागिनी का स्वरुप प्रदान किया है। यो तो सभी छायावादी कवियो ने प्रकृति– प्रतीको का विपुल प्रयोग अपनी रचनाओ मे किया है लेकिन इनमे से दो – निराला और महादेवी की अपनी अलग पहचान है। निराला के प्राकृतिक प्रतीकों मे पौरुष की चरम उर्जा है– जैसे बादल राग मे – और महादेवी मे वे एक स्त्री की आसक्ति कमनीयता और सकोच से प्रेरित है। महादेवी अन्तर्मुखी सहजानुभूति की कवि है अत उनके सभी प्रतीको मे निर्लिप्त विशुद्वता और आत्मपरकता मिलती है।

महादेवी के कविता मे चेतना और प्रेम की अनुभूतियो के सदर्भ में रामचन्द्र शुक्ल ने प्रामाणिकता के सवाल को उठाया गया था कि कहा तक वे वास्तविक अनुभूतियां है और कहा तक की रमणीय कल्पना है यह नही कहा जा सकता । हमारे लिए इस सवाल को प्रासंगिकता , महादेवी की काव्यभाषा के परिप्रेक्ष्य में है– विशेषकर इस प्रति प्रश्न के परिप्रेक्ष्य में क्या

कारण है कि महादेवी अपने प्रतीको मे बध गई वही गोल– गोल घूमने लगी।

महादेवी की कविताए एक अन्तजर्गत के एक–पक्षीय सवाद है। उनका रचनात्मक अनुभव– उसकी करुण वेदना उसी अन्तजर्गत मे उत्पन्न होकर उसी मे विलीन हो जाते है। कविताओ मे धनीभूत सगठन करने वाली यह शक्ति ही महादेवी के काव्य की सीमा भी है। उनकी ये अनुभूतिया अपने अस्तित्व को प्रामाणित करने वाले ठोस आलम्बन का या विशिष्ट भाव प्रसग का कोई साक्ष्य नही देती। यह अनुपस्थिति सवेदन वृत्त की सीमित करती है और कविता की मात्रा को , उसके प्रतीको को रुढ करती है। महादेवी की कविता मे इसी कारण एक सीमा के बाद विकास रुक जाता है और वह गोल– गोल घूमने लगती है। यह नही की अन्तर्जगत की कविता मे सवेदनात्मक गहनता नही होती प्रेम और सौन्दर्य को ही केन्द्र मे रखकर रची गयी उनके समकालीन प्रसाद जी की ओर परवर्ती शमशेर बहादुर सिह की निजी कविताए उत्कृष्ट विकासशील सर्जनात्मकता का प्रमाण है। लेकिन निजी ससार को कविता के लिए, जैसा कि आर्किबाल्ड मैक्लोश ने भी कहा है अपने स्वर की प्रामणिकता को सिद्व करना बेहद जरुरी होता है। स्वर की यह प्रामणिकता भाषा को उस बहुस्तरीयता से उत्पन्न होती है जो कवि के अन्तर्गत और रचनात्मक अनुभव के तनाव का परिणाम होती है। महादेवी मे अनुभव और अन्तजर्गत मे एक शात एकरुपता है। सभवत इसीलिए आचार्य शुक्ल ने उनकी रचनाओ मे वास्तविक अनुभूतियों के बजाय अनुभूति को रमणीय कल्पना की बात की है।

इसी बात का एक दूसरा पहलू भी है। महादेवी तक आते–आते छायावाद का खमीर चुक चला था। अब सिर्फ विशेषीकरण रह गया है कुछ लय गलियो का कुछ रूढ भाव सवेदनाओ तथा रुकान का यह विशेषीकरण महादेवी के हाथो से हुआ। महादेवी की कविता छायावाद की सारी शब्दावली का सन्दर्भ ग्रन्थ है मधुम, मलयज, दीपक, कलिया, पलके, कलके, अज्ञात ,हाहाकार ,कुमार सुकुमार , रश्मि, हिलोर ,विजन, मधू, उच्छ्वास, आसू, खुमार ,विषाद, आसव, हाला, प्याला, इसपार, असीम, नाविक, उसपार इत्यादि – वही–वही भाव लगभग उन्हीं–उन्ही शब्दों – उपकरणो के साथ थोडे हेर–फेर के साथ दुहराए जाते है। महादेवी के सवेदनशील अन्तर्गत छायावाद के पारपरिक अनुभव लोक को ही रहस्य की दिशा मे किचित और झुकाकर आत्मसात् किया और उसे स्त्रियोचित घरेलूपन तथा अलकृति का सस्पर्श देकर अपने कवि व्यक्तित्व की रचना की यह आकस्मिक नही है कि महादेवी को अनेक पक्तियां उनके अग्रज छायावादी कवियो की याद दिलाती है। निराला की प्रसिद्व कविता ''तुम और मै'' की पृष्ठभूमि पर रची गई निम्नलिखित एक उदाहरण है–

''मे अर्म्मि विरल

तू बुंग अचल, वह सिंधु अतल

बाधे दोनो को मैं चल–चल

धो रही द्वैत के सा केतव'' ।

ऐसे ही आंसू के छन्द देखा बौने जल निधी का। शशि छूने का ललचना को छाया , काफी दूर तक यहा भी है–

"शशि छूने को मचली सी

लहरों का कर–कर चुम्बन

बेसुध तम की छाया का

तरना करती आलिगन"।

सीमित अनुभव लोक और सवेदन वृत्त के कारण महादेवी की कविता मे बिम्ब रचना की और कम और एकोन्मुखी प्रतीको की योजना की ओर अधिक ध्यान दिया गया है। ये सूक्ष्म एकोन्मुखी प्रतीक उनकी कविता का सौन्दर्य है और रहस्यपरक अनुभूतियो की व्यजना मे साक्ष्य भी है। लेकिन चूकि वे इन्द्रीय बोध को बेध नही पाते इसलिए आकृति बहुलता के साथ वे महादेवी की परवर्ती कविता मे रुढ भी होते जाते है। कवि और उसने प्रतीको के दोनो के विकास के लिए यह आवश्यक है कि काव्य–भाषा की संवेदन परिधि को निरंतर बढाते चला जाए और उससे जटिल अनुभवो को अधिकाधिक ऐन्द्रिय बनाने का काम लिया जाए। इसी स्थिति मे कविता आगे बढती है और प्रतीक रुढ होकर मरने से पहले नए भाव चित्रो के रुप मे पुन जीवित– विकसित अर्थ से समानवित होते है। महादेवी को जटिल अनुभवो के साथ अपना अतिइन्द्रीय आत्मीय ससार अधिक प्रिय है जिसके सारे समीकरणों से वे अच्छी तरह परिचित है। इसीलिए आत्मीय अतजर्गत को पहचान देते हुए भी, और अपने तरल व्यक्तित्व के बावजूद उनके प्रतीक–उनकी समूची कविता एक सरलीकरण की दिशा में आगे बढता हैं। यह बात विरोधाभाषपूर्ण लगती है यह भी सही है कि महादेवी के विरह, मिलन और साधना,– जिनको लेकर उनके

अधिकाश प्रतीक रचे गए है– काव्य–भाषा के स्तर पर एक प्रिय छायाभरे ससार की स्मृति को टटोलने, उसे वर्तमान मे पुर्नजीवित करने या रागारुढ भविष्य कल्पना मे परिवर्तित करने की चेष्टा है दार्शनिक स्तर पर वह भले ही कुछ और हो। ध्यान से देखा जाए तो रहस्यपरक शब्दावली के बावजूद यह वही ससार है जो महादेवी के बाद– छायावाद उत्तरकालीन धारा मे बच्चन जैसे कवियो की रचनाओ मे पुष्ट हुआ। यहा वह धुध के पीछे है और निर्मित हो रहा है।

(क) महादेवी के प्रतीक–विधान के स्रोत :

महादेवी जी ने मुख्यत· निम्नलिखित भावो एव विचारो को व्यक्त करने के लिए प्रतीको का प्रयोग किया है––

(1) जीवन–सम्बन्धी विचार।

(2) दुख, सुख, वेदना, पीडा, आनन्द, स्वप्न, आदि हृदयस्थ भाव।

(3) प्रियतम की कल्पना।

(4) अलकरण हेतु।

महादेवी के प्रतीक –विधान पर निम्नलिखित साहित्य परम्पराओ का प्रभाव पडा है–

(1) ऋग्वेद से मरूम और दृष्टा की भावना –प्रधान गीत।

(2) उपनिषद् का रहस्य –ज्ञान।

(3) बुद्धि का क्षणिकवाद और दु·खवाद।

(4) कबीर का काव्य।

(5) भवभूति की एकोरसेव करूणमेव वाली कला।

(6) कालिदास का काव्य और उसकी ऐश्वर्य –माधुर्य प्रधान पृष्ठभूमि।

आलोचको की सम्मति है कि महादेवी जी पर रविबाबू का प्रमुख प्रभाव है जो भी हो, महादेवी जी का प्रतीक–विधान सर्वथा सुष्ठ और सफल है।

महादेवी जी की कविता मे मुख्यत चार प्रकार के प्रतीक मिलते है–

(1) प्राचीन सस्कृति का ब्राहमण धर्म एव उपनिषद के प्रतीक,

इन प्रतीको मे महादेवी जी ने सूर्य ,कमल, तारे, चन्द्रमा, रात, दिन, ऊषा, सन्ध्या, अहरोत्र, शख, मुरली, सम्पुट, इत्यादि का मुख्यत प्रयोग किया है। इन प्रतीको को रवीन्द्र साहित्य ने लोकप्रियता प्रदान की थी। महादेवी जी ने भी इनके बडे ही मधुर प्रयोग किए है । यथा–

''नीलम मरकत के सम्पुट दो, जिनमे बनता जीवन –मोती''

'सीय' माता–पिता की प्रतीक के अर्थ मे प्रयुक्त है। इसी प्रकार प्रचीन साहित्य मे शख विजय ज्ञान एव युद्ध का प्रतीक है। महादेवी जी ने 'शख' का प्रयोग युद्ध के प्रतीक रूप में किया है ।

शख मे ले नाद मुरली मे छिपा वरदान।

दृष्टि मे जीवन मे अधर सृष्टि में ध्वनिमान।

मध्यकालीन निर्गुण

भक्तो (संतो और सूफियों) के प्रतीक संतो ने परमात्मा और आत्मा के प्रेम को व्यक्त करते हुए पति–पत्नी, अभिसार, कीर, पिन्जर सेज इत्यादि प्रतीको का प्रयोग किया है। सूफियो ने अपने 'इश्क' और 'हाला'

कि दशा को व्यक्त करने कि लिए प्याला, साकी, घूट इत्यादि प्रतीक अपनाये है।

महादेवी जी ने सतो और सूफियो के प्रतीक को अपनाये है परन्तु कुछ भिन्न प्रकार से। सन्तो की दृष्टि से परमात्मा भी एक मात्र पुरूष है और सब उसकी पत्नियॉ है।

दुलहिनि गॉवहु मगलाचार,

हम घरि आये हो राजा राम भरतार

(कवीर)

सत लोग इस सम्बन्ध को अभिनय रूप ही स्वीकार करते है। परन्तु महादेवी जी इस सम्बन्ध को वास्तविक मानती है। इसी प्रकार सत साहित्य मे प्रिय–मिलन स्थान के अर्थ मे 'सेज' के प्रतीक को प्रयुक्त किया जाता है। कबीर ने कहा है–

"सूली उपर सेज पिया की, किस विधि सोना होय।"

महादेवी जी ने भी 'सेज' के प्रतीक का प्रयोग किया है परन्तु दूसरे प्रकार से वह प्राणो की सेज नही, जिसमे बेसुध पीडा सोती।

शुक्लविसारिका मुग्धा वसन्त रजनी की श्रृंगार–सज्जा देखिए–

तारकमय नव वेणी बन्धन

शीश फूल कर शशि का नूतन

****

मर्मर की सुमधुर नुपुर ध्वनि

अलि गुजित पद्यो कि किकिणि

भर पद गति मे अलस तरगिणि

तरल रजत की धार बहा मृदुस्मति से सजनी ।

(नीरजा)

कबीर सतो द्वारा प्रयुक्त कीर और पिन्जर के प्रतीक को भी महादेवी जी ने प्रयुक्त किया है –

"कबीर का प्रिय आज पिन्जर खोल दो।"

तुलना कीजिए कबीर ने इस प्रयोग के साथ पच तत्व का बना पिजरा। कबीर ने भी पीजरा को शरीर के प्रतीक रूप प्रयुक्त किया है। इसी प्रकार महादेवी जी की कविता मे सूफी प्रतीको, साकी, प्याला, आदि का प्रयोग भी पाया जाता है।

छिपाकर लाली मे चुपचाप सुनहला प्याला लाया कौन

घूंट मे पी साकी कि साध सुना फिर – फिर जात है कौन।

(ख) छायावादी कवियों के प्रतीक :

छायावादी कवियो ने युगानुरूप अर्थ परिवर्तन करके प्राचीन प्रतीकों को नए रूप मे प्रयुक्त किया है। वीणा, झकार, कली, मधु, क्षितिज, आकाश, मेघ, वर्षा, प्रात, सध्या, यामिनी, आदि ऐसे ही प्रतीक हैं। छायावादी कवियों के प्रतीक्र प्रकृति से लिए गये हैं। कली, पवन और भ्रमर को क्रमशः सुन्दरी, प्रेमी, नायक, और सामान्य सुख वाले गृहस्थ के प्रतीक के रूप में प्रयुक्त

किया गया है। महादेवी जी ने भी प्रसाद पन्त और निराला की तरह इन प्रतीको को इन्ही अर्थों मे प्रयुक्त किया है—

हस देता जब प्रात, सुनहले आचल मे बिखरा रोली
लहरो की बिछलन पर जब मचल पडती किरणें भोली
तब कलिया चुपचाप उठाकर पल्लव के घुंघट सुकुमार
छलकी पलको से कहती, कितना मादक है ससार
देकर सौरभ दान पवन से कहते जब मुरझाए फूल
जिसके पथ मे बिछे, वही क्यों भरता इन आखो मे धूल?
अब इनमे क्या सार, मधुर जग गाती भौरो को गुजार
मर्मर का रोदन करता है कितना निष्ठुर है ससार ?

महादेवी जी ने भ्रमर का प्रयोग प्राचीन परम्परानुसार मुक्त आनन्द की विलास की चिन्ता करने वाले के अर्थ मे किया है।

छायावादी कवियो के मध्य महादेवी जी की प्रतीक योजना को समझने के लिए यह कथन पर्याप्त है कि इस तरह चारो कवियो के प्रतीको मे साम्य होते हुए भी उनकी दृष्टि में भेद है। महादेवी जी ने अधिक बौद्धिकता के साथ प्रसाद ने साधनापरक दृष्टि से और निराला ने शुद्ध मादकता और श्रृगार की दृष्टि से इन प्रतीकों का प्रयोग किया है। पन्त जी ने निराला विवेकवादियों की दृष्टि से इनका प्रयोग किया है। यद्यपि चारो कवि चाहते हैं, कि लोग उन प्रतीकों से उंचा आदर्श ग्रहण करें तथापि चारो के प्रतीकों में दृष्टि भेद स्पष्ट लक्षित होता है।

(ग) विशिष्ट प्रयोग :

महादेवी जी ने कुछ विशिष्ट प्रतीको को प्रयुक्त किया है। इन प्रतीको पर रवि बाबू का भी प्रभाव है। इनके व्यक्तित्व की भी छाप है। जो भी हो इन प्रतीको मे बदली, साध्यगगन, यामिनी, दीप, सरिता, बादल, गोधूली, तारा, ऊषा, इन्द्र, झकार, लौकिक के प्रति विराग एव अलौकिक के प्रति अनुराग सेवा की साधिका आत्मा करूणा और प्रेम की वाहिका करूणा के रखवाले करूण मिलन बेला बिल्कुल असमर्थ विवेकवादी राग मिलन की स्मृतिया हृदय के स्पन्दन तथा अनन्त के मिलन के मार्ग की बाधा विपत्तियो की प्रतीक है।

प्रतीक रूप में महादेवी जी ने 'दीपक' का सर्वाधिक प्रयोग किया है। जैसे तुलसी प्रेम या भक्ति का आदर्श है। चातक और कबीर के प्रेम का आदर्श है। सती एव सूरमा वैसी ही महादेवी जी के प्रेम साधन का प्रतीक है। दीपक उस आलोक पिण्ड सूर्य की साधना करता है। जिसका अरूण भाव चुमते ही कण–कण में मधु के लिए निर्झर से सजल गान बह निकलते है। दीपक अपने ही हृदय के अक्षुण्य स्नेह मे तिल–तिल कर राख होता रहता है। और साथ ही अन्धेरे पथ को आलोकित करता रहता है। यथा–

सिखा दो न नेही की रीति, अनोखे मेरे नेही दीप।

आगे चलकर साधिका महादेवी स्वंय दीपक बन जाती हैं–

शलभ मैं शापमय वर हूं किसी का दीप निष्ठुर हूँ।

अगार मेरी रंगशाला नास मे जीवित किसी की साध सुंदर हूँ।

दीपक के बाद ध्यान जाता है रात पर। रात पर यामिनी उस नारी का प्रतीक है जो चिर–विरहणी है जो अपने प्रिय की याद मे सतत रूदनशील है। जब वह अपने पति से दिल से मिल जायेगी, तो उसका अस्तित्व ही समाप्त हो जायेगा। महादेवी जी ने रात्रि द्वारा विरह की व्यजना करने के लिए कई गीत लिखे है –

वसन्त रजनी रूपी मिलन यामिनी विभावरी सुकेशनी सपने जागती आदि एक स्थान पर कवयित्री ने यामिनी का प्रयोग सेवा की साधिका का प्रतीक बना कर किया है–

आ मेरी चिर मिलन यामिनी।

तममयी घिर आ धीरे–धीरे

*****

हौले डाल पराग बिछौने

आज बढे कलियों को रोने

दे चिर चचल लहरे सोने

जगा न निद्रित विश्व पालने

विधु प्याले से मधुर चॉदनी।

महादेवी जी ने कतिपय प्रतीको को विभिन्न स्थलो पर विभिन्न अर्थो मे प्रयुक्त किया है। अथवा यह कहिए की एक ही प्रतीक को एक से अधिक अर्थों में प्रयुक्त किया है। उदाहरण के लिए विद्युत प्यास का प्रतीक पर अलंकरण के हेतु विद्युत का कंकण विद्युत का स्पर्श पाश आदि में प्रकाश के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

प्रतीक का अर्थ रूपक के द्रारा खुलता है। जैसे कवयित्री ने धन के रूपक द्वारा अपने जीवन की करूणा निर्मलता विकलता और नश्वरता को व्यक्त किया है—

मै नीर भरी दु:ख की बदली

पलको मे निर्झरिणि मचली

राज कण पर जलकण हो बरसी

या जीवन अकुर बन निकली।

यहा बदली करूणा पूर्ति सेवामय जीवन की प्रतीक है। इसी रूपक के सहारे निर्झरिणी का प्रतीकार्थ खुलता है। निर्झरिणी अश्रुधारा का प्रतीक है। जो सबको सरसता प्रदान करती है। लक्षण से भी कही कही प्रतीको का अर्थ खुलता है। जैसे— जलना, मिटना से उपलक्षण से आत्म समर्पण निकलता है।

दीप मेरे जल अकम्पित धुल अचचल।

निष्कर्ष :

महादेवी जी ने अधिकतर प्रतीक प्रकृति के उपकरण से लिए है। सम्पूर्ण प्रकृति मे कवयित्री को दो व्यापार दिखायी देते हैं। एक सर्वत्र मिलन का व्यापार दूसरे इच्छा होते हुए भी न मिल पाना अथवा न मिलने के बाद विमुक्त हो जाना इस कारण प्रकृति में सर्वत्र वेदना व्याप्त रहती है। सारांश यह है कि यहां देवी जी ने विभिन्न प्रतीकों के माध्यम से अपनी

वेदना की भावना की अभिव्यक्ति की है। वे अधिकतर प्रतीकों की भाषा कहती है।

महादेवी जी के प्रतीको मे निर्गुण सतो द्वारा प्रयुक्त पर्याप्त प्रतीक मिलते है। उनके द्रारा प्रयुक्त प्रतीक एक ओर वेदना भाव की मार्मिक अभिव्यक्ति करते है और दूसरी ओर उनका प्रतीकार्थ समझने के लिए गीत मे प्रयुक्त रूपक एव लक्षण अभिप्रेत मनतव्य को खोजना पडता है। इस प्रकार यह कथन सत्य ही है कि महादेवी की प्रतीक योजना में बौद्धिक दुरूहता और भावमयता का सुखद समन्वय उपलब्ध होता है।

अध्याय—5

बिम्ब : अर्थ, उद्भव, स्वरूप और विकास :

बिम्ब का प्राचीन अर्थ है चित्र। अस्तु, काव्य बिम्ब एक प्रकार का वह चित्र विधान है जिसमे कवि कल्पना द्वारा भावो का आश्रय ग्रहण कर किसी वस्तु की अनुभूति का अभिव्यक्तिकरण द्वारा सांगोपाग रुप खडा करता है। काव्यकार अपने अनुभव को भाषा द्वारा अभिव्यक्ति देकर सर्वसुलभ बनाता है। इस प्रयास के अवसर पर सर्जना के क्षणो मे अनुभूति के ये नाना रुप कवि की कल्पना पर आरुढ होकर जब शब्द अर्थ के माध्यम से व्यक्त होने का उपकम करते है तो इस सकीयता के फलस्वरुप और मानस छविया आकार धारण करने लगती है— आलोचना की शब्दावली मे इन्हे ही काव्य बिम्ब कहते है। काव्यात्मक बिम्ब अपने विशिष्ट रूप मे न मात्ररूप योजना है और न मात्र भावना बल्कि वह काव्य के इन दोनो पक्षो की समन्वयात्मक परिणति है। सत्य अथवा रसप्राप्ति यदि काव्य की अन्तिम सिद्दि है तो काव्यात्मक बिम्ब काव्य का वह अनिवार्य एव अन्तस्थ साधन है जिसके बिना काव्य अपनी अन्तिम सिद्दि प्राप्त मे सर्वथा अक्षम रहेगा। अस्तु बिम्ब से आशय शब्दो के उस संगुन्झन से है जिसके माध्यम से विषय भाव या विचार का स्पष्ट चित्र उपस्थित किया जा सकता है। बिम्बो के सम्बन्ध मे यह ध्यान रखना आवश्यक है कि काव्यात्मक बिम्बो से साधारणतया हमे यह बोध होता है कि ये शब्दो द्वारानिर्मित चित्र होते हैं।...... प्रत्येक काव्यात्मक बिम्ब चाहे वह किसी भी प्रकार का क्यों न हो ऐन्द्रिक गुणों से

सचलित रहता है। साथ ही प्रत्येक बिम्ब चाहे उसमे किसी भी प्रकार की ऐन्द्रिकता क्यो न प्रधान हो कुछ अशो मे चाक्षुष गुण से युक्त अवश्य रहता है। बिम्बो की प्रक्रिया कोई नई प्रक्रिया नही है, इसका आदिकाल से ही सर्जन और विधान होता आ रहा है। भाषा का उद,भव एव विकास स्वय ही बिम्ब प्रधान का एक अग रहा है। प्रारम्भ मे मनुष्यो ने किसी विशेष परिस्थिति विचार एव भावो की अभिव्यक्ति के लिए जो भी सकेत अथवा अभिव्यक्ति का माध्यम ग्रहण किया होगा वह अपने प्रारम्भिक रुप मे बिम्ब सृजन की ही एक प्रक्रिया रही होगी। कालान्तर मे यही भाषा भावो की परिचालिका हो गयी। भावो की अभिव्यक्ति उसका सम्मूर्तन, उसका सप्रेषण आदि रूप भाषा के माध्यम से ही होना प्रारम्भ हुआ। भावों का मूर्तिकरण यदि भाषा से सम्भव है तो भावो की पूर्ण अभिव्यक्ति स्व अनुभवशीलता उचित बिम्ब–विधान से सम्भव है। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि गद्य के माध्यम से बिम्बो का संयोजन उतना प्रभावशाली और प्रौढ नही हो सकता जितना पथ के माध्यम से। क्योंकी गद्य की भाषा व्याख्यात्मक अधिक और भावात्मक कम होती है। उसमें सगीत की रिक्तिकता के कारण अन्तरात्मा को छूने की शक्ति उतनी नही होती जितनी कविता मे। बिम्ब मे कविताओ का आकार छोटा रखा जाता है ओर शब्दो द्वारा अभिव्यक्ति अत्यन्त ही तीव्र और प्रभावशाली बनाने का प्रयास रहता है।

(क) बिम्ब :

आधुनिक काव्य का बिम्ब एक सशक्त शिल्पांग बन चुका है। 'बिम्ब' अग्रेजी के 'इमेज' का हिन्दी रूपान्तर है। बिम्ब– विधान का कला– सृजन

का माध्यम ही नही आवश्यक उपकरण माना गया है। बिम्ब का समान्य प्रचलित अर्थ है, चित्र अस्तु बिम्ब एक प्रकार का चित्र विधान है जिसमे वस्तु अथवा भावो की अभिव्यक्ति कर मूर्त विधान किया जाता है। सर्जना के क्षणो मे अनुभूति के ये नाना रूप कवि की कल्पना पर आरूढ होकर जब शब्द अर्थ के माध्यम से व्यक्त होने का उपक्रम करते है तो इस सक्रीयता के फलस्वरूप अनेक मानस छविया आकर धारण करने लगती है। आलोचना की शब्दावली मे इन्हे ही काव्य बिम्ब कहते है। अर्थात बिम्ब से तात्पर्य है शब्दो और अर्थों के उस संगुम्फन से है जिसके माध्यम से विषय भाव या विचार का स्पष्ट चित्र उपस्थित किया जाता है। डॉ नगेन्द्र ने इसे दूसरे शब्दो मे इस भाति व्यक्त किया है– "इस प्रकार काव्य– बिम्ब शब्दार्थ के माध्यम से कल्पना द्रारा निर्मित एक ऐसी मानसछवि है जिसके मूल में भाव की प्रेरणा रहती है।"

बिम्बो के सन्दर्भ में यह ध्यातव्य है कि यह प्रकिया कोई नवीन प्रकिया नही है। आदिकाल से ही बिम्ब–विधान और बिम्ब सर्जना होती चली आ रही है। इतना अवश्य है कि बिम्बों का सृजन गद्य में नही अपितु पद्य मे ही सम्भव है। कारण . कि बिम्ब के लिए भावों की विशेष आवश्यकता होती है व्याख्या की नही और गद्य की भाषा व्याख्यात्मक अब अधिक होती है। गद्य संगीत विहीन होने के कारण अन्तरात्मा को स्पर्श करने की शक्ति उतनी नही रखता जितना पद्य। बिम्ब मे कविता का आकार लघु होता है और अभिव्यक्ति तीव्र एवं प्रभावशाली। इनमें कविताए छोटी होती हैं और अभिव्यक्ति सीधी और चुभने वाली। बिम्ब निर्माण पुनर्निमाण की क्रिया है। इसके स्वरूप में कोई न कोई संवेदना सदैव

निहित रहती है हर बिम्ब की एक निश्चित विशेषता निश्चित सदर्भ और निश्चित अनुपग होता है। इसमे विछिप्त पायी जाती है। वह किसी न किसी केन्द्रीय भाव का परिचायक होता है और कुछ अन्य सहयोगी भावो को भी अभिव्यक्त करता है। बिम्ब सगठन मे पदार्थ को उसी अंश की मान्यता दी जाती है जिस अश तक वह उसके कलेवर मे खप सकता है। बिम्ब के माध्यम से प्रकृति के चित्रो का स्वतत्र उपयोग सम्भव होता है। पर कलाकार उसे अपने विशिष्ट दृष्टिकोण का वाहक बनाता है। वह इसके द्रारा सत्य या यथार्थ से भिन्न अनुभूति जन्य सत्य को अभिव्यक्त करता है। बिम्ब सृजन कलाकार के तकनीकी कौशल का परिचायक होता है। इसके माध्यम से उसके व्यक्तिक बोध की सरलता से परखा जा सकता है।

बिम्ब का क्षेत्र काफी व्यापक है। इसके अन्तर्गत मूर्त अथवा अमूर्त – समस्त पदार्थ की कोटिया आ जाती है। बिम्ब का स्वरूप मूर्त ही होता है अमूर्त नही। जिन वस्तुओ को अमूर्त माना जाता है वे अचाक्षुष होते है, अगोचर नही होते। अत बिम्ब काव्य का अत्यन्त प्रभावी माध्यम है और इसलिए काव्य के सन्दर्भ मे उसका मूल्य असंदिग्ध है परन्तु वह स्वंय स्वतंत्र नही है माध्यम ही है। प्राण तत्व नही है काव्य का सहकारी मूल्य अवश्य है प्राथमिक मूल्य नहीं है। दूसरे शब्दो मे बिम्ब र्निमाण की प्रक्रिया ही काव्य मे रूप विधान कहलाती है। बिम्ब–रचना– प्रकिया आसान नही सामान्य प्रतिभा की बात नही। बिम्ब विधान के सम्बन्ध मे डॉ नगेन्द्र ने तीन सोपान स्वीकार किए है –

1. अनुभूति का निर्वेयक्तिकरण
2 साधारणीकरण

3 शब्दार्थ का माध्यम से अभिव्यक्ति।

अस्तु विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि बिम्बन प्रक्रिया केवल पाश्चात्य काव्यशास्त्र की वस्तु नही है। भारतीय काव्यशास्त्र में भी काव्य सृजन के ये ही माध्यम सर्वमान्य रहे है। इतना अवश्य है कि आज की कविताओ और साहित्यिक आलोचना के मानदण्डो के बिम्ब और प्रतीक विधान को अधिक महत्व प्रदान कर काव्य का आकलन इन्ही आधारो पर किया जाता है।

(ख) बिम्ब एवं मनोविज्ञान :

बिम्ब का मनोविज्ञान से अत्यन्त गहरा सबन्ध है, अपितु बिम्ब तो मनो व्यापार का एक आवश्यक उपादान कारण है। बिम्ब के वस्तु रूपो का सबन्ध जहा शरीर विज्ञान से है वहा भावगत रूपो का सबन्ध एक मात्र मनोविज्ञान से है। बिम्बो के वस्तुगत रूपों के अन्तर्गत दृष्टि, शब्द, स्पर्श, रस और गध बिम्बो का परिगणन किया जा सकता है। बिम्ब का भावगत रूप अर्थात मानसिक बिम्ब शुद्धरूपेण मनोविज्ञान का विवेच्य विषय है। मनोविज्ञान के अनुसार बिम्ब किसी पूर्णानुभूत किन्तु तत्काल अनुपस्थित पदार्थ या घटना के गुणों या विशेषताओ न्यूनाधिकपूर्ण मानसिक प्रत्यंकन – मानस चित्र का नाम है। जिसमे मूल अनुभूति की अतीतता का अभिज्ञान निहित रहता है यह पूर्व अनुभव की पुनरूद्बुद्धि है जो मूल के सदृश होने पर भी अनिवार्यतः उसकी यथावत प्रतिकृति नही होती। इसीलिए मनोवैज्ञानिको ने अनुभव के आधार पर बिम्ब के दो भेद किये हैं–

1. प्रत्यक्षानुभव के आधार पर

2 अप्रत्यक्षानुभव के आधार पर।

प्रथम के अन्तर्गत रूप, नाद, स्वाद, स्पर्श और गति बिम्ब तथा दूसरे के अन्तर्गत अनु, प्रत्यक्ष, स्मृति, कल्पना, स्वप्न, तन्द्रा तथा मिथ्या प्रत्यक्ष बिम्ब आते है। मन की विभिन्न मानसिक वृत्तिया एक साथ मिलकर काम करती है वहा सश्लिष्ट बिम्बन क्रिया होती है। इस प्रकार बिम्ब एक प्रकार का चित्र है जो किसी पदार्थ के साथ विभिन्न इन्द्रियो के सन्निकर्ष से भ्रमाता के चित्र में उदबुध हो जाता है। बिम्ब मे एन्द्रिय आधार प्रमुख होने के कारण मनोविज्ञान से प्रत्यक्षत सम्बन्धित है।

(ग) बिम्ब के विविध रूप .

बिम्ब के अनेक भेद किए गए है। ये भेद भी विभिन्न आधारो पर आश्रित है। किन्तु इतना सर्वमान्य हो चुका है कि भाव ही समस्त सृजन क्रिया का आधार भूत तत्व है। इस आधार पर बिम्ब विधान कभी आधार तत्व ही है। इस प्रकार सर्जनात्मक कल्पना काव्य बिम्ब का कारण तत्व है और इन्द्रिय अनुभव इसके मूल उपकरण तत्व है। सामान्यतः प्रत्येक ज्ञानेन्द्रिय का अनुभव एक प्रकार का बिम्ब उद्धृद्व करता है फिर भी चक्षु का योगदान सर्वाधिक रहता है। पाश्चात्य साहित्यकार मे बिम्बों का विवेचन विभिन्न आधारो पर किया गया है। इस भांति बिम्बों के इतने अधिक बताए गए है कि एक बिम्ब दूसरे की परिधि मे प्रवेश कर जाता है। अतिक्रमण और अतिव्यक्ति की स्थिति उत्पन्न हो जाती है तथ्य भी ऐसा है कि लगभग भावों की विविधता के कारण लोगो ने भ्रमवश प्रत्येक भाव के आधार पर उस बिम्ब का नामकरण कर दिया है। इससे बिम्ब विवेचन मे

कठिनाई और सीमा– निर्धारण स्वरूप – विवेचन आदि में बाधाए उतपन्न हो जाती है। इन समस्त कठिनाइयों का ध्यान रखते हुए डॉ नगेन्द्र ने कहा है कि व्यावहारिक दृष्टि से बिम्बो को निम्नलिखित पाच वर्गों मे रखने का सफल प्रयास किया है–

वर्ग 1· दृश्य (चाक्षुष)

श्रव्य (त्रोत)

स्पृश्य

ध्रातव्य

रस्य (आस्वाद)

वर्ग 2· लक्षित

उपलक्षित

वर्ग 3· सरल

सश्लिष्ट

वर्ग 4: खण्डित

समाकलित

वर्ग 5· वस्तुपरक

स्वछन्द

उपर्युक्त विभाजन बिम्बो के स्वरूप– निर्धारण की समस्त एवं विभिन्न कठिनाइयों का समाधान प्रस्तुत करता है। विभिन्न भावो का पृथक–पृथक विवेचन प्रस्तुत करता है एक भाव दूसरे की सीमा मे न प्रवेश करता है न तो कोई भाव अविवेच्य ही रह जाता है। मैं भी आलोच्यकालीन काव्य की विवेचना इन्हीं दृष्टिकोणो से करने का प्रयास उचित समझता हूं जिससे

बिम्बां का स्पष्ट और निर्भान्तज्ञान प्राप्त हो सके। इससे बिम्बों के वस्तुगत और भावगत दोनों रूप स्पष्ट हो जाते हैं।

दृश्य बिम्ब :

ऐन्द्रिय आधारों में चक्षु का स्थान अन्य इन्द्रियों से प्रधान है। दृश्य बिम्बों को चाक्षुष बिम्ब की भी संज्ञा दी गयी है। ये बिम्ब आकृति स्वचि होता है दृश्य बिम्बों का प्रयोग सर्वाधिक होती है। उसका स्वरूप सबसे अधिक स्पष्ट होता है। क्योंकी उसके आधार अधिक मूर्त होते हैं। इतना निश्चित है कि दृष्टि सम्बन्धी बिम्ब कुछ न कुछ मात्रा में एन्द्रिय बिम्बों में निहित रहता है। लेकिन अन्य इन्द्रिय के साथ जब इसकी प्रधानता गौण बन जाती है तब दृश्य बिम्ब की सृष्टि न होकर सतत् बिम्बों का सृजन होता है। दृश्य बिम्ब का सजीव चित्र गिरिजा कुमार माथुर की निम्नांकित पंक्तियों में दृष्टिगत होती है –

सृष्टा तक मिटता कलाकार के मिटने से

पर गीतों के पिरामिडों,

इन धौलागिरि सुमेरू जो पर

मिट जाती स्वंय मृत्यु आकर

दिख रही मुझे विन्ध्या की अमिट लकरी दूर

वे घने घने चट्टान भरे लम्बे जंगल

नर्मदा बेतवा क्षिप्रा की अविलम्ब धारा

जिन पर हेमन्त कुहासे सी छाया रहती

युग से युग तक

अनजाने इतिहासो की यह अविरामयाद।

इस कविता मे पिरामिड, धौलागिरि, सुमेरू, विन्ध्य आदि पर्वत के अतिरिक्त जगलो तथा विभिन्न नदियो का बिम्ब दृष्टिपथ मे साक्षात उभर जाता है। इसी भाति ,वरकुला (चिलका झील) का भी सजीव चित्रण दृष्य बिम्ब विधान की सफल रचना है। भवानी प्रसाद मिश्र की रचना 'सतपुडा के जगल' तो श्रातव्य स्पर्श श्रव्य आदि बिम्बो के होते हुए भी दृष्य विधान की सफल और सजीव चित्रण है। रगो के चित्रण के माध्यम से भी आलोच्यकालीन काव्य दृष्य बिम्ब सृजन मे सफल रही है– काले–चितकबरे धूम धौर रग के बादलो का चित्रण दृश्य बिम्ब का साकार विधान है –

काले, चितकबरे, धूम, धौरे बादलो मे से
निकल रहा गीला चाद
सावन की बूदों का
अभी अभी वर्षा का दोगरा थमा सा है।

श्रव्य बिम्ब ·

श्रव्य बिम्ब का दूसरा नाम नाद भी है। इसका सम्बन्ध कर्णेन्द्रिय से प्रधानरूपेण है। ध्वनि, छन्द, लय, तुक आदि से सम्बन्धित व्यापारो से निर्मित बिम्ब श्रव्य बिम्ब विधानान्तर्गत ग्रहण किए जाते हैं। प्रत्येक छन्द का अपना कोई न कोई बिम्ब होता है। विभिन्न वाद्य यत्रो पर आश्रित और नाद पर आधारित बिम्ब भी इसी श्रेणी मे रखे जा सकते हैं जिसमें कि

श्रवणेन्द्रिय कार्यशील हुआ करती है। आलोच्यकालीन काव्य इस दिशा मे नवीन चेतनाए उत्पन्न की। दृश्य बिम्ब के हर्षत स्पर्श से श्रव्य बिम्ब का सहज और सकल चित्रण विवेच्यकालीन काव्य की सफलता है–

अन्तरीप का अन्तिम छोर

देखने गया था मै भोर

देखा सागर धोर

रौद्र , भैरव , अखण्ड – खरोर

भारी भारी

नीली चीखे खारी।।

राष्ट्रीय सौन्दर्य प्रकृति के मनोरम चित्र कवि को मोहित कर लेते है। स्विट्जरलैण्ड ऐसा ही प्रकृति पोषित भारतीय कश्मीर है। उसके कण कण से सगीत की मधुर ध्वनि निकलती है। प्रकृति की मनोरम छटा देश के सौन्दर्य वृद्वि के लिए कारण भूत है। कवि प्रकृति की इस लीला से एक – एक क्षण प्रत्येक पल में सगीत का मधुर आनन्द प्राप्त करता है। यह संगीत ही श्रव्य बिम्ब विधान द्रारा चत्कार उत्पन्न कर मन को आलिक्षित कर देता है।–

स्विट्जरलैण्ड का स्वर्ग दिख रहा

झीलो के जो नील कमल के सपनो मे ही डूबा रहता

सुनता रहता बम के गोले,

नार सीरस यह आलस्य

बर्फ की बांह घाटियों में झीलों के गीत गा रहा।

हरी झील मे

पीत किरन चिडिया जब पीने आती पानी

उन कतार में लगे

सरोवर फूलो की रंगीन घाटिया

सान्ध्य गगन के नील चर्च मे इन्हे बुलाती।

मौ पख से उन चिडियों के हल्के डैने

हैलन सी डैन्यूब किनारे

गाउन जैसे बिछ जाते है।

नाइटैगल बैठी पाइप पर

किसी कीट की आशा मे ही

अपने छोटे रग कठ से

माऊथ आर्गन छेड रही है।

श्रव्य बिम्ब का सुन्दर और उत्कृष्ट उदाहरण निराला की कविताओ में मिलता है। 'निराला' की अधिकाश कविता मे नादमय हैं।

डम डम डम डम

डमरू निनाद है।

ताण्डव नाचे शिव

प्रवाद उन्माद है।

विकल जल , मत्स्य चल

अनल व्याकुल विरल

अनिल वहमान , बहु।

उक्त कविता मे डमरू की निनाद शिव के ताण्डव नृत्य से नाद की समरव ही है साथ ही विकल जल चल, व्याकुल, वहमान आदि क्रियाओ से भी ध्वनि एव नाद व्यजना उदभुद होती है। जिससे श्रव्य बिम्ब सृजन होता है। इसी भाति साध्यकाल की कविता तो सगीत और नृत्य का ही सृजन है।

स्पृश्य बिम्ब ·

स्पृश्य बिम्ब मे स्पर्श–जन्य सवेदनों को समन्वय से बिम्ब का निर्माण होता है– पेशल या कोमल कर्कश या कठोर आदि विशेषण इस प्रकार के स्पर्श – बिम्बो के वाचक शब्द है जिनके बिम्बात्मक रूप अतिप्रयोग के कारण जड बन गए है। दृश्य एव श्रव्य बिम्ब जिस प्रकार चक्षु और कर्णेन्द्रिय से संम्बन्धित है वैसे ही स्पर्श बिम्ब त्वचा से सम्बन्ध है। भारती जी के अनुसार–

इस सीढी पर, यहीं जहा पर लगी हुई है काई
फिसल पडी थी मै, फिर बाहो मे कितना शरमाई।
यही न तुमने उस दिन, तोड दिया था मेरा कगन
यहा न आऊगी अब, जाने क्या करने लगता मन।

मे स्पर्श बिम्ब का सुन्दर और सजीव चित्रण किया गया है। इसी भांति–

किस तरह तुम्हारे सीने मे
सहम दुबकी गौरैया– सी
अपने को सात सितारो की

सहजादी समझा करती थी।

प्रिय की गोद मे रति भावोत्सुक हो डरी हुई प्रेयसी के गौरैया की भांति दुबक कर चिपके रहने से स्पृश्य बिम्ब साकार हो उठा है। स्पृश्य बिम्ब का सुन्दर उदाहरण प्रकृति का माध्यम ग्रहण कर निराला ने किया है। इसके अतिरिक्त शारीरिक गुणो सौन्दर्य के माध्यम से भी किया है। आलोच्यकालीन कवियो ने स्पृश्य बिम्ब का सृजन किया ——

मन ने शरीर से पूछा

क्यो है इतना आकर्षण

रसमय चुम्बकीय कसी देह का

चिकने मांसल तन का।

कसी देह और चिकना मांसल तन स्पृश्य बिम्ब के सृजन मे कारण मत शारीरिक विशेषण हैं। जिनसे स्पर्श्य जन्य सवेदन का उदबुद्व हो जाना सहज और स्वाभाविक है।

ध्रातव्य बिम्ब ·

ध्रातव्य बिम्ब का अपर नाम गंध बिम्ब है। यह नासकेन्द्रिय से संम्बन्धित है। विभिन्न गधों के प्रतीक रूप पदार्थों के सयोजन से जो बिम्ब विधान किया जाता है। वह ध्रातव्य बिम्बान्तर्गत ग्रहण किया जाता है। गंध या ध्रातव्य बिम्ब काव्य मे अति न्यून रूप मे प्रप्त होते हैं। विश्व के काव्य से ऐसे उदाहरण एकत्र करना कठिन है जिनमे सश्लिष्ट ध्रातव्य बिम्ब प्रस्तुत किये गए हों। फिर भी जो भी प्रयोग मिलते है।

बडे ही सजीव और स्पष्ट है। गंध के सकेत न होते हुए भी से सम्बन्धित पदार्थों और परिस्थितियों चित्रण करके भी आलोच्यकालीन काव्य मे ध्रातव्य बिम्ब विधान किया गया ——

विवश इस छोर से उस छोर तक

मैला, कूडा— कचरा

सडा—गला, जखीरा बहता हुआ गदला पानी

नाली का लगता है कितनाबोगस बुरा पैमानी।

इस रचना मे कूडा, कचरा, सडा—गला गदला पानी आदि शब्द गध की ओर सकेत करते है। जिससे ध्राणेन्द्रिय जन्य संवेदन स्वत· कियाशील हो जाता है। इसी प्रकार पसीने की महक और इजन के काले धुए की गध भी ध्रातव्य बिम्ब विधान की एक सफल योजना है। जिसमें विकट गर्मी भी हवनित है—

प्लैटफार्म की भीड

एक दूसरे से कधा मिलाते हुए लोग

कुछ जान मे

कुछ अन्जान मे

सडे पसीने

और इजन के

काले धुए की

दुर्गन्ध से भरा माहौल।

इसके अतिरिक्त ग्रिव्स की गध डीजल की गध के अतिरिक्त सडी मछली की दुर्गन्धि से भी घ्रातव्य बिम्ब का सजीव चित्र प्रस्तुत किया गया है।

रहस्य बिम्ब :

रहस्य बिम्ब को अस्वाद बिम्ब भी कहा जा सकता है। इसका सबन्ध

दूसरी ओर पडित और पुजारी हलुवे चाभकर मिठाई का रसास्वादन करके मस्ती मे डूबे हुए अपने अपने धर्म की मान प्रतिष्ठा के निमित्त चिन्तित है। सोहन हलुवे का जायका मिठाई और चाय की चुस्की आस्वाद बिम्ब विधान की सफल कल्पना है–

हमको तो हिन्दुत्व डुबाता है इसकी भारी है चिन्ता।
बोले पडित जी सोहन हलुवे का लेकर जरा जायका।।
है इस्लाम अगर खतरे मे इसी फिक्र मे लम्हे गिनता।
बोले शेख मिठाई खाकर घूट लेके चाय का।।

सम्फलित बिम्ब :

पूर्ण या सम्फलित बिम्ब काव्य का उत्कर्ष है। सर्जक चेतना की सचारी अनुभूति के समाकलन के साथ ही उनके बिम्ब का भी समाकित होकर एक सामजस्य बिम्ब का निर्माण करते है। ये बिम्ब काव्य के उत्कृष्ट माध्यम होते है। काव्य के गौरव की वृद्धि करते है। और श्रेष्ठ काव्य सृजन मे सहायक होते हैं। आलोच्यकालीन मे ऐसी योजनाए कही कही बडी सुन्दर बन पडी है–

धूसर मुख सांझ कुवांरी
खैल गली टौले
घर आयी
कैश बधे छितराये
फाड औढ़नी
सहमी , ठिठकी , भयभीता सी

ढुलक पडी मुंह ठाय

रात की गोदी मे।।

रात्रि का चित्रांकन धर के अभिभावको से अनुमोदित चचल स्वच्छन्द लडकी के आचरण से किया गया है। जो मनमाने ढंग से समयन्कुसमय रात गए यत्र तत्र विचरण करने के उपरान्त आकर भयभीत सी मुह ढक कर सो जाती है। उस बिम्ब– विधान में दृश्य सहजतया उभर आता है। इसी प्रकार भारती जी की रचना –

प्रात. सद्य स्नात्

कधो मे बिखरे– से केश

आसुओ मे ज्यों

धुला वैराग्य का संदेश

चूमती रह रह

बदन की अर्चना की धूप

यह सरल निष्काम

पूजा–सा तुम्हारा रूप।

प्रार्थना के लिए आवश्यक समस्त उपकरणो को एकत्रित कर पूर्ण अथवा समाकलित बिम्ब की रचना की गयी है। स्राव ,वैरागय , अर्चना ,निष्कामता और पूजा वन्दना तथा उपासना के आवश्यक पहलू है। जिनका समावेश काव्य में किया गया है। वह प्राय· समाकलित बिम्बो का आलोच्यकालीन काव्य में उतना प्रयोग नहीं है, जितना खंडित बिम्बों का।

वस्तुपरक बिम्ब ·

इसका वर्गीकरण काव्य दृष्टि के आधार पर किया जाता है। इसका दूसरा नाम यथार्थ बिमब भी है। वस्तुपरक अथवा यथार्थ बिम्ब विधान भावो, विचारो अथवा अनुभूतियो का काव्य–दृष्टि से यथातथ्य चित्रण होता है। ये बिम्ब सत्यता के अधिक निकट होते हैं एव स्थूल चित्रण इनमे प्रदान होता है–

> उनके गरजते मडराते और घर्राते हुए
>
> विमानो ने हाई स्वसप्लो सिब्ज गिराए
>
> चारो तरफ आग लग गयी है
>
> नागरिक और नागरिकाएं
>
> इधर उधर भाग रहे हैं।
>
> भय से चिल्ला रहे हैं।
>
> गोद के बच्चे घिघिया रहे हैं
>
> सब पर एक बद हवाली का आलम छा गया।।

युद्व के समय धनवर्षा के दौरान जो वास्तविक स्थिति होती है इस वर्णन से स्पष्ट हो जाती है। वस्तुपरक सृजन की यह सुन्दर रचना है। इसी भाति उत्पादन कार्यरत औद्योगिक बस्ती का चित्र दिखायी जिसमें वातावरण का घुटन श्रमिको की दशा और विशमतायें लक्षित हैं ऐसे चित्र जीवन की वास्तविकता से सम्बन्धित है जिनमें कल्पना की अपेक्षा यथार्थ अधिक होता है–

> पहाडियों से धिरी हुई इस छोटी सी घाटी मे
>
> ये मुंह झौसी चिमनियां बराबर

धुआ उगलती जाती है।

भीतर जलते लाल धातु के साथ

कमरो की दुस्साध्य विषमताए भी

तप्त उबलती जाती है।

स्वच्छन्द बिम्ब ·

स्वच्छन्द बिम्बो को रोमानी बिम्ब भी कहा जाता है। रोमानी शब्द शारीरिक प्रेम से सम्बन्धित भावो का प्रतिनिधित्व करता है। अस्तु ऐसे बिम्ब जो स्वतन्त्र रूप से शारीरिक प्रेम और सौन्दर्य का चित्राकन करते है स्वच्छन्द या रोमानी बिम्ब विधान के अन्तर्गत रखे जा सकते है। आलोच्यकालीत काव्य ऐसे बिम्बो के सृजन मे अग्रगण्य हैं यौन भावना के प्राधान्य के कारण मनोविश्लेषण शास्त्र के बढते हुए प्रभाव के परिणामस्वरूप ऐसे बिम्बो का बाहुल्य हो गया है—

तुम मुस्कुराती आयी थी

मुस्कुराती गयी

आश्वस्त हू

कि मैंने तुम्हारे ओठो का गुलाब

तोडा नहीं सूंघा था।

ओठों के गुलाब तोडने के स्थान पर सूंधने का भाव प्रदर्शित कर कवि ने रतिक्रिया मुमोदित दन्तक्षत न कर केवल चुम्बन करने का भाव प्रकट करने का अभिप्राय स्पष्ट किया है। स्वच्छन्द बिम्ब विधान की दृष्टि से 'अज्ञेय' और 'भारती' की कविता में आलोच्यकालीन का काव्य

प्रतिनिधित्व करती है। अनेक उदाहरण इनकी कविताओ मे आसानी से ढूढे जा सकते है–

आई गई श्रतुऐ पर वर्षों से रैती दोपहर , नही आई
जो क्वारेपन, पन की हतलय–सी
इस मन की अगुली पर कस जाऐ और कसी ही रहे
नित प्रति वसी ही रहे आखो मे, बातो मे,गीतो मे–
आलिगन के धवल फूलो की माला सी
वृक्षो के बीच कसमसी ही रहे।

शारीरिक प्रेम से सम्बन्धित भावो का प्रतिनिधित्व करने के कारण उक्त कविता स्वच्छन्द बिम्ब विधान का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करती है। इसी प्रकार विष्णु खरे की 'प्रेमा' शीर्षान्तर्गत रचित पक्तिया स्वच्छन्द बिम्ब विधान की सुन्दर प्रतिनिधि रचनाऐ है।

लक्षित बिम्ब :

लक्षित बिम्ब उपस्थित दृश्य विधान है। इसका सामान्य अर्थ है दिखने वाला बिम्ब। दिखने वाली वस्तु उपस्थित होगी। अत लक्षित बिम्ब एक प्रकार से प्रस्तुत विधान है। लक्षित बिम्ब वस्तुतः दृष्य बिम्ब मे पदार्थ का चित्र साक्षात उपस्थित कर दिया जाता है, यथा –

उठो राम सुन प्रेम अधीरा।
कहु पट कहुं निसग धनु व तीरा।

लक्षित बिम्ब का सुन्दर और सरस उदाहरण ठाकुर प्रसाद सिह की कविता मे उपलब्ध होता है।

तपरिसा के

इचाकै यै

फूल बाधै

पाव मे बिछिया

बनी हुई

ढाल की सरसो

बनी कगन

लरज आयी

और सब पर

खिले साखू फूल

सा यह रुप

काजल कैश बाधै।

सन्थाल कन्याओ के सौन्दर्य प्रसाधन की प्रकृति बनाकर उनके जीवन रहन – सहन और भेष –भूषा को साकार करने का प्रयास किया गया है। भवानी प्रसाद मिश्र की कविता 'प्रलय' लक्षित बिम्ब का सुन्दर नमूना प्रस्तुत करती है। सम्पूर्ण कविता के वर्णन सन्दर्भ में प्रलय का दृश्य पाठक और श्रोता का प्रलय का सटीक ज्ञान कराता है–

जब समुन्दर बढ रहा होगा

बडी भगदड मचैगी

और वह बावली निगौड़ी

सामने आकर नचैगी।

इस पथ मे प्रलय की साक्षात प्रस्तुति दृष्टव्य है। गिरजा कुमार माथुर की रचना 'चांदनी बिखरी' हुई लक्षित बिम्ब विधान का सुन्दर नमूना है। चादनी के विविध चित्रण सरल सहज और प्रस्तुत दिग्दर्शन है–

चाद लालिमा ऊग कर

उजला हुआ

कामिनी उबटन लगा

आई नहा

फूल चम्पै का खिला है

चाद मे

गाव की ही रात

छिटकी चादनी

हे चकन, की नीद मीठी

चादनी।

उपलक्षित बिम्ब .

इसके विपरीत उपलक्षित बिम्ब अनुपस्थित चित्राकन है। दूसरे शब्दों मे अप्रस्तुत विधान ही इसका आधार है। यह बिंम्ब कल्पना और स्मृति पर ही अधिक आधारित होता है। अर्थात उपलक्षित बिम्ब के भी प्रौढों चित्र सिद्व अप्रस्तुत विधान है। इस प्रकार के बिम्ब विधान में भी कवियों ने अपनी बौद्विक कुशलता का परिचय दिया है। अप्रस्तुत विधान द्वारा जो

बिम्ब विधान की दिशा अपनायी गयी उसका सुन्दर उदाहरण विजय देव नारायण साही की इस कविता मे मिलता है–

हजार हजार तोते

छर्रे की तरह छूटते है

पीछे ऊँची मेहराबो से

आकाश मे

खाते है गोते।

तोते तारो के लिए प्रयुक्त है छर्रे की तरह छूटना आसमान बिखरने का दृष्य प्रस्तुत करता है। इस प्रकार की कल्पना और स्मृति सवलित चित्रण उपलक्षित दृष्य विधान की सफल योजना प्रस्तुत करते है। इसी प्रकार अज्ञेय की 'रात मे गाव' रचना अप्रस्तुत विधान के माध्यम से उपलक्षित बिम्ब विधान सफल प्रयास है–

झीगरो की लौरिया

सुला गयी थी गांव को

झोपडे हिडोलों सी झुला रही है

धीमे धीमे

उजली कयासी घूम डोरिया।

उजली कपासी घूम डोरिया चांदनी को पतली चमकदार किरणें गाव की झीगरो की लोरियो के सहारे झोपडो मे मस्त झुलाकर सुला रहे है। चादनी का दृष्य जो कि अप्रस्तुत है बिम्ब द्वारा साक्षात हो उठता है स्मृति और कल्पना के आधार पर।

सरल बिम्ब ·

सरल बिम्ब प्रेरक अनुभूति के आधार पर कल्पित किया जाता है सरल अनुभूति से प्रेरक और निर्मित बिम्बो को सरल बिम्ब विधान कोटि मे रखा जाता है। इस प्रकार की बिम्ब योजना मे पाठक या श्रोता को बिम्ब ग्रहण करने मे किसी विशेष अनुभूति के लिये प्रयास नहीं करना पड़ता है–

लजाने घूघट काढा

मुख का रग किया गाढा।

बिम्ब का रग रूप स्पष्ट और सरल है लल्जा के कारण शीलोंद्भव और घूघट का बढना क्रमिक और समायोजन सहज बिम्ब विधान है। इन्हे एकल या मुक्तक बिम्ब भी कहा जा सकता है। इस प्रकार के सरल बिम्ब बिधान आलोच्य कालीन काव्य मे सरलता से किया गया है–

मै तुम्हे चूमता हू

ओठो को कपोलो को

ठोडी को, माथे को, पलको को

लबों को

सर्वांग चूमता हू

मै तुम्हे प्यार करता हू।

इस वर्णन मे प्यार की समस्त क्रियायें निर्वाचित कर प्यार का सीधा

स्वरूप वर्णन खडा कर दिया गया

है। रमोकाला की अनुभूति देखिए–

बर्फ

बर्फ

सब तरह बर्फ

बर्फ

प्यासे फूल पौधे

सब के सब

बर्फ मे दबे

कही कही

कोई झाडी की फुनगी झाकती सी।

इस प्रकार आलोच्यकालीन काव्य मे जहा एक ओर बौद्विकता ने काव्य को कठिन बनाया है, वही ऐसे सुन्दर और सरल चित्रण भी हुए है, जिनमे बिम्ब ग्रहण सरल और सहज अनुभूतियो के द्वारा हो जाता है। यद्यपि आलोच्यकालीन काव्य मे ऐसे भी अनेक रचनाएं मिलती है, जिनमे स्मृति, अर्थ, कल्पना, विचार, अर्थ और भाव अनेक बिम्बो में भटकता रहता है।

उड गयी चिंडिया

कापी फिर

घिरह

हो गई पत्ती।

अज्ञेय की एक ऐसी ही रचना है, जिसमे न तो भावो का पता चलता है और न उद्वेश्य का। इतनी सफलता अवश्य है कि चिंडिया का उडना जिसकी वजह से पत्ती का कापना और फिर स्थिर हो जाना जो कि अनुभव सही और सकारण है, बिम्बित होता है।

संश्लिष्ट बिम्ब

सश्लिष्ट बिम्ब कठिन साधना है। इस क्रिया मे अनेक बिम्बो को एकत्रित कर परस्पर सम्बन्ध रूप मे चित्रित किया जाता है। इस बिम्ब के मिश्र जटिल और समाकलित आदि अनेक नामकरण किए गये है। संश्लिष्ट बिम्ब विधान काव्य का चमत्कार है, कवि की प्रतिभा का द्योतक है, पाठक की बुद्धि और गम्रहिका शक्ति का निष्कर्ष है। कला का गौरव इस प्रकार के बिम्बो पर ही निर्भर करता है। आलोच्यकालीन काव्य मे सश्लिष्ट चित्रण बहुलता से मिलता है। सशिलिष्ट चित्रण मे कवियों ने दृष्टि बिम्ब स्पर्श बिम्ब को प्रकृत बिम्ब मे ढाल कर वर्ण्य वस्तु का एक समर्थ चित्र उपस्थित किया है—

यह जो पीली भूमि दिख रही, देव

यही है पीत सूर्य की

पीली वसुधा

जिसका होता कहवा मीठा

श्रमण चीन का पीला चीवर

अलताई पर विछा हुआ है

वे अफीम के खेत

उदुम्बर रंगो मे सोये है।

मेरी पंख सी सजी रमणीया

तितली सी रंगीन

शरद में धो के हल्के जिनके पंख

यात्रा का श्रम ताप हरेंगे

सीक्याग नदी

मीठे जल से भरी हुई।

इसी प्रकार दैनिक जीवन और प्राकृतिक बिम्बो का समन्वित स्वरूप निर्मित कर आलोक रस एव छाया का एक साथ समावेषदृष्टि एव मानस बिम्ब निर्धारण कर काव्य रचना प्रस्तुत की है–

घनी धुन्ध सी छाया निकली

छण भर मे फिर

घनी धुन्ध मे गयी चली

उस छण मे मुझको आलोक मिला

रस मिला, चिरन्तन दृष्टि मिली।

आलोच्यकालीन काव्य का कवि जीवन मे रस, आलोक तथा चिरन्तन दृष्टि की ही खोज मे प्रकृति का आश्रय नहीं ग्रहण करता अपितु भारतीय अस्कृति और सभ्यता नैतिकता और शालीनता भी प्रकृति में खोजता है। सध्या को वह पति सेवारत पतिपरायण नारी के सवरूप में स्वीकार करता है। चाद निकलने पर सध्या विलीन हो जाती है ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार पति सेवारत स्त्री किसी अन्य को देखकर लज्जा वश ओट हो जाए। ऐसे सुन्दर और सरस दृश्य विधान आज की कविता के प्रमाण हैं–

पति सेवा रत साझ

उचकता देख पराया चॉद

लला कर ओट हो गई।

सश्लिष्ट बिम्ब–विधान का एक नया प्रयोग भी अेखने को मिलता है जिसमे वर्ण्यवस्तु एक होते हुए भी बिम्बो का विधान विविध दृष्टियो से किया गया है–

औधे पडे हुए नीले ढक्कन पर रखा
वह चमकीला गोला सरका और गिर गया
खीच लिया सिन्दूरी लाल दुपट्टे को भी
क्षितिज बहुत गुस्ताख शोख है।
उधर सितारो की कढी चुनरिया
साझ लजीला पहन रही है
उसे कही जाने की बहुत बहुत जल्दी है
वे पखो की नावे अपने डैनो के पतवार चलाकर
मध्यशून्य की सरगर्मी अब तैर चुकी है
वृक्ष मौन
चिडियों के कलरव भीड पी गए
सूनी डगर – सोचती – क्या सब चलने वाले रोष हो गई।

कवि का अनुभूति है साझ और चित्रण। इसके लिए उसने रोमानी चित्रण रात्रि का अभिसारमय रूपाकन शान्त और स्रव्य प्रकृति सुनसान रास्ते का पृथक पृथक बिम्बाधान कर एक पूर्ण चित्र उपस्थित करने का सफल प्रयास किया है। इसी भाति नरेश मेहता का समय देवता मे सफल सश्लिष्ट बिम्ब विधान देखा जा सकता है।

खण्डित बिम्ब

खण्डित बिम्ब खण्डित अनुभूति से सम्बन्धित है। इस सदर्भ मे डॉ नगेन्द्र का मत ध्यातव्य है। मूलत· खण्डित बिम्ब और विकीर्ण बिम्ब मे परिमाण का भेद है गुण का नही। विकीर्ण बिम्ब भी खण्डित बिम्ब ही होता है। वास्तव मे विकीर्ण बिम्ब एक प्रकार की खण्डित बिम्बावली का नाम है। खण्डित बिम्ब कवि की असफलता का प्रतीक है कवि की अनुभूति, कल्पना, भाव जब उचित और पूर्ण, नियमित अभिव्यक्त नहीं हो पाते तो ऐसे बिम्बो का सृजन होता है। इस प्रयास मे कवि की सर्जक प्रतिमा मूलरूपेण कार्य करती है। किन्तु आज के युग मे खण्डित बिम्ब योजना ही कवि की सफलता और काव्य के लिए आवश्यक बन चुकी है। आलोच्यकालीन काव्य खण्डित एव विकीर्ण बिम्बो से भरा पडा है। कारण यह है कि आलोच्यकालीन काव्य मे कविताए बहुधा ऐसी मिलती हैं जिनमे कोई स्पष्ट चित्रण के अभाव में उपमेय और उपमान की नितान्त असगति मिलती है। इस दृष्टि से कविता मे नवीनता और झूठा चत्कार भले ही आ जाय किन्तु स्थायी और प्रभावशाली काव्य का सृजन कैसे हो सकता है ?

मै बैठा हूं

यह शाम मुझे अपनी मुरदार अगुलियो से छू लेती है

माया छूटी

लगता जैसे प्रतिभा ने भी दम तोड दिया है

मस्तक इतना खाली खाली

हो कोई सडा हुआ जैसे नारियल

छूती है होठ

विलगत यो

वाणी इतनी खोखली हुई

ज्यो बच्चो की गिलबिल – गिलबिल।

इस कविता मे रात की मुरदार अगुलियो से छूने से प्रतिभा का दम तोड देना नितान्त कपोल कल्पना, सडे नारियल से रिक्त माथे का कोई साम्य नही न तो सडे नारियल का गुणाधान ही रिक्त माथे मे और न रिक्तता का प्रतिनिधित्व ही सडे नारियल से सम्बन्धित है। ऐसा आशक्त बिम्ब खण्डित कल्पना और अनुभूति पर ही आधारित है। इसी भांति गिरिजा कुमार माथुर की चदरिमा मे भी प्रभाववादी खण्ड बिम्ब समायोजित हुई है। रात, चॉदनी का उजाला, काग का बोलना, चूने का घर द्वार का पुतना, चॉद की गोलाई , फटे हुए चार्ट पेपर की भाति आदि बाते नितान्त असगत और तारतम्य रहित उपमा और उपमान योजना का प्रतिफल है–

यह झकझक रात

चादनी उजली कि सुई मे पिरौ लौ ताग

चादनी को दिन समझकर बोलते है काग

हो रही है ताजी सफेदी नये चूने से

पुत रहे घर द्वार

चांद पूरा साफ

आर्ट पेपर ज्यो फटा हो गोल।

इसी भाति भवानी प्रसाद मिश्र की एक असम्बद्ध भावो की योजना देखिए–

कल

आसू की तरह

टपक कर फलने

हलका

कर दिया

पेड को

बगीचे की मेड को

जाने क्या हुआ

दरक गई

पेड पर बैठी चिडिया की

बाई आख

फरक गई।

केवल शुभ– अशुभ बिम्ब विधान के लिए बाई आख का फरक जाना काफी था। शेषाश विभिन्न परिस्थितियो और चित्रो की ओर सकेत करते हैं, जिनसे बिखरे भावो का उद्‌बोधन होता है।

छायावादी काव्य में बिम्बों का अध्ययन :

कल्पना अपने सर्वोत्तम रूप मे दो कार्य करती है। ताजे सवेदन क्षम और अर्थपूर्ण बिम्बा का निर्माण और रचना के विभिन्न तत्वो के बीच सामजस्य पूर्ण सम्बन्ध की स्थापना अथवा ऐक्य–विधान। परन्तु जब कवि का अनुभव क्षेत्र सकुचित और बोधपक्ष अपूर्ण होता है, तो कल्पना अपने महत्वपूर्ण पद के नीचे उतर कर बौद्धिक क्रीडा अथवा उक्ति वैचित्र्य का साधन बन जाती है। इस प्रकार की कल्पना को अग्रेजी मे 'फैन्सी' कहते है। जो सृष्टि विधायनी कल्पना की सहायिका मात्र होती है। उसमें आतरिक सश्लेषण का अभाव होता है। यदि बोधपक्ष व्यापक अर्थात कवि का जीवनानुभव समृद्ध और गहरा है तो उसकी कल्पना भी सश्लिष्ट और गहरी होगी। साहित्य मे बोधपक्ष अथवा विभाजन–व्यापार का इसीलिए इतना महत्व है। सामान्यत छायावादी कल्पना का बोधपक्ष–अधिक निश्चित अर्थ मे उसे अनुभूति भी कह सकते हैं– अदृश्य और अस्पष्ट है पर इसका कारण हमे तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों में ढूढना होगा।

कल्पना जब रूढि तथा परम्परा के विरूद्ध एक भावात्मक विद्रोह के रूप मे भावना और अनुभूति के नये सौन्दर्य लोको के बीच विचरण करती हुई दिखाई देती है, तो उसे स्वच्छन्द कल्पना कहते हैं। अपने इस रूप मे वह जीवन और जगत की नयी मर्मच्छवियों का उद्घाटन करती है और प्राचीन प्रतीको तथा उपमानों का परिष्कार और पुर्ननिर्माण भी। आधुनिक

वैज्ञानिक विकास ने मानव जीवन के केवल वाह्य–पक्ष को ही नही प्रभावित किया, उसने उसके बोध–पक्ष को भी विस्तृत और सम्पन्न बनाया। विचारो के नये–नये क्षितिज खोले और अनुभवो को फैलाने के लिए दिशाओ का अनन्त विस्तार किया। अब व्यक्ति की भावना का प्रसार गिने–गिनाये विभागो की परिधि मे नही हो सकता था, उसे खुली हवा और उन्मुक्त आकाश की आवश्यकता की पूर्ति स्वरूप आये थे।

स्वच्छन्द कल्पना की विशेषताओं की खोज के लिए हमे छायावाद की विविध भावभूमियो का आकलन करना होगा। छायावादी कविता का सबसे प्रिय विषय है प्रकृति। प्रकृति मे भी उसका सम्पूर्ण रूप सभार उसे प्रिय न था। अपनी सौन्दर्य प्रिय वृत्ति के अनुसार छायावादी कवियों ने उसके कोमल, रमणीय, आकर्षक, उदान्त तथा विस्मयकारी रूपो की ओर ही अधिक प्रवृत्ति दिखाई। स्वच्छन्द कल्पना को जाग्रत और उद्दीप्त करने मे प्रकृति का सौन्दर्य प्रेरक शक्ति का काम करता है। आई ए रिचर्ड्स ने 'तो प्राकृतिक सकेतो को ही कल्पना–वृत्ति का मूल उद्गम–स्रोत माना है। उनके अनुसार प्रकृति की ओर से प्राप्त इगितो पर मनुष्य का मन जिस वृत्ति के द्वारा पर्चुत्सुक हो उठता है, उसे कल्पना कहते है।' सभी प्रकार की कल्पनाओ के लिए चाहे यह बात सत्य न हो, पर रोमैंटिक (छायावादी) कल्पना के सम्बन्ध में तो यह निर्विवाद रूप से सत्य है। महादेवी जी ने तो इसे स्पष्ट रूप में स्वीकार भी किया है कि प्रकृति के सौंदर्य और प्रकृति के ऐश्वर्य ने भारतीय कल्पना को जिन सुनहरे–रूपहले रंगो से रंग दिया वे तब से आज तक नही धुल सके। महादेवी जी का सकेत यहाँ सभवत वैदिक कल्पनाओं और आदि काव्य की ओर है। पर छायावादी कविताओं मे

पायी जाने वाली प्रकृति से उनका एक बहुत बडा अतर है, जिसे नही भूलना चाहिए। प्रकृति पर चेतना का आरोप छायावादी कविताओ की एक बहुत बडी विशेषता मानी जाती है। पर यह आरोप वैदिक कल्पनाओ से बहुत भिन्न है। वैदिक ऋषि के निकट तो काई द्विधा या द्वन्द था ही नही। वह पूरे अन्तर्मन से स्वीकार करता था कि नदी, सूर्य, ऊषा, चन्द्रमा, वरूण आदि शक्ति और चेतना के लोकोत्तर रूप है। वह आरोप नही करता था– केवल 'विश्वास' करता था। पर छायावादी कवि का आरोप एक प्रकार का विशुद्ध काव्यात्मक भ्रम था। उनके पीछे 'विश्वास' का कोई दृढ आधार नही था। उसे चेतना का आरोप न कहकर कवि का आत्म प्रक्षेपण कहना अधिक सगत होगा। इसका प्रमाण यह है कि छायावादी कवियो ने कहीं भी प्रकृति को अपने से अलग करके देखने का प्रयास नही किया है। दूसरे शब्दो मे वे शुद्ध प्रकृति चित्रण कभी नही करते। बल्कि प्रकृति के स्पर्श से मन मे जो छायाचित्र उठते है, उन्ही का काव्यात्मक उपयोग करते है। अर्थात् छायावादी कवि के निकट प्रकृति अपने आप मे महत्वपूर्ण नहीं थी, उसका महत्व उन प्राकृतिक बिम्बो और प्रतीको के कारण था, जिनके द्वारा वह अपनी अस्पष्ट अनुभूतियो को वाणी देना चाहता था। इसीलिए पन्त, प्रसाद, निराला और महादेवी वर्मा के काव्यात्मक बिम्ब– विधान मे जीवन और जगत् के अति परिचित संकेतों की अपेक्षा प्रकृति के सुदूर धुँधले और अगम्य सौन्दर्य बिम्बो की संख्या अधिक है।

स्वच्छन्द कल्पना का एक अधिक सूक्ष्म और अन्तर्दृष्टि मूलक रूप रहस्यपूरक कविताओं मे पाया जाता है। वहॉ काव्य का सार मूर्तीकरण एक प्रकार की सांकेतिक गरिमा से भर उठता है। रहस्यवादी कवि के निकट

प्रत्यक्ष वस्तु एक प्रतीकात्मक सत्ता के रूप मे होती है जो निरन्तर अपने से परे किसी वृहत्तर सत्य की ओर इगित करती रहती है। बाह्य रूपकारो से उसका सम्पर्क टूट जाता है, और अनुभवकर्ता एक ऐसी शब्दातीत मनोदशा मे पहुॅच जाता है जहॉ वह अपने समानधर्मा मनुष्यो के बीच नितान्त अकेला होता है। ऐसी अवस्था मे दैनिक व्यवहार की सुपरिचित भाषा से उसका काम नही चलता। उसे नयी मर्मच्छवियों (बिम्बों) और संकेतो की आवश्यकता होती है फलत: रहस्यवादी कवि की कल्पना प्रत्यावर्तन – पद्धति का आश्रय ग्रहण करती है। उच्चतर अनुभूतियो की अभिव्यक्ति मे एक ऐसी स्थिति आती है, जहॉ प्रेषणीयता की प्रत्यक्ष पद्धति व्यर्थ हो जाती है, अत: वैसी अवस्था मे कवि विराधोभास की शैली अपनाने के लिए विवश होता है।

'शलभ मै शापमय वर हूॅ।

किसी का दीप निष्ठुर हूॅ।।

ताज है जलती शिखा।

चिनगारियां श्रृंगार–माला।।

ज्वाला अक्षय कोष– सी

अगार मेरी रगशाला।।'

नाश मे जीवित किसी की साध सुन्दर हूॅ। इस प्रकार विरोधी बिम्बो मे तीव्रतम अनुभूति को अभिव्यक्त करने की अद्भुत क्षमता होती है।

मनुष्य के वृत्तिगत साधनो मे सबसे पहला स्थान सौदर्य वृत्ति का है। सौदर्य रहस्यमय प्रेरणा उसे प्रकृति के आभ्यतर रूप की खोज के लिए विकल करती है। सौदर्य के मूल की यही खोज जब सार्थक बिम्बो मे रूपातरित होकर अभिव्यक्ति पाती है तो उससे रहस्यमय प्रधान ऋचाओ, सूक्तियो, पदों और गीतो का जन्म होता है। छायावादी कवियों ने ऐसे बिम्बो की अवतारणा प्राय: एक अस्पष्ट और धूमिल वातावरण मे की है। जीवन की गोधूली, रजनी का पिछला पहर, निशीथ की शक्ति और प्रत्यूष वेला की जागरण से पूर्व की निस्पद जनशून्यता – रहस्यवादी कविताओ की ये परिचित पृष्ठ भूमियॉ है। इसके अतिरिक्त स्वप्न, सध्या, नक्षत्र, प्रभात, पवन, वसत इत्यादि के चित्र भी प्राय: मिलते है। कवि की अतदृष्टि इन चित्रो पर एक अनुराग–रंजित व्यक्तित्व का आरोप कर लेती हैं और इस प्रकार आत्म–निवेदन के लिए एक मूर्त–कल्पना का आधार मिल जाता है। फलतः बिम्बों का स्परूप की छायात्मक हो जाता है। उसका एक पक्ष तो पाठको की रस–सवेदना की तृप्त करने में समर्थ होता है। पर एक दूसरा पक्ष भी होता है जो केवल उसकी दृष्टि को विस्मय – विमुग्ध और चमत्कृत करके छोड देता है। तात्पर्य यह है कि अंर्तदृष्टि प्रेरित बिम्बों का पूर्ण प्रत्यक्षीकरण कभी नही हो पाता 'कुछ' ऐसा होता है जो हर बार पाठक की सवेदन–क्षमता की परिचय से बाहर रह जाता है। यहॉ तक कि रहस्यवादी कविता का एक दृश्य बिम्ब भी चक्षू का विषय उतना नही होता, जितना भावना का या सूक्ष्म संवेदना का, उदाहरण के लिए महादेवी वर्मा का यह रहस्य–बिम्ब लीजिए:–

रजत रश्मियो की छाया में धूमिल धन–सा बह आता

इसमे सदेह नही कि सौन्दर्य दृष्टि की सूक्ष्मता और बिम्ब की गहन रूपात्मक पृष्टभूमि हमे प्रभावित अवश्य करती है। पर रजत रश्मियो की छाया और उसमे धूमिल धन की कल्पना हमारे लिए सहज ग्राह्य नही होती। अत इस प्रकार की कविताओ मे बिम्ब ग्रहण ऐन्द्रिय स्तर पर न होकर मानसिक स्तर पर होता है। पहले मन अनुभव करता है और फिर इन्द्रियॉ उस अस्पष्ट अनुभव की पुष्टि करती है। इस प्रकार बिम्बो मे एक सकेत ग्राह्य अस्पष्टता का विकास होता है, जो अर्थ की छायाओ को सूक्ष्म और दूरव्यापी बनाता है।

बिम्ब विधान की शैली मे परिवर्तन और परिष्कार लाने के लिए काव्य भाषा को भी परिवर्तित और परिष्कृत करना आवश्यक था। द्विवेदी युग की सवेदन शून्य इतिवृत्तात्मक भाषा नयी अनुभूतियो को सप्रेषित करने मे असमर्थ थी। उस युग का कवि अपने मर्यादावादी दृष्टि के अनुसार प्रत्येक शब्द को उसके कोशगत अर्थ मे ही प्रयुक्त करता था। वह शब्द–चयन को कल्पना व्यापार के अन्तर्गत नहीं मानता था। शब्दों के चुनाव और उनमें काव्यात्मक अर्थों का प्रक्षेपण वह अपनी मर्यादित विवेक–बुद्धि से ही करता था। स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन का आगमन ही वस्तुतः अनुशासित काव्य–दृष्टि और मर्यादित विवेक–बुद्धि के विरूद्ध हुआ था। अत काव्य भाषा के निर्माण की दिशा में भी छायावादी कवियों ने स्वच्छन्द कल्पना का भरपूर उपयोग किया। उन्होने असख्य नये शब्दो का अन्वेषण किया। बहुत से पुराने शब्दो का पुनरूद्धार कर उनमें नवीन अर्थों का प्रक्षेपण किया। कुछ अति प्रचलित रूढ शब्दों को नये संदर्भो में रखकर उनके परम्परागत अनुषंग को बदलने का प्रयास किया। कुछ अनावश्यक संयुक्त क्रियाएं छोड़

दी गयी और कुछ परिचित क्रिया पदो पर स्वारापात देकर उनमे नयी व्यजना और अर्थवक्ता भरने का प्रयास किया गया। यह सब कुछ एक सम्पन्न हुआ। नये शब्दो के निर्माण के प्रति सबसे अधिक आग्रह पत और निराला ने दिखाया। प्रसाद ने पुराने शब्दो का पुनरूद्धार अधिक किया और महादेवी जी ने जाने–पहचाने आत्मीय शब्दो को सगीत और व्यजना का नया सौदर्य प्रदान किया। यहॉ महादेवी के प्रमुख शब्दों की एक सूची उपस्थित की जा सकती है जिनसे उनके बिम्ब–निर्माण की दिशा और स्वरूप को पहचानने मे सुविधा होगी।

अपरिचित, संकल्प, निर्माण–उन्माद, अक–सप्तृत्ति, हाट, मेला, दुकेला, तूलिका, निर्वाण, शयनागार, असीम, सीमा, टरकीला, दीपावलियॉ, शून्य, श्रृगार, नीलम, तितली, केसर, खुमार, चितेरा, मोम, जुगनू, सीप, यवनिका, वारिदघोष, अभिसार, आसव, दीपशिखा, शलभ, चित्रपटी, आविल, पकिल, वेणीबधन, शीशफूल, अजलि दुकूल, पदचाप, शेकाली, मौलक्षी, प्रवालकुज, हरसिगार, वानीर, रजनीगधा, पाटल, वकुल, धनसार, टकसाल, लीला कमल, रेखाक्रम, स्वरसगम, दृगजल, मेंहदी, दर्पण, अगराग, लोरी, अर्चन, केरववन, अश्रुमाल, आलोकपन, पुलकपखी, रगशाला, अगुरूधूम, आरती बेला।

महादेवी के शब्दो की सीमा उनकी अपनी सुरूचि और व्यक्तिगत परिवेश की सीमा है। अन्य छायावादियों की तरह शब्दो और बिम्बो की खोज मे उन्हे अपने घर की सीमा के बाहर बहुत कम जाना पडा है। जिन वस्तुओ से एक सुरूचि–सम्पन्न नारी अपने घर आस–पास को अलंकृत और आकर्षक बनाती है उन्ही वस्तुओ के कलात्मक उपयोग से उन्होंने

अपने काव्य को मूर्त और भास्वर रूप प्रदान किया है। वही दीपशिखा, अगराग, धनसार, दर्पण, केसर, अगुरूधूम, वेणीबन्धन, शीशफूल, अलझलक और दुकूल आदि शब्द है जो उनकी रहस्यात्मक कविताओ को भी एक घरेलू स्पर्श से युक्त कर देते है। इन परिचित शब्द–संकेतो से उन्होने एक अत्यन्त मोहक और आत्मीय वातावरण तैयार किया है। स्वभाव से कलाकार होने के कारण उन्होने चित्र के बाह्य उपकरणों का भी काव्यात्मक उपयोग किया है। तूलिका, प्याली, चित्रपटी, मोम, रेखाक्रम इत्यादि शब्द उनके यहॉ प्राय मिल जाते है। इसी कला प्रियता ने उन्हे दीप्त और आकर्षक रगो की ओर आकृष्ट किया। मरकत, नीलम, मोती और प्रवाल कुज जैसे शब्द इसी सौंदर्य दृष्टि की उपज है। प्राकृतिक वस्तुओ मे वे शेफाली, मौलक्षी, हरसिंगार और बहुल की परिधि के बाहर बहुत कम गयी और यदि गयी भी तो अधिक से अधिक वानीर कुज तक। व्यापकता की दृष्टि से महादेवी का शब्दकोष छायावाद के अन्य बड़े कवियों की तुलना में बहुत सीमित है। पर उन्होने अपने गिने–चुने शब्दो को भी तराश कर एक ऐसी दीप्ति और कलात्मक गरिमा दे दी है, जो दूर से ही पाठक को अपनी ओर आकृष्ट करती है। परिष्कृति और प्राजलता की दृष्टि से उनका शब्द–वैभव सपूर्ण छायावादी काव्य मे अपना विशिष्ट स्थान रखता है। उन्होंने शब्दों के सचलन और पद–विन्यास मे अत्यधिक सतर्कता से काम लिया है। उनकी बिम्ब योजना मे भी चेतन कला–पद्धति की प्रवृत्ति स्पष्ट है। इस अत्यधिक कलात्मक, सतर्कता के कारण उनके बिम्बों में स्वत· स्पूर्तता कम और अलकृति अधिक है।

छायावादी कवियो ने विशेष्य (वस्तु) के विस्तार के साथ–साथ विशेषणो के क्षेत्र का भी विस्तार किया। फलत उनके सूक्ष्म–जटिल वस्तुओ की विशेषताए पहली बार उद्घाटित हुई। जीवन और जगत के अलग–अलग पडे हुए असख्य विशेष्य और विशेषण पहली बार एक–दूसरे के निकट लाये गये। इस कार्य मे सृष्टि विधायनी स्वच्छन्द कल्पना का पूरा उपयोग किया गया। परिणाम यह हुआ कि ऐसे विशेष्य और विशेषण के बीच भी सम्बन्ध स्थापित किया गया जिनमे ऊपर से देखने पर कोई समानता अथवा निकटता नही थी। अनेक विशेषणो को उनके चिरपरिचित सदर्भ से स्थानान्तरित करके नये अपरिचित सदर्भो से सयुक्त किया गया। आधुनिक समीक्षा की भाषा में यह पद्धति 'विशेषण सदर्भो' के नाम से पुकारी जाती है। हिन्दी कविता के रूपविन्यास के विकास मे छायावादियो की यह देन बहुत महत्वपूर्ण मानी जाएगी। कदाचित् काव्य के रूप विधान मे विशेषणो को इतना महत्व कभी भी नही दिया गया। यह छायावादी कवियो के भाववादी दृष्टिकोण और उर्वर कल्पनाशीलता का ही परिणाम है कि उन्होने विशेष्य से अधिक विशेषणो को महत्व दिया।

दिवानी चोटे, ढरकीला श्रम, मीठी याद, स्वप्निल हाला, मधुमय पीडा, अरूण बान, स्वप्निल धन, व्यथासिक्त चितवन, निष्कल दिन, मूक परिचय, चौकी रजनी, तन्दिल पल, सुरभित पंख, पंथहीन तम, कटकित मौलक्षी, धूमछॉह विरह बेला, पुलकित स्वप्न, पुलकित अवनी, सलज शेफानी, अस्कूट मर्मर, चित्रित पंख, दिग्भ्रांत झंझा, उलझा दुख, स्पंदित व्यथा, शिथिल कारा, रसमय प्रस्तर, सुनहल हास, स्निग्ध सुधि, एकाकिनी बरसात आदि। महादेवी के विशेषणो में अधिक चमक और कलात्मक सूक्ष्मता पायी जाती है। अपनी

जैवी प्रकृति के उन्होने नारी सुलभ विशेषणों का प्रयोग अधिक किया है– जैसे सलज शेफाली, तन्द्रिल पल, दीवानी चोटे इत्यादि। चूकि उनका आगमन छायावाद के प्रौढकाल मे हुआ था, अत उन्होने पूर्व प्रचलित चित्रोपम विशेषणो को भी ज्यो का त्यो अपना लिया है। 'स्वप्निल धन' और 'मधुमय पीडा' आदि विशेषण ऐसे ही हैं। अत्यधिक प्रयोग के कारण ये लाक्षणिक विशेषण भी अपनी मूर्तिमक्ता खो चुके है। अत इस प्रकार के विशेषण केवल एक अतिरिक्त अलकृति का काम करते है। महादेवी जी की निजी विशिष्टता की झलक हमे दूसरे प्रकार के विशेषणो मे मिलती है– जैसे धूपछाही विरह बेला, निष्कल दिन, एकादिनी बरसात। इनमें से अन्तिम विशेषण ध्यान देने योग्य है। बरसात को एकादिनी कहकर उन्होंने उसकी सारी करूणा को जैसे मूर्त कर दिया है। उनके अधिकाश विशेषण व्यथा अथवा वेदना प्रधान है। यह उनके दुखवादी जीवन–दर्शन के अनुकूल ही है। ताजगी और नवीनता की दृष्टि से महादेवी जी के विशेषण पन्त और निराला के विशेषण की तरह स्वत स्फूर्त नहीं है। उनमे कल्पजनित आवेग कम और कलात्मक सतर्कता अधिक है। उनके विशेषण का क्षेत्र बहुत विस्तृत नही है।

महादेवी जी की कविताओ का सौंदर्य वर्णगन्धमय बिम्बो के संकलन मे उतना नही है, जितना सूक्ष्म और एकोन्मुख प्रतीको की योजना मे। रहस्यपर कवियित्री होने के कारण उन्होने अपनी प्रारम्भिक कविताओं में व्यजनागर्थी बिम्बों का प्रयोग अधिक किया है। रश्मि और नीहार में जो दीप, फूल, आकाश और निर्झर इत्यादि के चित्र आये है। उनमे बिम्बात्मकता अवश्य है पर साथ ही वे प्रस्तुत सदर्भ के अतिरिक्त किसी

गहन अपरोक्ष सत्ता की ओर भी सकेत करते है। इस दृष्टि से उन्हे प्रतीकात्मक बिम्ब कहना अधिक सगत होगा। बाद की कविताओ मे इन बिम्बो की इतनी आवृत्ति हुई कि उनका ऐन्द्रिय और मूर्त रूप विलीन हो गया और वे निश्चित रहस्यात्मक सकेतो के वाहक बन गये। इसीलिए उनके काव्य मे सूक्ष्म की भावना अधिक मिलती है, स्थूल का रूपाकार कम। आधुनिक कवि के वक्तव्य उन्होने स्पष्ट शब्दो मे कहा है कि मेरी कविता यथार्थ की चित्रकर्त्री न होकर स्थूलगत सूक्ष्म की भावुक है। उनके बिम्बो का चयन मुख्यत दो क्षेत्रो से हुआ· प्रकृति तथा नारी जगत। प्रकृति के अन्तर्गत उन्होने प्राय उन्ही दृश्यो को ग्रहण किया है जो सामान्यत सम्पूर्ण छायावादी कवियो मे पाये जाते है– जैसे सध्या, प्रभात, वसत, और प्रवास। पन्त यदि चॉदनी के कवि है और निराला बादलो के तो महादेवी एकाकिनी बरसात की कवियित्री कही जा सकती है। उनके सध्या और प्रभात के चित्राकन मे भी सूक्ष्मता और अलकृति अधिक है। एक ही दृश्य को उन्होने अनेक कलात्मक बिम्बो मे बॉधने का प्रयास किया है। सूर्योदय के लिए मूर्त कल्पनाएँ देखिए–

1 तम–तमाल के फूल

गिरा दिल पलके खोली।

2. रजनी ने मरकत वीणा पर

हॅस किरनो के तार संभाले।।

पहले बिम्ब मे प्राकृतिक तत्वो की प्रधानता है। पर दूसरे बिम्ब मे जो रूपक प्रस्तुत किया गया है, उसमे नारी जगत की जानी–पहचानी वस्तुए अधिक है– जैसे मरकत, वीणा, तार, हॅसी। इसी प्रकार महादेवी जी का बिम्ब विधान परिचित और अपरिचित, अभ्यतर और बाह्य दोनों प्रकार के तत्वो से मिलकर गठित हुआ है। पर अनुभूति के स्तर पर उनके बिम्ब आत्मनिष्ठ और अन्तर्मुखी अधिक है। वे अपने अनुभूति– क्षेत्र से बाहर निकलकर जीवन और प्रकृति के बृहत्तर क्षेत्रो में जाने का प्रयास बहुत कम करती है। इससे अनेक बिम्बो मे अपरिचय जन्य आघात देने की क्षमता कम और आत्मीयता पूर्ण सह–अनुभूति जगा सकने की सामर्थ्य अधिक है। प्रकृति और नारी जगत के अतिरिक्त उन्होने बाल्मीकि और कालिदास की प्रभाव–छाया अद्भूत सस्कारी बिम्ब भी हिन्दी को दिये है। जैसे–

'यह विरह की रात का कैसा सवेरा है
पक का रथ चक्र से लिपटा ॲधेरा है।'

रथचक्र से लिपटे हुए पक की धारणा आज की नहीं है। इसीलिए इस उपमा मे रथचक्र से सबधित अनेक ऐतिहासिक अनुषगों को जगाने की क्षमता है। पर महादेवी जी के काव्य मे ऐसे सस्कारी बिम्बो की सख्या बहुत कम है। जहॉ तक निर्माण–प्रक्रिया का प्रश्न है, महादेवी जी की सभी कविताओ में बिम्ब संघटन का सॉचा लगभग एक ही है। उनके अधिकाश बिम्ब अन्योक्ति अथवा रूपक प्रधान है। इसीलिए अनेक गीतों के अलग–अलग चित्र एक समन्वित और धनीभूत रूप में हमारे सामने आते

है। वस्तुत उनका एक गीत एक पूरा बिम्ब होता है। दीपक, शलभ, नदी, समुद्र, निर्झर, शून्य, मन्दिर इत्यादि उनके प्रमुख प्रतीक है जिनको विभिन्न अर्थ–सदर्भों मे रखकर उन्होने अनेक व्यजनागर्भी बिम्बो का निर्माण किया है। समुद्र और नदी के रूपक का तो प्राय सभी छायावादी कवियो ने प्रयोग किया है। यह एक ओर उनके बिम्बो के सार्वभौम स्वरूप का। जैसे छायावादी कवि असीम से सीमा की एकाकारता का आकांक्षी था, उसी प्रकार निराला के शब्दो में, वह अपने 'तमाम चित्रो का अनादि और अनन्त सौदर्य मे मिलाने की चेष्टा भी करता था।

वैसे तो यह सम्पूर्ण छायावादी काव्य की एक विशेषता है, पर महादेवी जी के बिम्ब–विधान का यह प्रमुख चरित्र–लक्षण है।

प्रसाद और महादेवी वर्मा के काव्य मे छायात्मक बिम्ब सबसे अधिक मिलते है। महादेवी के एक प्रसिद्ध गीत की निम्नलिखित पंक्तियॉ देखिये–

"मेरा पग–पग संगीत भरा
श्वासो से स्वप्न– पराग झरा"
नभ के नवरग बुनते दुकूल
छाया मे मलय– बचार पली"

छायावादी चित्र भाषा पद्धति के सभी तत्व इस छनद मे वर्तमान है। पर कुल मिलाकर ये पक्तिया कोई स्पष्ट चित्र नहीं दे पाती। इसकी अस्पष्ट मोहकता पाठक के मन केवल एक छाया की सृष्टि भर करती है।

पर जहॉ इस अस्पष्टता की पृष्ठभूमि अधिक सहज और आत्मीय होती है, वहॉ छायात्मक बिम्ब मे अधिक व्यजकता और तीव्रता आ जाती है

"कोन आया था न जाने
स्वप्न में मुझको जगाने
याद मे इन ॲंगुलियो की
है मुझे पर युग बिताने"

इस छन्द मे बिम्ब केवल एक ही है, स्वप्न मे देखी हुई ॲंगुलियो। पर चूकि स्वप्न मे आने वाले व्यक्ति की सत्ता रहस्यमय है अत ॲंगुलियो का भी कोई स्पष्ट चित्र नही बनता। इस अस्पष्ट अग्राहम चित्र मे जो तीव्रता आई है वह 'जगाने' क्रिया की ऐन्द्रिय अनुभूति के कारण।

स्वभाव से ही चित्र कर्त्री होने के कारण महादेवी जी ने कुछ अत्यन्त सकल धनात्मकक बिम्बो की सृष्टि की है। उदाहरणः—

"पूछता क्यो शेष कितनी शत
अमर सम्पुट मे ढला तू
छू नखो की कांति चिर
स्केत पर जिनके जला तू
स्निग्ध सुधि जिनके लिए कज्जल दिशा में हॅस चला तू
परिधि बन घेरे तुझे वे ॲंगुलियॉ अवदात"।

कहीं–कहीं अमूर्त वस्तुओं के मिश्रण से भी बिम्ब निर्माण का प्रयास किया गया है। महादेवी की एक पंक्ति हैः–

सजनि, अन्तर्हित हुआ है 'आज' में धुँधला विफल 'कल'

यह एक भिन्न प्रकार मिश्रित बिम्ब है, जिसका प्रत्यक्षीकरण 'आज' और 'कल' के साथ जुड़ी हुई पाठक की व्यक्तिगत स्मृतियों के आधार पर ही संभव हो सकता है।

काव्य के श्रेष्ठतम बिम्बों में एक प्रकार की प्रतीकात्मकता होती है। काव्यात्मक बिम्ब में यह प्रतीकात्मकता दो प्रकार से आती है– विभिन्न प्रंसगो में, एक ही बिम्ब की अनेक कलात्मक आवृत्तियो के द्वारा तथा लाक्षणिक वक्रताओं के द्वारा। छायावादी कवियों ने दोनों पद्धतियों का अवलम्बन किया है। पहली पद्धति का उपयोग महादेवी की कविताओ में देखा जा सकता है और दूसरी पन्त और प्रसाद आदि की कविताओं में। महादेवी जी की कृतियों में दीप, फूल, बाती, तूली, झंसा, नक्षत्र आदि शब्दो की बार–बार आवृत्ति हुई है। फलतः उनकी बाद की रचनाओं में ये शब्द अपने एक निश्चित अर्थ के वाहक बन गये हैं। दूसरे शब्दों में इनमें प्रतीकों की सी एकोन्मुखता आ गयी है। एक उदाहरण–

"यह मन्दिर का दीप इसे नित जलने दो!

झंझा है दिग्भ्रान्त, रात की मूर्च्छा गहरी

आज पुजारी बने ज्योति का यह लघु प्रहरी

जब तक लौटे दिन की हलचल,

तब तक रह जाएगा प्रतिपल

रेखाओ मे भर आभा–जल

दूत सॉस का, इसे प्रभाती तक चलने दो''।

इस पूरे छन्द का केन्द्रीय बिम्ब 'मदिर का दीप' है। पर ध्यान से देखा जाए तो 'मदिर का दीप' एक उपलक्षण मात्र है। मुख्यार्थ दीपक नामक पदार्थ से सर्वथा भिन्न है। तात्पर्य उस कृति साधक से है, जो अधकार मे भी ज्योति की क्षीणतम आशा को अपने भीतर सॅजोये रहता है। इस व्यग्यार्थ की प्रमुखता के कारण 'दीप' शब्द का पूर्ण बिम्ब ग्रहण नही होता। पाठक सीधे उसे साकेतित अर्थ तक पहुॅच जाता है। पर बाद की पक्तियों मे 'दीप' के बाह्य परिवेश का जो चित्र दिया गया है, वह निस्सदेह पाठक के मन में रात की अत्याहत शाति का एक मूर्त रूप उपस्थित करता है अत 'दीप' शब्द का उसके प्रस्तुत अर्थ के साथ किसी न किसी रूप मे सम्बन्ध अवश्य बना रहता है। उसकी उसी द्विमुखी भूमिका के कारण उसे प्रतीकात्मक बिम्ब की सज्ञा दी गयी है। तात्पर्य यह है कि हिन्दी कविता के इतिहास मे छायावादी कवियो ने ही पहले–पहल बिम्ब को उचित प्रतिष्ठा दी और उसी के हाथो वह कलात्मक प्रौढता की अछूती ऊॅचाइयों तक भी पहुॅच सका।

महादेवी के काव्य में बिम्बों का अध्ययन :

महादेवी के बिम्ब – विधान पर मूर्तिकला एव चित्रकला का विशेष प्रभाव है। इन्होंने स्वंय स्वीकार किया है–"व्यक्तिगत रूप से मुझे मूर्तिकला विशेष आर्कषित करती है, क्योकी उसमे कलाकार के अन्तर्जगत का वैभव ही नही बाह्य आभास भी अपेक्षित रहता है।" आगे इन्होने अपनी धारणा को स्पष्ट करते हुए लिखा है। – "कुछ अजन्ता के चित्रों पर विशेष अनुराग के कारण और कुछ मूर्तिकला के आकर्षण से चित्रों मे यत्र–तत्र मूर्ति की छाया आ गयी है। वह गुण है या दोष यह तो मैं नही बता सकती, पर इस चित्रमूर्ति सम्मिश्रण ने मेरे गीत को भार से नही दबा डाला, ऐसा मेरा विश्वास है।" इस तरह छायावादी कविता पर यदि चित्रकला की विधाओ पर भी प्रभाव पडा है, तो महादेवी की कविताओ पर सर्वाधिक। यह अवश्य है की महादेवी को चित्रकला की कोई विधिवत शिक्षा प्राप्त नही है जिसे ये स्वंय स्वीकार करती है तथापि इनके चित्र कविताओं के प्रसादन मे समर्थ है।

महादेवी के बिम्बो की दूसरी विशेषता अनाविल करूणा की अधिकता है। इसलिए इनकी कविताओं में करूण मुद्राएं अधिक व्यक्त हुई हैं। – मृत प्राय शिशु, अंधेरा, शिखा– विकम्पित दीपक इत्यादि । यहां यह कहना अनावश्यक न होगा कि चित्रकला के उपर्युक्त प्रभाव के कारण इनके काव्य

मे सबल वर्णपरिज्ञान मिलता है। इन्होने रगो के सहारे अपने चित्रो मे 'शेड ' —पर्स्पैक्टिव' और वैल्यू के अच्छे निर्देशन प्रस्तुत किए है। फलस्वरूप इनके बिम्ब विधान मे भी ऐसे रंगीन रेखाकन मिलते है। उदाहरण के लिए 'सध्या' और 'प्रभात' के दो चित्र नीचे दिए जाते है।

1

गुलालो से रवि का पथ लीप
जला पश्चिम मे पहला दीप
विहसती संध्या भरी सुहाग
दृगो से झरता स्वर्ण— पराग।

2

स्मित ले प्रभात आता— नित
दीपक दे सध्या जाती ।
दिन ढलता सोना बरसा
निशि मोती दे मुस्काती ।।

इस तरह इनमे रगबोधमयी सप्राणता मिलती है। कुछ अन्य उदाहरण भी देखे जा सकते हैं। ———

सीपी से नीलम से द्युतिमय
कुछ पिग अरूण कुछ सित श्यामल ,
कुछ सुख – चचल कुछ दुख – मथर
फैले तम – से कुछ तूल विरल
मॅडराते शत – शत अलि—बादल। **(दीपशिखा)**

अथवा

"स्वर्ग – कुकुम में बसाकर

है रगी नव मेघ – चूनर

बिछल मत घुल जायेगी

इन लहरियो मे लोलरी ।

चादनी की सित सुधा भर

बांटता इनसे सुधाकर

मत कली की प्यालियों में

लाल मदिरा घोल री

मत अरूण घूंघट खोल री।।" **(नीरजा)**

इन उपर्युक्त पक्तियो का वर्ण परिज्ञान देखते ही बनता है। यह वर्ण परिज्ञान काव्य कला विशेषकर बिम्ब विधान के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। रगबोध की बारीकी से बिम्बो में ऐन्द्रियता और अभिव्यक्ति में व्यजक वक्रता आ जाती है। साथ ही रगो से कवि की आन्तरिक मनोवृत्ति का पता चलता है। इसलिए वाट्स , थियोडर , डटन , शुक्ल जी ने आलोचना के रंगबोध के विश्लेषण को महत्व दिया है काव्य मे रगों के प्रयोग का कवि की प्रकृति से ऋजु सम्बन्ध होता है। इसीलिए रंगविशेष कवि के सम्पूर्ण व्यक्तित्व और आन्तरिक प्रकृति का वाचक बन जाता है। पन्त और प्रसाद के लिए लाल रग , निराला के लिए नीला रग और महादेवी के लिए सफेद रंग उनके व्यक्तित्व के लिए वाचक हैं। लाल से अनुराग की , नीला से सात्विक शान्ति की और सफेद से स्वच्छता की अभिव्यक्ति होती है।

महादेवी के काव्य मे श्वेत और श्वेत रग वाले पदार्थों का प्रचुर प्रयोग है। जैसे—

"निशा को धो देता राकेश, चादनी मे जब पलके खोल
कली से कहता था मधुमास, बता दो मधु मदिरा का मोल"।

वस्तुतः, "सफेद रग से स्वच्छता का बोध होता है। चन्द्रमा, ओस, मोती और चांदी आदि वस्तुएं स्वच्छ है। यह तेजस्वी रूप है इससे सात्विकता टपकती है। किसी भी सात्विक भाव की अभिव्यक्ति के लिए साहित्यकारों ने इसी रग को अपनाया । इस सफेद रग से वे मनोजगत की उन पवित्र वस्तुओ का निरूपण कर देते है जो सुकुमार, स्वच्छ और प्रभावशाली है। हिन्दुओं के मार्मिक ग्रन्थो मे सफेद रगो में शुद्व रगो में शुद्व गायत्री भी है, और देवता विष्णु है। गगा, शिव, कैलाश, हिमालय, शेष, ऐरावत आदि सफेद रगवाली वस्तुए है। इन वस्तुओं का उपमान लेकर कवि कभी— कभी अपने वर्ण विषय की सुन्दर अभिव्यक्ति कर पाते हैं। इस प्रकार श्वेत रग सात्विकता के भावो को स्पष्ट करता है। महादेवी के काव्य मे ओस, चादनी, निहार आदि के प्रचुर प्रयोग श्वेत प्रियता के ही फल हैं। इनके काव्य—ससार में नख—चरणों को ज्योति भी श्वेत है और कवियों के प्याले धोने वाली चादनी भी श्वेत है—

मधुर चादनी धो जाती है
खाली कलियो के प्याले।

इसके अलावा महादेवी को आत्म – प्रसाधन या अधिविन्यासन के लिए भी श्वेत रग ही अत्यन्त प्रिय है। वे सर्वत्र श्वेत वस्त्र धारण करना चाहती है। जैसे–

''जाने किस जीवन की सुधि ले

लहराती आती मधु बयार '' ।

पाटल के सुरभित रगो से रग दे हिम–सा उज्जवल दुकूल

गुथ दे रशना मे अलिगुंजन से पूरित झरते बकुल फूल।

यहां स्मृति – उल्लास और प्रियतम के अभिनन्दन की तैयारी मे क्षणोत्सविक वस्त्र (चार प्रकार के होते हैं , नित्यनिवसनिक ,नियज्जनिक , क्षणोत्सविक और राजद्वारिक) का वर्णन है। जो प्राय· बेल– बूटेदार और चाक्यचिक्य से भरा होता है। किन्तु कवयित्री को श्वेतिमा और सादगी से इतना स्नेह है कि वह मिलन – त्योहार के समय भी पाटल जैसे श्वेत पुरुष के समान उजला वस्त्र धारण करना चाहती है। निश्चय ही यह श्वेतप्रियता कवयित्री की आन्तरिक सात्विक वृत्ति की परियाचिका है। इस सात्विक वृत्त की पुष्टता के अनुपात मे इनकी वृत्तियो मे रगो का वैविध्यपूर्ण वैभव घटता गया है। डा0 नगेन्द्र का यह मन्तव्य समाचीन प्रतीत होता है कि सांन्ध्यगीत मे संध्या की पृष्ठभूमि हाने के कारण उसके चित्रों में रंगों का वैभव अधिक था। परन्तु दीपशिखा के गीतों मे उसके चित्रों की ही तरह केवल दो रग हैं। हल्का नीला और सफेद । जहा कही अधिक रगों का प्रयोग है भी , वहा ये सभी रंग इस तरह से मिला दिये गए हैं कि किसी की भी स्वतत्र सत्ता ना रहे– इसलिए इन चित्रों मे पारद के मोतियो जैसी कोमलता आ गई है।

इस वर्ण्य परिज्ञान के अलावा महादेवी के बिम्ब विधान की एक विशेषता यह है कि इनकी रचनाओ मे व्यापार–विधायक बिम्बो की प्रचूरता है जैसे "मोम सा तन धुल चुका अब दीप सामान जल चुका है"। मै जलने और धुलने के दो व्यापारो से (जलने हुए दीप और धुलती हुई मोमबत्ती के बिम्ब से) विरह की सम्पूर्ण बेकली एव वेदना को व्यंजित करने की चेष्टा की गई है।

महादेवी ने कुछ स्थलो मे चित्रोपम बिम्ब विधान के सहारे प्रकृति का चित्र प्रस्तुत किया है ऐसे बिम्बों के निर्माण मे कल्पना के सम्भूर्तन से काम लिया गया है। और सम्पूर्ण चित्र फलक को कल्पना की उदात्य संयोजक शक्ति की विशाल पट भूमिका प्रदान की गई है। जैसे अवनि, अम्बर के बीच अधिष्ठित ज्योति सागर के लिए रूपहली सीप मे तरल मोती का अप्रस्तुत अत्यन्त चित्रोपम हुआ है –

अवनि अम्बर की रूपहली सीप में
तरल मोती सा जलधि जब कॅापता
तैरते धन मृदुल हिम के पुंज से
ज्योत्सना के रजत पारावार में

इस तरह महादेवी ने बिम्ब विधान में विधायक कल्पना का प्रचूर प्रयोग किया है। किन्तु इनकी विधायक कल्पना कभी–कभी पाठकों ग्राहक कल्पना का ख्याल नही रखती है फलस्वरूप ऐसे स्थलो में इनकी चित्र

श्रृखला अबूझ पहेली बन जाती है और पाठको को रसो बोध के बदले मानस चाप दे पाती है।

महादेवी ने चित्रोपम बिम्बो की योजना प्राय· सूक्ष्म भावो के गोचर विधान के लिए ही की है। अनुभव गम्य सूक्ष्म भावो को चाक्षुष बिम्ब विधान के सहारे गोचर प्रत्यक्षीकरण के स्तर पर ला देना कवि कल्पना की मूर्ति विद्यायनी शक्ति का सर्वोत्तम निष्कर्ष है। उन्होने सूक्ष्म भावों के ऐसे गोचर प्रयत्यक्षीकरण मे वस्तु अथवा वस्तु के व्यापार विशेष का सहारा लिया है। जैसे –

सुनहले सजीले रंगीले धवीले
हसित कंटकित अश्रु – मकरन्द नीले
विखरते रहे स्वप्न के फूल अनगिनत
(दीपशिखा)

यहॉ वस्तु के सहारे गोचर प्रत्यक्षीकरण हुआ है। अर्थात भावात्मक स्वप्न की रगामेजी को वर्ण बहुल्य फूलो के अप्रस्तुत से मूर्ति बना दिया गया है इसी तरह सहानुभूति की वर्जना जैसे सूक्ष्म भाव का प्रत्यक्षीकरण व्यापार के सहारे प्रस्तुत किया गया है –

अब तरी पतवार जाकर
तुम दिखा मत पार देना
आज गर्जन मे मुझे बस
एक बार पुकार लेना (दीपशिखा)

किसी पार जाने वाले व्यक्ति को तरी और पतवार लाकर पार दिखा देना सहानुभूति का व्यापार है और ,ऐसे व्यापार है और ऐसे व्यपार का मत कहकर निषेध करना उस सहानुभूति की वर्जना का प्रयत्क्ष चित्र प्रस्तुत कर देता है इस प्रकार सूक्ष्म भावो के गोचर प्रत्यक्षीकरण की सफलता महादेवी के बिम्ब –विधान की एक नायाम विशेषता है। सचमुच सूक्ष्म भावो के ऐसे विचार – विधान से कविता की प्रभविष्णुता बहुत अधिक बढ जाती है। जैसे–

यह सपने सुकुमार तुम्हारी स्थिति से उजले

अथवा

आते अक्षरहीन व्यथा की लेकर पाती

अथवा

बिध गले पंगों में शूल व्यथा के दुर्मिल

इत्यादि जैसी पक्तियो में सुकुमार सपनो का किसी की स्थिति से उजला होना, अतिरिक्त व्यथा की पाती लेकर आना और पगो में व्यथा के दुर्मिल शूलो का चुभ जाना व्यापार मूलक गोचर विधान के सुन्दर उदाहरण है। इसी तरह–

चाह की मृदु उगलियों से छू हृदय के तार

जो तुम्ही छेड दी, मै हूॅ वही झकार।

मै 'चाह की मृदु उगलियो' का प्रयोग इसी का गोचर विधान है महादेवी ने जिस प्रकार सूक्ष्म भावो का

गोचर विधान किया है उसी प्रकार इन्होने गम्भीरता और कलात्मक प्रभिविष्णुता के लिए मूर्त को भाावात्मक रूप देकर उसका अमूर्त विधान किया है । मूर्त को अमूर्त बनाना कल्पना की वह दुर्लभ प्रक्रिया है जिसे हम भावनायन कह सकते है, जैसे–

सुधि तेरी अविराम रही जल

पद ध्वनि पर आलोक रहूंगी वारती।

यहा किसी सधि मे तिल तिल कर जलने वाले व्यक्ति के लिए सुधि के जलने का ही उल्लेख किया गया है। महादेवी मे ऐसे अमूर्त विधान प्रिथूल मात्रा मे मिलते है ।

नाश मे जीवित किसी की साध सुन्दर हूॅ।

महादेवी ने साहित्य के अनेक जीर्ण बिम्बो का काया कल्प भी किया है और उन्हें वक्र व्यंजना से मार्मिक नूतन अर्थ छविया प्रदान की है उदाहरण के लिए हम कालिदास के 'ऋतुसहार' के उस चित्र को ले सकते है जहा ज्योत्सना स्नात शारदिया को वयः सन्धि में पहुची हुई शुभ्र वसना के रूप मे चित्रित किया गया हैं।

तारागण भूषण मृदु हन्ती

मेघावरोध परिमक्त शशाक वक्ता

ज्योत्सना दुकूल ममल रजनी

दधाना वृद्विम्प्रयत्यानुर्दिनं प्रमदेव बाला

अर्थात बादल हटे हुए चन्द्रमा के मुंह वाली आज कल की रात तारो के सुहावने गहने पहने हुए और चॉदनी की उजली साडी पहने हुए अलवेली नवेली के समान दिन दिन बढती चली जा रही है । चॉदनी रात के ऐसे चित्र संस्कृत के अलकृत काल से लेकर महादेवी समकालीनो तक अनेक बार प्रयुक्त होते रहे है और अन्त तक अपनी मार्मिकता खो चुके है लेकिन चित्र के उसी फलक पर समान बिम्ब दृष्टि के सहारे महादेवी ने कितनी उदाप्त चित्र कल्पना की है।

अवनि अम्बर की रूपहली सीप मे

तरल मोती सा जलधि जब कापता है

तैरते घन मृदु हिम के पुज से

ज्योत्सना के रजत पारावार मे

यहा धरती और आकाश के दो सम्पुटो मे सागर का तरल मोती की तरह स्पन्दित होना और समुद्र मे तैरने वाले 'आइस वर्ग' अथवा निहारिका के सदृश्य चादनी मे विरल घन खण्डो का तैरना कितना भव्य बिम्ब विधान है । इसी प्रकार संस्कृत साहित्य मे लीला कमल के अनेक सलील चित्र मिलते है, जैसे –

हॅसते लीला कमल जल के बाल कुन्दानुविद्व

नीता लोध्र प्रसव रजसा पाडुता माननक्षी

चूडापाशे नव कुरबंक चारू करणे शिरिषं

सीमन्ते च त्वदुपगमज यत्र नीयम वधूनाम्

(मेघदूत)

इतना ही नही प्राचीन साहित्य मे लीला कमल के अनेक पर्यायो के लीलाम्बुज लीलारबिद लीलातामरस लीलापद इत्यादि– से सौन्दर्य सृष्टि का प्रयास किया गया है किन्तु महादेवी ने इस बहुचर्तित लीलाकमल को अर्पण तत्पर जीवन का अप्रस्तुत बनाकर जो मार्मिकता प्रस्तुत की है वह अप्रतिम है

जो तुम्हारा हो सके लीलाकमल यह आज

खिल उठे निरूपम तुम्हारी देख स्मिति प्राप्त

जीवन का विरह जल जात

महादेवी के कुछ आत्मनिवेदन परक गीतो के बिम्ब विधान मे भी सस्कृत साहित्य के बिम्बों की छाया मिलती है जैसे इन पक्तियो मे –

भूलती थी मै सीधे राग

विछलते थे कर बारम्बार

तुम्हे तब आता था करूणेष

उन्ही मेरी भूलो पर प्यार

उदयन और वासवदत्ता से मिलती–जुलती स्थिति का बिम्ब का ग्रहण मालुम पडता है

बहुरोप्युपदेशेषु यया मामीक्षमाणया

हॅसते नक्षत्रस्त कोणेन कृतमाका स्वादितम

अथवा प्रथम दो पक्तियो का बिम्ब 'उत्तरमेघ' को इन पक्तियो से भी साम्य रखता है

उत्सगे व मलिन बसने सौध निक्षिप्य वीणां

मदगोत्राक विरचित पद गेय मुगदातु काया

तन्त्रो मार्दा नयन सलिलै· सारयित्वा कथाचिद्

भूयो भूय स्वय मपि कृतामूर्च्छना विस्मरन्ति

यहा यक्ष अपनी प्रियतमा के विषय मे मेघ से कह रहा है कि किस प्रकार उसकी प्रिया विरह विह्ल होकर स्वयमेव रची हुई मूर्च्छना को बार बार भूल जाती होगी।

इस तरह महादेवी के बिम्ब विधान या अप्रस्तुत योजना और भाषा पर कालिदास का प्रचुंर प्रभाव है । इनके कुछ बिम्ब अन्य बिम्ब अथवा रूपक से भी प्रकृष्ट साम्य रखते है जैसे इनकी निम्न लिखित प्रसिद्व पक्तियो –

मृदुल अक धर दर्पण सा सर

आज रही निशि दृग इन्दीवर

का दृग इन्दीवर श्रृगार तिलक की इन पक्तियों इन्द्रीवरण नयनम से साम्य तथा रखता सा दिख पडता है ।

इन्दीवरेण नयनम मुख मंम्बुजेन

कुन्देन दन्तु मधुरम् नव पल्लवेन

अगानि चम्पक दलै सविधाय

धाता कान्ते कथ घटित वानुपलेन चेत ।

इसी प्रकार 'अमरूकशतक' मे भी दृष्टियैव नन्दीवरेषु का प्रयोग मिलता है।

दीर्घावन्दन मालिका विरचिता दृष्टियैव नेन्दीवरेषु·
पुष्पाणाम प्रकर· स्मितेन रचितो नो कुन्द जात्यादिभि
दन्तस्वेद मुखा पयोधरयुगेनाहर्यो न कुम्भाम्भसा
स्वैर पाक्यैव· वे प्रियस्य विशत स्तम्या कृत मगलम ।

पुनः संस्कृत के अन्य श्लोको में भी ऐसी अप्रस्तुत योजना मिलती है ।

कमले कमलोपत्ति· श्रयते न तु दृश्यते
बाले!तब मुखाम्भोजे कथनिन्दीवर द्वयम्

अथवा

पाणौ पद्यधिया मधूक मुकुल भ्रान्तया तथा गन्डयों
नीलेन्दीवर शक यानयनयो र्वेन्धूक बुद्ध्याधरे
लीयन्ते कवरीषु बान्धव जन व्यामोह बद्वस्पृहा।
दुर्वारा मधुपा क्रियन्ति सुतनु! स्थानानि रक्षिष्यसि

(पाणिनी)

अथवा

विलोचनेन्दीवरवासवासिते सितैरंपागद्ववग चन्द्रिकां चलैः

त्रपामयाकृत्य निभात्रिभाम्यम क्षिति क्षिति मालय मालय

(श्री हर्ष)

'साध्यगीत' मे महादेवी ने सुमन रूपी खीलो (लावा) के बरसने चित्र प्रस्तुत किया—

तारक—लोचन से सीच सीच नभ करता रज को विरज आज

बरसाता पथ में हरसिगार केशर से चर्चित सुमन—लाज।

यहां पर कालिदास के 'रघुवशम्' का वह चित्र साम्य रखता सा प्रतीत होता है जहां प्रसून वत्सला लतिकाओ को विजयी राजा पर खील बरसाने वाला पौर कन्याओ की भूमिका में उपस्थित किया गया है—

मरूत प्रयुक्ताश्च मरूत्सखाभं तमर्च्यरादभि वर्तमानम्

अवाकिरन्वाललता प्रसूनैराचार लाजैरिव पौरकन्या।

(द्वितीय वर्ग)

इसी प्रकार महादेवी ने पावस की प्रकृति के नभरूपी उच्छ्वसित वक्षस्थल पर वक पातो के अरविन्दन्हार का चित्र प्रस्तुत किया है—

उच्छ्वसित वक्ष पर चचल है

बक—पॉतों का अरविन्द—हार

तेरी निश्वासे छू भू को

बन—बन जाती मलयज बयार।।

वहा भी कालिदास की बलाका बरबस याद आ जाती है—

मन्द—मन्द नुदति पावनश्चानुकुलो यथा त्वा

वामश्चाय नदति मधुर चातकस्ते सगन्धः।

गर्भाधान क्षण परिययान्नूनमाबद्व माला'

सेविष्यन्ते नयन सुभग खे भवन्त बलाका।

(पूर्वमेघ)

इतना ही नही महादेवी की उपर्युक्त चार पक्तियो के बाद आने वाली इस सुदार्ध पक्ति केकी–खकी–नुपुर–ध्वनि सुन जगती की मूक प्यास मे भी सस्कृत साहित्य के बिम्ब विधान से साम्य दिख पडता है। यहा जिस तरह केकी–ख की उपमा नुपुर ध्वनि से दी गयी है उसी तरह सस्कृत काव्य मे भी केकी–ख और विशेषकर हस स्वप्न की समता नुपुर–ध्वनि से दिखलाई गयी है। उदाहरर्णाथ प्रवर सेन की ये पंक्तिया दृष्टव्य है। ––

मन्मध धनुनिर्धोष कमलवनस्खलित लक्ष्मी नुपुर शब्द.।

श्रुयते कलहसं खो लघुकरीव्याहत नलिनि प्रति सलाप।।

छायावादी कवियो के बीच महादेवी के बाद पन्त मे ही प्राचीन बिम्बो का नूतन परिवेश में प्रयोग मिलता है। जैसे पन्त जी की शारद–हासिनी–

नीले नभ के रात दल पर

वह बैठी शारद हासिनि

मृदु करतल पर शशि मुख धर

नीख अनिमिष एकाकिनि।

पाणिनि की खण्डिता के समान 'मृदुकरतल' पर मुख टिकाने की अवस्था में दीख पडती है। पाणिनि ने भी मृदु करतल पर शशिमुख पर घर कर बैठी खडित नायिका का चित्र प्रस्तुत किया है। एक सखी उस खण्डित नायिका को आश्वासन देती हुई कहती है कि –

पार्णो शीणतले तनूदरि ! दरक्षमा कपोल स्थली–

विन्यस्त्राञ्जनदिग्ध लोचन जलैः किम्लानिमा नीयते।

मुग्धे । चुम्बतु नाम चचलतया भृग क्वचित्कन्दली–

भुन्भी लत्रव मालती परिमल· किम् तेन विस्मायते ।।

पुन· पन्त की 'भादो की मरन' की इन पक्तियो –

विरद दन्तो से उठ सुन्दर

सुखद कर सीकर से बढकर

मै मेघदूत की इस चित्र बन्दिश 'तस्या· पातु सुरगम इव त्योनि पूर्वार्द्व लम्बे'– की छाया तथ अगली पक्तियो –

भूति से शोभित बिखर बिखर

फेल फिर कटि के से परिकर

मे 'भक्तिच्छैदैरिव विरचिता भूति मगे गजस्य' की ध्वनि पडती हे । इतना ही नही, पन्त ने तो कुछ प्राचीन बिम्बो का अत्यन्त द्वध नव सस्ककरण प्रस्तुत किया है, जैसे–

गुजित अलि–सा निर्धन अपार ,मधुबन लगता धन अंधकार

मे लिम्पती बतमोडानि वर्षती बाधन नभः पर कैसी नयी कसी दाकारी है। इसी प्रकार प्रसाद की रचनाओं में वैदिक बिम्बों का अत्यधिक प्रभाव दृष्टि गोचर होता है उदाहरर्णाथ , अथर्व वेद का यह बिम्ब –

सिन्धोर्ग र्भसि विद्युता पुष्पाम्।

प्रसाद की 'कामायनी' मे एक नूतन सुषमा से मडित हो गया है–

नील परिधान बीच सुकुमार

खुल रहा मृदुल अधखुला अग

खिला हो ज्यो बिजली का फूल

मेघ वन बीच गुलाबी रंग। **(श्रद्धा–सर्ग)**

इसी तरह अर्थववेद मे हस के रूपक से योजित सूर्य का यह चित्रण –

सहस्त्र हव्य वियतावस्य पक्षौ हरे ईसस्य पतत· स्वर्गम् –

पन्त की इन पक्तियो मे –

उदयाचल से बालहस फिर

उडता अम्बर में अवदात

कितना सुन्दर रूप पाद गया है।

साराश यह है कि महादेवी की रचनाओ मे भी अन्य छायावादी कवियो की तरह अनेक जीर्ण बिम्बो का कायाकल्प मिलता है। किन्तु अन्तर यह है कि महादेवी के ऐसे बिम्बो मे से अधिकाश ,सस्कृत के अलकृत काल की रचनाओं के बिम्ब –बिधान से प्रभावित है।

जीर्ण बिम्बों को नूतन निवेश देने के अलावा महादेवी के बिम्ब –बिधान मे पूर्व स्मृति का जगा देने की शक्ति, नवीनता, तीव्रता, मास्मरता, औचित्य और उर्वरता की प्रचुर मात्रा है। किन्तु जिन रचनाओ में कवयित्री की जीवनानुभूति निहार नही सकी है। अनके बिम्ब बहुत ही धूमिल और अस्पष्ट हो गये है। कारण वाह्य तथा आभ्यन्तर जीवन और प्रकृति के विशाल क्षेत्र से छनकर महादेवी के अनेक बिम्ब जीवनानुभूति की दृष्टि से छुटे मालूम पडते हैं। ऐसे बिम्ब इनकी रचनाओं में अर्थगत अस्पष्टता बढा देते है। और प्राय, लम्बी श्रृखला का रूप धारण कर लेते है। जैसे, 'मै नीर भरी दुख की बदली', की प्रारम्भिक पक्तियां देखी जा सकती है। उनमें अनुभूति स्तोक बिम्बो की लम्बी और अनगढ श्रृखला को सुलझाते–सुलझाते पाठक पिछड कर रह जाते है । साराश यह है कि ऐसे बिम्ब –कवयित्री के वक्तब्य को प्रेषित करने मे न सहायता पहुचा सकते है। और न सन्दर्भ

मे आये अन्य बिम्बो के साथ अपना पारस्पर्य ही प्रमाणित कर पाते है। किन्तु यहॉ कवयित्री न विशेषणात्मक अथवा किया निर्भर बिम्बो की सृष्टि की है, वहॉ स्पष्टता अनुचरी बन गई है, जैसे–

नीरव नभ के नयनो पर

हिलती है रजनी की अलके–

यहा अधियाली (रजनी की अलकें) का बिम्ब हिलने की क्रियात्मक गत्यात्मकता के कारण अपने अर्थ –सौन्दर्य मे सर्वथा स्पष्ट है। इसी प्रकार प्राणो के अन्तिम पाहुन – छिप आना तुम छायातना मे ,अन्तिम और छायातन विशेषण ही बिम्ब को स्पष्ट कर पाते है। केवल प्राणो के पाहुन कहने से मृत्यु देवता का सकेत स्पष्ट नही हो पाता । पुन:–

तू एक अतिथि जिसका पथ है देख रहे अगणित हम

सॉसों मे घडिया गिन गिन

मे सांसों में घडियॉ गिनने के क्रिया –विलक्षण बिम्ब से सकेतित अर्थ और भी स्पश्ष्ट हो गया है

महादेवी वर्मा के अधिकांश बिम्ब प्रकृति से छनकर आये है, इसलिए इनमे वैविध्य और कर्म सौन्दर्य का अभाव है। इनमे निराला के बिम्बों की तरह न अधिकरण विस्तार है और न पन्त की तरह ऐन्द्रियता अथवा सक्षिप्तता ही। इनमे प्रकृति –परक बिम्बों के अलावा वैदिक साहित्य से प्राप्त बिम्ब भी मिलते है, जो अत्यन्त विरल है जैसे ––––

पक सा रथ –चक्र से लिपटा अँधेरा है।

किन्तु इस प्रभाव को हम पूर्णत: वैदिक साहित्य तक ही सीमित नही कर सकते , क्योंकि संस्कृत के अलंकृत साहित्य मे भी पंक से अन्धकार की

उपमा दी गई है। ऐसी औपम्य –योजना के एकाधिक उदाहरण मिलते है। जैसे भट्टि ने सूर्योदय –वर्णन मे उत्प्रेक्षा के अन्तर्गत पक से अन्धकार की उपमा दी है–

दुरुतरे पक इवान्धकारे मग्न जगत सन्तत रश्मिरज्यु ।

प्रनष्ट मूर्ति प्रविभागमुधन प्रत्युज्जहारेव सतो विवस्वापन्।।

अर्थात समस्त ससार गाढे कीचर जैसे घने अन्धकार मे धँसा हुआ है, जिससे स्थावर तथा जगम प्रााणियो के शरीर बिल्कुल नही दिखाई पडते । उदयाचल पर उदय होने वाला सूर्य रस्सी –रूपी किरणो को चारो ओर फैलाकर उस अन्धकार से ससार को, मानो उठा रहा है।

महादेवी के अनुवादों मे भी अर्थ या भावो की छाया नही, वैदिक बिम्बो का यथावत ग्रहण मिलता है–

स्कन्द देश पर कुन्त

दीप्ति अवतंश वक्ष पर

चरणो मे पर–त्राण

करों मे विधुत भास्वर

पहने स्वर्ण –किरीट

चमकते पथ पर शोभित

कशाधात से मेघ –अश्व

करते सचालित ,

रथी वीर के सदृश

त्वरित आ गये मरुतगण

काया उनके साथ।

सजल यह पावस का दिन।

यहा रथी वीर रथ –चक्र स्कन्ध देश पर कुन्त इत्यादि उपयुर्क्त दृष्टि से छायातव्य है। इसी प्रकार, –

तुम अनन्त जलराशि ऊर्मिभ मै चचल सी अवदात

अनिल –निपीडित जा गिरती जो फूलो पर अज्ञात

मे समुद्रोडयस्य नाड्य· पुरुषेधि समहितः की बिम्ब ध्वनि मालुम पडती है।

महादेवी की रचनाओ मे नाद प्रधान बिम्बो के सहारे उदात की सृष्टि नही मिलती है। इस फन मे छायावादियों के बीच निराला और पत ही माहिर है।जैसे,–

रवि हुआ अस्त, ज्योति के पत्र पर लिखा अमर

रह गया राम–रावण का अपराजेय समर

आज का तीक्ष्ण शर–विद्युत –क्षिप्र–कर वेग प्रखर

शतशेल सवरणशील ,नील नभ गर्जित स्वर ,

प्रतिपल परिवर्तन व्यूह ,भेद–कौशल –समूह

राक्षस –विरुद्व प्रत्यूह –कुद्ध –कपि –विषम –हूह।–

(राम की शक्ति पूजा – निराला)

और

गलित ताम्र भव, भुकुटि मात्र रवि

अथवा

वे डूब गये , सब डूब गये–––

दुद्रभ , उदग्रशिर ,अद्रिशिखर (पन्त)

इत्यादि की तरह नादोक्त बिम्ब महादेवी की रचनाओ मेकम मिलते हे, और जो वे सभी उदात्त –सृष्टि मे अक्षम है।

महादेवी के कुछ गीतो मे विश्रृखल बिम्ब मिलते है। ऐसे बिम्बो मे सदृश प्रभावो के सातत्य का अभाव रहता है। पूर्व उदाहरण मे नर भरी दुख की बदली ऐसे ही गीतो मे से एक हे। इस इस विश्रृखलता का एक कारण हे कि इनके बिम्ब नन्दतिक सूक्ष्मताओ के गोचर प्रत्यक्षयीकरण से अधिक उन अतृप्त इच्छाओं का समूर्प्तन प्रस्तुत करते है , जिन्हे कवयित्री सरेआम प्रकट करना नही चाहती फलस्वरूप अधीक्षक की भूमिका मे रहने वाले सुपर –इगो से प्ररित अपग्रव का दूसरा कल यह होता है कि इनकी कविता में बिम्ब विधान प्रधान और गौण का सबन्ध –निर्वाह नही कर पातें। बिम्ब विधान के लिए उचित यह है कि किसी गीत में एक बिम्ब प्रधान हो–

केन्द्रीय सार्थकता की ओर अनुधावित जिसे उपचित करने के लिए अन्य बिम्ब गौण बनकर आते हैं । किन्तु महादेवी के गीतो मे इसका निर्वाह नही मिलता । इनकी रचना मे किसी बिम्ब को प्रधान कहना खतरे से खाली नही है। प्राय इनके बिम्ब मूवी पिक्चर की तरह एक ,दो,तीन,कर पाठक की मना दृष्टि से स्फूर्तिवान बनकर निकल जाते है और उनमे वह अपेक्षित स्तभन नही मिलता , जो विलम्बित विभावनशील उपस्थिति के द्वारा किसी बिम्ब की रसानुभूति तक पहुँचाने के लिए आवश्यक हुआ करता है। अतः यह कहना सत्य से अधिक दूर नही है कि बिम्ब –विधान मे रसोद्बोधन से अधिक दूर नही है कि बिम्ब विधान में रसोद्बोधन से अधिक एक कैलिडों स्कोपिक वैविध्य मिलता है।

दूसरी ध्यातब्य बात यह है कि महादेवी के बिम्ब –विधान मे सूक्ष्म –निरीक्षण जनित सश्लिष्ट चित्रण कम मिलता है। इस अभाव का परिपार्श्विक फल यह हुआ कि इनके बिम्ब –विधान मे अनेक स्थलो पर वह ऐन्द्रियता नही आ सकी है, जिसके कारण निराला और पन्त के बिम्ब कला वरेण्य हो गये है। उदाहरण के लिए ये पक्तिया दृष्टव्य है।–

प्रिया यामिनी जागीं

अलस फडक दृग ,अरूण मुख तरूण अनुरागी ।

ज्योति की तन्वी ,तडित द्युति ने क्षमा मागी ।

निराला

अथवा

गगा के चल जल मे निर्मल ,कुम्हल किरणो का रक्तोपल है

मूद चुका अपने मृदुजल।

लहरो पर स्वर्ण रेखा सुन्दर पड गई नील जो अधरो पर

अरूणाई प्रखर शिशिर से डर

पन्त

यहाँ सभी बिम्ब ऐन्द्रियता से इस प्रकार उपेत है कि बरबस पाठक की रसग्राहकता को उदबुध्य कर देते है। किन्तु महादेवी के बिम्ब इतने सुलझे और स्पष्ट नही है। उनसे रसानुभूति अर्जित करने मे बुद्धि –व्यायाम करना पडता है। अर्थवोध की दृष्टि से इनके बिम्ब –विधान मे उपर्युक्त ऐन्द्रियता के अभाव पर बिम्बो की फिल्म जैसी गत्यात्मकता ने करैले पर नीम के काढे का काम किया है। फलस्वरूप इनके गतिशील बिम्ब पाठक की आंखो के समझ फिरकी बन जाते है।

महादेवी के बिम्ब –'विधान की एक विशेषता है–वस्तुओ और व्यापारो की सश्लिष्ट योजना सामान्यत· जहा वस्तु और व्यापार की सश्लिष्ट योजना रहती है , वहॉ बिम्बों मे अस्पष्टता नही रहती ˙ किन्तु महादेवी के बिम्ब –विधान मे वस्तु व्यापार की सश्लिष्ट योजना के रहते भी अस्पष्टता है। इसका कारण यह है कि महादेवी अपने काव्य मे मानसिक वृत्तियो और वातावरण को भी वस्तु व्यापारों को सश्लिष्ट योजना द्वारा ध्वनित करना चाहती है। फलस्वरूप उदेश्य की दुः साह्यता काव्य की अस्पष्टता बन जाती है जैसे–

रजनी ओढे जाती थी झिलमिल तारों की जाली ,
उसके बिखरे वैभव पर जब रोती थी उजियारी।

अथवा

विश्वासो का नीड निशा का बन जाता जब शयनागार
लुट जाते अभिराम छिन्न मुक्ता वलियो के वन्दनवार
तब बुझते तारो के नीरव नयनो का यह हाहाकार,
आसू से लिख–लिख जाता है कितना अस्थिर है ससार।।

ये दोनो चित्र व्यापार की संश्लिष्ट योजना और वातावरण निर्माण में अधिक शक्ति व्यय करने के कारण अस्पष्ट हो गये हैं। इस अस्पष्टता का दूसरा कारण लाक्षणिकता के प्रति अनावश्यक मोह है। इसका तीसरा कारण यह है कि छायावादी काव्य के व्यक्त प्रकृति के सौन्दर्य प्रतीको को न लेकर महादेवी जी ने उन प्रतीको को अव्यक्त गतियों और छायाओं का सग्रह किया है। इससे इनकी रचनाओ में वेदना की विवृत्ति और

रहस्यात्मकता बढ गई है। किन्तु वे स्थल कही कही अधिक दुरूह हो गये है। जैसे–

उच्छ्वासो की छाया में, पीडा के आलिगन मे।

नि·श्वासो के रोदन मे, इच्छाओ के चुम्बन मे

मै ढूढ रही थी लेकर धुधली जीवन की ज्योति।।

महादेवी की कविता मे उन सतही बिम्बो का भी प्रयोग मिलता है। जो प्रायः रूप सज्जा या अभिविन्यसन के लिए प्रयुक्त होते है। किन्तु इनके कुछ बिम्ब अन्तस्थ सहजानुभूति के चित्रात्मक वाहन भी होते है। उदाहरण के लिए यहा प्रयत्न श्रृगार की झाकी कितनी मर्म मधुर बन गयी है। –

शशि के दर्पण मे देख देख

मैने सुलझाए तिमिर केश

गूंथे चुन तारक पारिजात

अवगुष्ठन कर किरणो के अशेष

क्यो आज रिझा पाया उसको

मेरा अभिनव श्रगार नही ?

स्मित से फेर कर कीके अधर अरूण

गति के धावक से चरण लाल ,

स्वप्नो से गीली पलक आज

सीमन्त सजा ली अश्रु–माल

स्पन्दन निस प्रतिफल भेज रही

क्या युग युग से मनुहार नही ?

अत· महादेवी के ऐसे बिम्बो पर टी. ई. ह्यूम की यह बात लागू होती है– '' इमिजेज इन वर्स आर जाट मीथर डिकोरेशन्स , बट द वेरी इन्सेन्स आफ एन इण्ट्यूटिव लैग्वेज।'' सच मे सहजानुभूति से सश्लिष्ट होने के कारण से ही महादेवी के वे बिम्ब जो प्रयोग की आवृत्ति से अथवा व्यजना की घनता से प्रतीक बन सके है। लेह्नन के शब्दो मे एस्थेटिक मोनैडस अथवा हर्षर्ट रीड के शब्दो मे पोयेटिक गेस्टाल्ट कहे जा सकते है। महादेवी की रचना मे मिलन प्रसगों का प्राय· अभाव सा है। किन्तु जहा कही नित्य सयोग का भाव व्यक्त किया गया है। वहा मिलन प्रसग के सकेतक अनेक लौकिक बिम्ब अभिराम बनकर उपस्थित हुए है। ऐसे बिम्ब उन कविताओ में अधिक मिलते हैं। जिनमे कवियत्री के प्रिय के आगमन का रहस्य संकेत मिल चुका है जैसे।––वासकसज्जा का श्रगार , दर्पण, दर्शन, वेणी–बन्धन, समासोक्ति के माध्यम् से आलिंगन–चुम्बन इत्यादि के चित्र इस कोटि के बिम्बो मे गिने जा सकते है। इस प्रसग मे यह भी ध्यान देने की बात है कि महादेवी के अधिकांश बिम्ब विशेषण–निर्भर अथवा किया–निर्भर है। जो कला दृष्टि से सर्वथा स्वाभाविक है। पद रचना मे बिम्ब के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए श्री केदार नाथ सिंह ने भी इस ओर पाठको का ध्यान इन शब्दो मे आकृष्ट किया है। –– 'मुख्यतया वाक्य के तीन भाग हो सकते हैं। सज्ञा, विशेषण, और किया, इनमें बिम्ब की स्थिति किस मे होती है सह विचारणीय है। सामान्यतया वह कहीं भी किसी भी रूप मे हो सकती है। विशेष रूप से उसकी सत्ता विशेषण और किया मे ही मानी जाती है। कारण यह है कि वाक्य के वैशिष्टय को जितना विशेषण और कियायें व्यजित करती हैं उतना सज्ञा नही। सज्ञा तथ्य और

विशेषण तथा क्रिया क्रमशः भावना तथा प्रकृति या मानवीय चेष्टा को व्यक्त करते है। क्रिया से बिम्ब की गत्यात्मकता स्फुट होती है। और विशेषण से उसकी विलक्षणता तथा वैशिष्टय'। वस्तुत बिम्ब विधान मे विशेषण और किया का महत्वपूर्ण स्थान रहता है। छायावादी कवियो के बीच पन्त ने सर्वोत्तम विशेषण निर्भर बिम्बो की सृष्टि की है। उनका एक ही विशेषण सम्पूर्ण सन्दर्भ को अर्थजगत से चमत्कृत करता है। जैसे ——

दूर उन खेतो के उस पार

जहा तक गई नील झकार।।

में एक विशेषण नील सुदूर प्रसरित नीलिमा की नि शब्दता को व्यजित कर देने मे समर्थ है। इसी प्रकार निराला किया और किया विशेषण निर्भर बिम्बो के सफलतम शिल्पी हैं। ये वर्णन के कम में कुछ एसी गतिबोधक कियाओ और सटीक किया चिशेषण का चटुल प्रयोग कर देते है। कि वर्ण वस्तु का बिम्ब आखों के सामने स्पष्ट हो जाता है। जैसे सरोज, स्मृति, की इन पंक्तियो मे –

धीरे धीरे फिर बढा चरण

बाल्य की केलियो का प्रांगण

कर वार कुंज तारूण्य सुधर

आई लावन्य भार थर थर

कापा कोमलता पर सस्वर

ज्यो मालकोश नव वीणा पर।

की क्रिया और क्रिया विशेषणो के कारण इस वर्णन मे ऐसी चित्रात्मक रौनक आ गयी है जिसे हम स्वर क्रॉम्बी के शब्दो मे एन्चाष्टपेष्टा कह सकते है।

इस दृष्टि से महादेवी के बिम्ब विधान मे पन्त से अधिक समानता है कारण इनकी रचनाओं मे विशेषण निर्भर बिम्ब अधिक मिलते है जैसे–

ओ चिर नीरव । (दीपशिखा)

यहाँ मात्र दो विशेषणों चिर और निरव से पर्वत का बिम्ब बोध हो जाता है । पुन: इसी कविता मे कुछ विशेषणो विकल्प अश्रुन्तरल सुधि –वर्तन, फुल का फूल चीर,चचल उर्मि –विरल और गति विहृल से ही पर्वत को तोडकर निकलने वाली अविरल गति मे बहती हुई व्याकुल सरिता का विम्ब प्रस्तुत हो जाता है इसी प्रकार दीपशिखा के पांचवे गीत मे एक–एक विशेषण से ही सम्पूर्ण बिम्ब को उपस्थित कर दिया गया है। जैसे लास तन्मय तणित से चमकती हूई बिजली का भीत टारक मूँदते दृग से टिम टिमाते तारो का और भ्रन्त मारूत पथ न पाता से गुमराह बटोही की तरह फिर –फिर (गिरह मार कर) घूम आने वाले वाक्यचक का चित्र स्वत स्पष्ट हो जाता है।

किन्तु इस विवेचन का यह आश्य नही है कि महादेवी की रचनाओ में केवल विशेषण निर्भर बिम्ब ही मिलते है । कवयित्री ने कई स्थलों पर क्रिया निर्भर बिम्बों के भी मौजूँ उदाहरण प्रस्तुंत किया है जिनमें गत्वर क्रियात्यापारो का सुष्ठु आयोजन मिलता हैं । जैसे–

घेर ले छाया अमा वन

आज कज्जल अश्रुओं में रिम –झिमा ले यह घिरा धन

अथवा

जाने किस जीवन की सुधि ले

लहराती आती मधु बहार।

अथवा

अगरू गन्ध बयार ला–ला

विकच अलको को बसाती।

इन उदाहरणो में क्रियाओ के द्वारा ही क्रमश रूम झूम कर बरसने वाली बादल का, हस पदिका की तरह हौले –हौले इठला कर चलने वाली वंसन्ती वैहर का और मध्य कालीन श्रृगार युग मे धूप –धूम्र से केशपास वासित करने वाली सुकेशिनी का बिम्ब पाठको के समक्ष कर दिया गया है।

बिम्ब बैविध्य के कारण महादेवी की गीतों मे टेक के भावानुसार शेष पक्ति –पक्ति का अर्थ बैठाना बरी–बरी म लोन देने के समान वृथा प्रयत्न है क्योकि कवयित्री अमिधा से नही के बराबर काम लेती है। दूसरे इनकी कविता शब्द सकेतन न होकर चित्रधर्मी होती है अत इनकी कविताओ का अर्थ शब्द निर्भर नही होता है। यह बिम्ब व्यग्य होता है । प्रत्येक बिम्ब अपने आप मे यथा सम्भव पूर्ण रहकर भी एक दूर बहती पूर्णता से केन्द्रित वृहत्तर बिम्ब –वृत्य मे समाहित होने के लिए निश्चित दिशा की ओर अनुधावन करता है। इसी तरह प्रत्येक बिम्ब टेक की पंक्ति का सुदूर समर्थन करता है।

उदाहरण के लिए 'मै नीर भरी दुख की बदली' के प्रारम्भ होने वाली सम्पूर्ण कविता ली जा सकती है। इसमे प्रत्येक बिम्ब डेल्टा या मुहाना की समीपी धारा के समान विभिन्न शाखाओं में विभक्त रहकर भी एक सागर

–सगम (केन्द्रगत सार्थकता) के लिए प्रयत्नशील प्रतीत होता है। महादेवी के ऐसे बिम्ब विधान मे अभिव्यक्ति –लाधव या कल्पना का शार्क हैण्ड मिलता है तथा ऐसे बिम्ब विधान से निर्मित कविताओ के अन्तिम बन्द में हमे एक झटिर्ति के साथ वक्तब्य का औचक क्लोज अप मिलता है जैसे–

विस्तृत नभ का कोना कोना
.मेरा न कभी अपना होना
परिचय इतना इतिहास यही
उमडी कल थी , मिट आज चली।

महादेवी की कविताओ में कही –कही बिम्ब बिधान की चित्रोद्धत शैली मिलती है। इनकी मूडवाली कविताओ में जहॉ एक मूडा के चित्र की लपक कर पकडता हुआ दूसरा मूडा प्रारम्भ होता है यह शैली अधिकतर प्रयुक्त हुई , जैसे, साध्यगीत की एक कविता , जो इस चित्र से प्रांरम्भ होती है–

सो रहा हे विश्व , पर प्रिय तारकों में जागता है।,
निचति बन कुशली चितेरा–
रंग गई सुख–दुख रगों से
मृदुल जीवन –पात्र मेरा।

उसके अन्त में मूडा की भिन्नता के कारण ऐसा विपरीत बिम्ब जोड़ दिया गया है–

मेघ –रूधा अजिर गीला
टूटता –सा इन्दु कन्दुक
रवि झुलसता लोल पीला।

अत महादेवी का ऐसा बिम्ब –विधान सिलवर द्वारा वर्गीकृत चूराहोल्ड सिम्बॉलिज्म से सादृश्य रखता है। ऊपर के विवेचन मे यह कहा गया है कि महादेवी के बिम्बा श्रृगवित नही होता, वे टूटे हुए से विलग–विलग होते है। किन्तु बिम्बो के इस बिलगाव और टूट का कारण प्रतिभा का दुर्भिक्ष अथवा काव्यानुभूति की सच्चाई का एकान्त अभाव नही है। इनका कारण चित्रोन्मोह है। इनकी काव्य–कल्पना और चित्र –कल्पना सहचरी है किन्तु समुगत नही हैं जहा काव्य कल्पना और उडकर मध्य गगन मे बिहार करने लगती है, वहॉ इनकी चित्र –कल्पना किसी क्षितिज के पास धूनी रमाकर बैठी रह जाती है। अत बिम्बो की विश्रृखलता का कारण इस दौड मे पीछे पडने वाली चित्र –कल्पना के प्रति अतिशय मोह है। इन्होंने अपनी पगधरी चित्र कल्पना का रंगन करते हुए लिखा है। – 'मेरे गीत और मित्र दोनों के मूल मे एक ही भाव का रहना जितना अनिवार्य है उनकी अभिव्यक्तियों में अन्तर उतना ही स्वाभाविक है। गीत मे विविध रूप मे ,रंग, भाव, ध्वनि सब एकत्र है,पर चित्र मे इन सबके लिए स्थान नही रहता उसमे प्राय रगो की विविधता और रेखाओ के बाहुल्य मे भी एक ही भाव अकित हो पाता है, इसी से मेरा चित्र गीत को एक मूर्त पीठिका दे सकता है, उसकी सपूर्णता बॉध लेने की क्षमता नही रखता,' कुछ ऐसी ही दशा कविता मे अनुस्भूत महादेवी के उन भाव–चित्रो की भी है, जिन्हे हम कवि के सवेगो का पोयेटिक इक्वीवैलेण्ट कह सकते है।

अब मै बिम्बो के प्रकार और महादेवी की रचनाओं में उनके विनियोग पर विचार करती हूॅ। चूंकि बिम्ब ऐन्द्रिय प्रभाव की प्रतिकृति हुआ करते है। इसीलिए इनके उतने ही प्रकार है, जितने सेन्स इम्प्रेसन के। इस दृष्टि से

बिम्बो के प्रकार –निर्धारण के मुख्यत पाच आधार हो सकते है –दृष्टि गध शब्द, रस, और स्पर्श किन्तु कुछ आलोचको ने बिम्बो के विभाजन पर कि चित विस्तार से सोचा है। इनके अनुसार बिम्बो का विभाजन भीत ताप और गति तथा अमर्ष, मन्यु तोष उत्साह ,श्रान्ति इत्यादि के बोध के आधार पर होना चाहिए । इतना ही नही ,अग्रेजी साहित्य के आलोचको ने तो इस विभाजन को 'द्रोपदी का चीर' बना दिया है। जितने प्रकार का विभाजन उन्होने प्रस्तुत कर दिया है। जैसे–विसरल इमेज, किनेस्थेटिक इमेज, थर्मल इमेज, टाइड इमेज, डिकोरटिव इमेज, फक्शलनल इमेज, टेक्टाइल इमेज, प्राइवेट इमेज इत्यादि। किन्तु इस संख्या–विस्तार के साथ ही यह बात विचारणीय हो जाती है। कि इस तरह तो बिम्बो के अनन्त प्रकार हो सकते है। हम सुविधा तथा सुनिर्णीतता के लिए बिम्बो के निम्नलिखित मुख्य प्रकार मान सकते है–

(1) चाक्षुष बिम्ब (विजुअल इमेज)

(2) श्रव्य बिम्ब (ऑडिटरी इमेज)

(3) गतिबोधक बिम्ब (मोटर इमेज)

(4) स्पाशिक बिम्ब (टेक्टाइल इमेज)

(5) तापमानबोधक बिम्ब (थर्मल इमेज)

(6) रासायनिक बिम्ब (गस्टेटरी इमेज)

(7) ध्राविक बिम्ब (आल फैक्टरी इमेज)

महादेवी की रचनाओ मे तापमानबोधक बिम्बो के अलावा शेष सभी प्रकार के बिम्बो के उदाहरण मिल सकते है। किन्तु इनकी विशेष रूचि चाछुष ,श्रव्य , और स्पार्शिक बिम्बो की ओर है। इनकी रचनाओं में श्रव्य

बिम्ब वहाँ मिलते है, जहा कवयित्री ने डिवाइन च्वायस, जिसे सन्तों ने अनहदनाद कहा है, को सुनने और समझने की चेष्टा की है । इस नाद की अनुभूति अथवा ग्रहण चेष्टा को कवयित्री ने प्राय· श्रव्य बिम्बों के सहारे प्रस्तुत किया है। जैसे, रश्मि की वह कौन शीर्षक कविता मे इन्होने अज्ञात से प्राप्त श्रावण –सुख को सगीत (जोश्रव्य है) के बिम्ब से व्यक्त किया है–

कुमुद –दल से वेदना के दाग को
पोछित जब ऑसुओ से रश्मियॉ
चैकि उठती अनिल के निश्वास हूँ
तारिकाएं चकित सी अनजान –सी '
तब बुला जाता मुझे उस पार जो
दूर के सगीत –सा वह कौन है ।

इसी प्रकार महादेवी ने जहॉ कही ऑप्टिकल हैल्युसिनेशन (एक प्रकार की आध्यात्मिक गज निर्मालिका)के कारण दृष्य वस्तुं विशेष पर कुछ इतनी इलहामी धारणाओ का आरोप किया है, वहॉ चाक्षुष बिम्बो का सुन्दर उदाहरण मिलता है। वैसे उपर्युक्त कविता के दूसरे बन्द मे तिमिर –मेघाच्छादित रजनी के बीच चमकने वाली साधारण विजली (जिसका चाक्षुष प्रत्यक्ष होता है) पर कवयित्री ने कुछ जिज्ञासा मूलक रहस्यारोपक कर उसे अत्यन्त असाधारण अथवा विशिष्ठ बना दिया है–

शून्य नभ पर उमड जब दुख भार–सी
नैश तम मे सघन छा जाती घटा
विखर जाती जुगनुओ की पॉत भी
जब सुनहले ऑसुओ की हार सी,

तब चमक जो लोचनो का मूँदता

तडित की मुस्कान मे वह कौन !

एव प्रकारेण उपर्युक्त विभजन के आधार पर महादेवी की रचनाओ मे बहुश· बिम्बो के अनेक उदाहरण ढूढे जा सकते है, किन्तु यह विभाजन ही मूलत· भ्रान्त मालुम पडता है क्योकि इसका आधार ऐनिद्रयानुभूति है कलह की अनिवार्य और वरेन्य विभूति सौन्दर्य बोध नही अतः हमें उपर्युक्त विभाजन के आधार पर उदाहरणो को उदधृत करने के बदले महादेवी के बिम्बो का नन्दतिक बोध की दृष्टि से अध्ययन प्रस्तुत करने की चेष्टा करेगे।

महादेवीके बिम्ब विधान मे वर्ण वोध की प्रचुरता है चित्र कला से प्रेम रहने के कारण वस्तु विंशेष के दृष्य आरगो और रगीन रेखा कृतियो को काव्य मे बिम्बत करने की चेष्टा इनके लिए सर्वथा स्वाभाविक है अत· इन्होने इच्छित चित्र की चाक्षुष विशिष्टताओं को अंकित करने के लिए इन्द्रधनुषी बिम्ब विधान का सर्वाधिक प्रयोग किया है जिसमें रंगायजी का पुट और वर्ण परिज्ञान का निर्देशन मिलता है जैसे –

नव कुन्द कुसुम से मेघ पुन्ज

बन गये इन्द्र धनुषी वितान,

दे मृदु कलियो की चटक ताल

हिम–बिन्दु नचाती तरल प्राण·

धो स्वर्ण प्राप्त मे तिमिर गात दुहराते अलि लिशि मूक गान ।

अथवा

कनक से दिन मोती सी रात

सुनहली सॉझ गुलाबी प्रात

इसी प्रकार महादेवी कि रचनाओ मे उपकरणमूलक चतुष्कबिम्ब विधान के भी सुन्दर उदाहरण मिलते है इस कोटि के बिम्ब विधान मे चित्र विशेष की समपूर्णता तद विषयक सम्पूर्ण उपकरणो की दृष्टि से सिद्ध होती है उदाहरणार्थ समुद्र का निम्नाकित चित्रण उपकरणो की दृष्टि से पूर्ण प्रतीत होता है ।

इन कनक रश्मियो मे अथाह

लेता हिलोर तम सिन्धु जाग

बुद बुद से वह चलते अपार

उसमे विहगों के मधुर राग,

बनती प्रवाल का मृदुल फूल जो क्षितिज रेख थी कुहर म्लान।

यहॉ हिलोर बुद बुद प्रवाल ओर फूल तथा सागर के दो प्रसिद्ध गुण बहाव एव अथाह सभी उपकरण प्रस्तुत है जिनके संगत उल्लेख से सिन्धु का चित्र स्पष्ट हो जाता है इसी प्रकार महादेवी ने रूप श्रृगार का भी बिम्ब विधान प्रस्तुत किया है –

स्मिति से कर कीके अधर अरूण

गति के जावक से चरण लाल

स्वप्नो के गीली पलक आज

सीमन्त सजा ली अश्रुमाल

यहॉ श्रृंगार के सभी मुख्य उपकरण –लिपस्टिक ,महावर,अंजन ओर सीमन्त माल उपस्थिति कर दिये गये है ।

महादेवी ने कल्पनाश्रयी तीर्थक बिम्ब शैली का भी सहारा लिया है। ऐसे बिम्ब विधान मे अनुभूति नही अनुभूतियो की रमणीय कल्पना रहती है जिसे हम अनुभूतिके साथ कल्पना का अनुचित हस्तक्षेप कह सकते है । इन बिम्बोकी दुर्वलता यह है कि फिर फिर आने वाले आर्वतक प्रेक्षणो के कारण इनमे भाव और वस्तु कि एकतान्ता नष्ट हो जाती है तथा काव्य के आलबन कोआश्रय काल बहुविधि प्रक्षेपण विकृति अथवा अस्वाभाविक बना देता है जैसे –

पिक की मधु मयि वशी बोली

नाच उठी सुन अलिनी भोली

अरूण सजत पाटल बर्साता

तम पर मृदु पराग सी रोली

मृदुल अक पर दर्पण सा सर

ऑज रही निषि दृग इन्दीवर

प्रस्तुत बिम्ब का विधान पाहॅनि के मनुहार मे हुआ है जिसमे तीर्यक कल्पना की योजना क्योकि यहां पिक की वशी का स्वर सुनकर भोली अलिनी नाच उठती है इतना ही नही यहा तम पर पराग की रोली बरसती है और रजनी के इनदीवर से दृग अन्जित भी हो जाते है । इस प्रकार यहा कल्पना पर्त पर पर्त प्याज के छिलके की तरह जमी हुई दिख पडती है ।

विश्रृखल बिम्बों की योजना और एक ही कबिता में निबद्व मूड की भिन्नता के कारण महादेवी की रचनाओ में परमेय प्रवेशक बिम्ब विधान भी यत्र तत्र प्रयुक्त हुआ है । छायावादी कवियों के बीच महादेवी की रचनाओं

मे इसका सर्वाधिक प्रयोग मिलता है ,क्योकि इनकी अधिकाश कि कतिताए चित्रश्रृखला पर अवलम्बित रहती है ।उदाहरण के लिए रश्मि की कौन है ।शीर्षक कविता के प्रारम्भ मे वेदना विद्ध दशा को कुमुद दल से वेदना के दाग को , पोछती जब ऑसुओ से रश्मियॉ सध्या के द्वारा और अन्त मे अहलाद की मनोदशा को रश्मियो की कनक धारा मे नहा, मुकुल हॅसते मोतियो का अहर्थ दे । प्रभात के द्वारा दिखलाया गया है , किन्तु इन दशादृय के अनुरूप ही दोनो चित्र सध्या और प्रभात के बीच पे बन्द अथवा मध्यम कडी के रूप मे ज्योत्सना–स्नात रातिका चित्र प्रस्तुत किया गया है–

अवनि अम्बर की रूपहली सीप मे

तरल मोती –सा जलधि जब कॉपता ,

तैरते घन मृदुल हिम के पुंज से

ज्योत्सना के रजत परावार मे,

सुरभि बन जो थपकियॉ देता मुझे

नीद के उच्छवास –सा वह कौन है।

इस प्रकार निष्कर्ष के रूप मे कहा जा सकता है कि महादेवी के गीतो मे हमे कविता मे शाश्वत धर्म–बिम्ब –विधान– का पुष्कल सरक्षण मिलता है ।

महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों पर दृष्टि रखकर ही छायावादी काव्य के सम्बन्ध में कोई मत निश्चित किया जा सकता है। छायावादी काव्य विकास के शिखर 'लहर, आंसू, कामायनी (प्रसाद) गीतिका तुलसीदास (निराला) गुंजन (पंत) नीरजा (दीपशिखा) (महादेवी) आदि रचनाओं में देखे जा सकते हैं, जिनके आधार पर छायावादी काव्य विशिष्ट ही नही गरिमामयी भी है। पूर्ववर्ती युग की रसविहीनता तथा शिल्पगत असिद्धि को सिद्ध और समृद्धि में जितनी तीव्रता से छायावादी कवियों ने बदला वह आश्चर्यकारी भी है और सराहनीय भी। श्रीधर पाठक और मुकुटधर पाण्डेय की स्वच्छन्दतावादी कविताओं और कामायनी, तुलसीदास प्रवृत्ति रचनाओं के मध्य भावना और रूप–विन्यास के बहुत से आयाम है जिन्हें केवल बीस–बाइस वर्षों में ही छायावादी कवियों ने पारकर दिखाया।

छायावाद के प्रसाद भाषा सौष्ठव, पतं का कल्पना सौकुमार्य और मनोरम प्रकृति नियंत्रण, निराला के मुक्त छंद महादेवी के अनुपम कलात्मक शब्द मणियों से सुसज्जित राम कुमार वर्मा के अलंकृति विशेष न होने पर भी सीधे गर्भ को छूने वाले भावगीते गीत परवर्ती 'साहित्यकारों' के लिए भी प्रेरक रहे हैं।

नरेन्द्र शर्मा, रामधारी सिंह 'दिनकर' भगवती चरण वर्मा और हरिवंश राय बच्चन यद्यपि छायावाद युग के पूर्वाद्ध कवियों से शैली–शिल्पगत वैविध्य रखते हैं, तथापि उनका शब्द विन्यास, बिम्ब योजना, वचन विदग्धता आदि उनके प्रभावों से सर्वथा मुक्त नही रही है। प्रगतिवाद का जन्म भी एक प्रकार से छायावाद के द्वारा ही हुआ है। निराला के कंठ से फूटनेवाला 'जागो फिर एक बार' का नारा ही आगे चलकर 'प्रगतिवादी' का सामूहिक स्वर बना, दिनकर, भगवतीचरण, नरेन्द्र, अंचल नागार्जुन आदि ने जिसमें अपना स्वर

मिलाया। प्रयोगवाद और 'नई कविता' के नाम पर से विख्यात होने वाली काव्यधाराओ मे छायावादी प्रवृत्तियों के अवशेष अवश्य खोजे जा सकते है क्योकि पूर्ववर्ती युग की धरोधर लेकर ही कोई रचनाकार नए सृजन मे समर्थ होता है। वर्तमान नयी हिन्दी कविता का मूल स्वर और उसकी अतिशय बौद्धिक निषिद्धता, अनास्था एव सौन्दर्य विहीनता छायावाद से उसे बहुत दूर खीच ले आई है तथापि उसमे छायावादी ढग के रोमानी भावना से रजित तरल कोमल बिम्ब तत्र थी प्राय दे जाते है। मुक्त छन्द आज की प्रचलित काव्य–विधा है।

वर्तमानयुगीन अनेक कवियो ने छायावादी गीत–परपरा का नया विस्तार दिया है, इनमे मुख्य– जानकी वल्लभ शास्त्री (रूप–अरूप, तीरतरग, विश्र, मेथगीत, अवंत्तिका) सुमित्राकुमारी सिन्हा (विहाग, पद्यिनी, बोर्लो के देवता) आरसी प्रसाद सिह (आरसी), नीरज (विभावरी, प्राणनीति, दर्द दिया है), रमानाथ अवस्थी (रात और शहनाई) गिरिजा कुमार माथुर (धूप के धान) वीरेन्द्र मिश्र (लेखनी वेला) आदि। यह गीतकार भाव पक्ष और काव्य विधा दोनो ही क्षेत्रो मे छायावादी कवियो से पर्याप्त प्रभावित है। छायावादी कवियो जैसी उच्चकोटि की कला इनमे नही है, तथापि इनके गीत अनगढ भी नही है। मर्मोच्छेदन द्वारा पाठक–वर्ग को भाप विचारो कर देने मे सक्षम है, मांसल और जलीन्द्रिय के स्थान पर उनमे मांसल (किन्तु स्वस्थ और वासना रहित) प्रेम का चित्रण हुआ है। सहजानुभूति और भाषागत सरलता उनके गीतो की मूलभूत विशेषताए है। इस रूप में आधुनिक युगीन छायावादी गीतो के एक बडे पौर का निराकरण करते है।

इनके अतिरिक्त प्रतिष्छित कवियो मे अभी महादेवी वर्मा और रामकुमार वर्मा का साहचर्य हिन्दी काव्य प्रेमियो को प्राप्त है। इनकी लेखनी यद्यपि पहले

की भाति सक्रिय नही रह गई है, किन्तु छायावादोत्तर युग मे रचित उनकी स्फुट कविताओ मे भी भाव, भाषा अथवा शिल्पगत कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन लक्षित नही होता। पत की चिन्तनधारा ने समय समय पर अनेक मोड लिए है किन्तु उनकी रचनाये अत्यन्त जनहित और विश्व कल्याण की उसी महत् आकाक्षा से युक्त दिखाई देती है जिसका प्रारम्भिक रूप 'गुजन' मे सुख–दुख के समन्वय मे प्रकट हुआ था। छायावाद की भाव प्रवणता को पत बहुत पीछे छोड आए थे तथापि उसके सस्पर्श यत्र–तत्र उनकी नवीनतम् कृतियो मे भी मिल जाते है। डॉ देवराज के अनुसार छायावाद का पतन अनेक वर्ष पूर्व हो चुका है। उन्होने पतन के कारणों की भी विस्तृत स्थापनाये है। लेकिन विचार–पूर्वक देखा जाए तो सत्साहित्य कभी नही मरता, और न किसी श्रेष्ठ साहित्यिक प्रवाह का पतन ही होता है। छायावाद के नाम पर जो कुछ लिख गया जो नए–नए शिल्पत प्रयोग हुए, वे सारे के सारे महत्वपूर्ण न सही, उनका एक वृहत् अश हिन्दी कविता की महत्वपूर्ण उपलब्धियो के अन्तर्गत रखा जा सकता है। छायावाद मे शब्दमोह, बिम्बमोह, अस्पष्टता, क्लिष्टता, निराला, कुठा, पलायनवृति, उपतिशयवाययता, और कल्पनाशीलता आदि क्षेत्र थे, तो कोमल पदावली भावात्मक पर्ण योजनाए, गत्वर भाषा, नवीन अप्रस्तुत, नए प्रतीक के साथ जीवन और काव्य की नीरसता को दूर करने वाले प्रेम और सौन्दर्य के मर्मस्पर्शी मधुरगीत तथा लोक कल्याण की कामना की युक्त उदात्य भावनाए और विराट मानवतावादी स्वर भी था। उसने ब्रजभाषा को ही काव्यपयोगी मानने के विचार का खण्डन किया तो खडी बोली का परिष्कार भी किया, व्याकरण की कडियॉ तोडी तो भाषा को सूक्ष्मातिसूक्ष्म अर्थवाहिनी भी बताना, कविता के लिए द्वद बंधन का तिरस्कार किया तो मुक्तछंद की परपरा भी स्थापित की, मर्यादित और चिरप्रचलित काव्य शैली का विरोध किया तो

हिन्दी कविता को नई और अधिक सशक्त वचन भगिमा भी दी थी। इस प्रकार छायावाद का साहित्यिक योगदान कम महत्वपूर्ण नही है। इस अर्थ मे कि आजकल हर प्रकार की कविताए युग के बदले हुए परिवेश के फलस्वरूप मन को पूर्ण परिस्तृप्ति नही दे पाती। छायावाद अपने युग के अनुरूप रूपाकार ग्रहण करके जन्मा और पनपा तथा अपने परवर्ती साहित्यकारो के लिए बहुत सी महत्वपूर्ण धरोहर छोड गया। जो वर्तमान हिन्दी कविता मे नए रूप और अभिज्ञान ग्रहण करके जीवित है। मनुष्य के सामाजिक तथा मानसिक जीवन मे प्रतीक और बिम्ब की इतनी व्यापकता और इतना महत्व है कि आधुनिक ज्ञान के विकास के साथ–साथ बिम्ब एव प्रतीक–चितन की परपरा मे भी पर्याप्त मनोवैज्ञानिक और क्रमबद्ध विकास हुआ है प्रतीक एव बिम्ब कला– रचना के अतरग क्षणो का साझीदार होता है, इसलिए आलोचना और लालित्य बोध के क्षेत्र मे जब भी कला और उसकी सृजन प्रक्रिया का विश्लेषण किया गया तो प्रतीक एव बिम्ब के सदर्भ मे विभिन्न निष्कर्षो की प्राप्ति हुई। लेकिन इसके अतिरिक्त प्रतीक एव बिम्ब की परपरा मे वे समाज शास्त्रीय विचारक भी आते हैं जिन्होने सामाजिक विश्वासो, सस्कारो, श्रद्धा, धर्म और रीति–रिवाजो के सदर्भ मे प्रतीक एव बिम्ब की व्याख्या की वे मनोवैज्ञानिक भी आते हैं जिनके लिए प्रतीक एवं बिम्ब मनुष्य के रहस्यमय अतिलोक और मानसिक प्रक्रियाओ का प्रवक्ता है, और वे दार्शनिक भी जिनके लिए प्रतीक एव बिम्ब असीम है और जो इसके अर्न्तगत भाषा, और मुद्रा से लेकर समस्त अनुभविक ज्ञान को समेटते हैं। प्रतीक एव बिम्ब सबधी यह समस्त ज्ञान इतना विस्तृत और विविधता मूलक है कि पूर्ण व्याख्या के लिए वह स्वय मे एक स्वतत्र विवेचन की माग करता है।

जहा कही भी महादेवी जी ने अप्रस्तुत सादृश्य की स्थूलता को पारकर किसी सदर्भ सापेक्ष व्यापक अर्थ को व्यजित कर सकी है केवल वहा पर वे प्रतीक है–

"तरल मोती से नयन भरे

तारे मरकत नील तरी से/सूखे पुलिनो सी वरूणी से फेनिल फूल भरे

पादर से अनबीर्ध मोती।

महादेवी के गीत मे प्रियमुख के लिए 'शशि' और आसुओ के लिए 'तरल मोती' फेनिल फूल' और पारद से अनबीर्ध मोती का प्रयोग सादृश्य के आधार पर हुआ है किन्तु वे केवल दृश्य साम्य की ही व्यजनावादी करती बल्कि उससे ऊपर उठकर कवि की मोहक और आत्मीय वेदना का सप्रेषण करते हैं। महादेवी का एकाकिक आवेगो वाला प्रेम निराशा और वेदना का काव्य, वस्तुत ऐसे ही प्रतीको और बिम्ब द्वारा सयोजित हुआ है जिनका आधार प्रेम और वेदना नही दो अनुभूतियो का साम्य है। दीप, शलभ, मोती, शूल, अधकार आदि उनके निरतर दुहराये जाने वाले प्रतीक एव बिम्ब हैं। महादेवी के व्यक्तित्व मे ये प्रतीक जहा अनुभूति के मनुष्य कोमल और तरल है, वही निराला ने इनका प्रयोग अपनी उदास चेतना के कारण, विराट प्रतीको और बिम्बो के रूप मे किया है। छायावदी काव्य की श्रृखला को सुदृढ बनाने मे महोदवी वर्मा का पर्याप्त सहयोग रहा है। अर्तमुखी अनुभूति, अशरीरी प्रेम, अगाध सौदर्य का चित्रण, मानव और प्रकृति के चेतन संस्पर्श, रहस्य चितन, गीतात्मक प्रवृत्तिआदि छायावाद की प्राय सभी मुख्य विशेषताए महादेवी के काव्य मे साकार हुई है। इसके अतिरिक्त महादेवी की कुछ मौलिक विशेषताए भी है। इनकी रचनाओ मे स्वप्निल वातावरण छाया रहता है, अर्थात् कवयित्रि की दृष्टि ठोस जीवन सत्यो पर न टिककर सपनों के ताने–बाने बुनने में ही

अधिक रही है। जीवन और प्रकृति की कोमल वस्तुए, ऊषा की आलोक भरी आभा, सन्ध्या की अवसादमयी सघनता, निशा का नीरव एकात आदि उन्हे विशेष प्रिय है, इन्ही सब के मध्य वे अपने इद्रधनुषी स्वप्नो के मनोरम जाल बुनती रहती है। रहस्यमय प्रियतम की सोच, स्मरण, प्रतीक्षा और मिलनाकाक्षा ही उनके काव्य का चरम लक्ष्य है। कभी प्रकृति के सामान्य व्यापारो द्वारा उन्हे गुप्त सदेश मिलते है और प्रिय आगमन की आशा से उनके प्राण पुलकित हो उठते है। कभी प्रिय की स्मृति उन्हे रूलाती है, कभी एक व्यापक—विराट शून्य की अनुभूति से वे भर उठती हैं और कभी प्रिय—सामीप्य से वचित जीवन की व्यर्थता का बोध उन्हे पीडित कर जाता है। बस इसी सीमित दायरे मे महादेवी की काव्य साधना चलती है। किन्तु दायरा सीमित होते हुए भी उसमे गहराई पर्याप्त है।

महादेवी भावप्रवण कवियित्री है अतएव उनकी रचनाओ मे भावो की ऐसी तीव्रता मिलती है जो मन को बहुत गहराई तक छू जाती है। वेदना और करूणा से उन्हे विशेष लगाव है, उस लगाव की सीमा यहा तक है कि वे मिलन का नाम भी न लेकर चिर विरह मे लीन रहने की आकाक्षा व्यक्त करती हैं। वेदना और करूणा की विराट पृष्ठभूमि पर रचे गये उनके आध्यात्मिक प्रेम गीतो पर भक्तियुगीन कवयित्रि मीरा का कुछ प्रभाव लक्षित होता है इसीलिए साहित्य जगत मे प्राय उन्हे आधुनिक युग की मीरा कहकर सबोधित किया जाता है। किन्तु महादेवी की रचनाओं मे सर्वत्र उनकी मौलिकता अक्षुण्य रहती है। उनकी विरहानुभूति मे मीरा जैसा अर्तहीन होकर दीपक का शान्त शीतल आलोक रहता है जो रूलाता कम है, सम्मोहित अधिक करता है। प्रिय के प्रति असीम प्रेम रखती हुई और उसके वियोग में विफलता का अनुभव करती हुई भी महादेवी मीरा की भांति देन्य का प्रदर्शन

नही करती। आराध्य की महानता को स्वीकारती हुई भी वे अपनी निजत्व को सुरक्षित रखती है ('क्या अमरो का लोक मिलेगा तेरी करूणा का उपहार रहने दो हे देव/अरे यह मेरा मिटने का अधिकार।')

महादेवी के गीतो मे प्राचीन गीत परपरा का चरम विकास प्रस्तुत हुआ है। माधुर्य और गेयता उनके गीतो के प्रमुख तत्व हैं। गीतो के भाव माधुर्य की मनोरम शब्द–विन्यास और भी अधिक विकसित करता है। शैली के क्षेत्र मे महादेवी की रूझान अलकरण की ओर बहुत अधिक है सुकोमल प्रतीक, नव्य अप्रस्तुत योजना, सुकुमार कल्पना, दीप्तिमय बिम्ब, ध्वन्यात्मक शब्दावाली और भावो की सघनता ने मिलकर महादेवी की शैली को विशेष गौरव प्रदान किया है। महादेवी के गीतो की भाषा किसी साधारण कवि की भाषा नही है। ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे किसी कुशल कलाकर ने अपने स्वर्णाभूषण मे चुन–चुनकर नगीने जडे हो। पृष्ठभूमि के रूप मे प्रकृति महादेवी की परम् सहायिका रही है।

महादेवी की काव्य कृतिया हैं– नीहार (1930) रश्मि (1932), नीरजा(1935), साध्यगीत(1936) और दीपशिखा (1942)।

नीहार महादेवी की प्रथम काव्य कृति है, उस नाते उसमे कवियित्री के भावी काव्य विकास की रूपरेखा मात्र बन पाए हैं, उसमें रग नहीं भरे है। एक अव्यक्त पीडा और छटपटाहट का बोध इसमें होता है किन्तु उसका कोई ठोस आधार पकड मे नही आता।

'नीहार' के बाद 'रश्मि' मे वय· सधि की स्थिति है। कुहासा कम होता है और काव्य चित्रो मे स्पष्टता आती है।

'नीरजा' तक पहुचकर महादेवी की काव्य कला पूरी तरह मंज जाती है। 'नीरजा' भावव्यजना और कला–सौष्ठव, दोनों की दृष्टियों से प्रौढ़ और

श्रेष्ठ काव्य कृति है। व्यक्तिगत पीडा को उसमे लोक व्यापी रूप प्रदान किया गया है और सुखद दुख मे सामजस्य स्थापन की चेष्टा की गई लेकिन व्यक्ति की पुकार उसमे बनी रहती है।

'सान्ध्यगीत' मे अनुभूति की तीव्रता मे कमी, किन्तु, स्थिरता मे वृद्धि मिलती है। 'नीरजा' मे सुख और दु:ख के मध्य समता–स्थापन का जो प्रयास हुआ था, सान्ध्यगीत मे वह प्रयास पूर्णता पाता है। 'दीपशिखा' इसी दिशा मे कवि का अगला कदम है अर्थात् 'दीपशिखा' तक की व्याख्या यात्रा मे विरहानुभूति की तीव्रता का लोभ हो जाता है, दु:ख अपना दर्शन रचे देता है और पीडा की ज्यादा दीपशिखा बनकर अपना मद–मधुर प्रकाश फैलाने लगती है।

दीपशिखा के बाद अब तक के वर्षो मे महोदवी की अन्य कोई काव्य कृति प्रकाश मे नही आई है। ऐसा लगता है जैसे उनका काव्य यात्री अपने लक्ष्य पर पहुंच कर विश्राम की स्थिति मे शिथिल बैठ गया है। तथापि उनकी समृद्ध लेखनी साहित्य को अभी बहुत कुछ दे सकने मे समर्थ हैं, अतएव हम उसके प्रति आशावान बने रह सकते हैं।

महादेवी का विषय–क्षेत्र अत्यन्त सीमित है, 'प्रिय की प्रतीक्षा' मात्र का उनके काव्य मे अतिरेक लटकता है। आत्म–निष्ठता के आधिक्य के कारण सामान्य जन–जीवन से उनके काव्य का सपर्क स्थापित नहीं हो पाया, अतएव वह एकागी बन गया है, अन्यथा अपनी कलात्मकता और सफल भाषाभिव्यजना मे महादेवी बेजोड हैं।

श्री विनय मोहन शर्मा ने ठीक ही लिखा है– "छायावाद युग ने महादेवी को जन्म दिया और महादेवी ने छायावाद को जीवन। यह सत्य है कि छायावाद के चरम उत्कर्ष के मध्य में महादेवी ने काव्य–भूमि में प्रवेश

किया और छायावाद के सृजन, व्याख्यान और विश्लेषण द्वारा उसे प्रतिष्ठित किया। छायावाद को उससे अधिक समर्थ अधिकारी आलोचक आज तक नही मिल पाया, इसमे सदेह नही।' छायावाद और रहस्यवाद की चर्चा करते हुए उन्होने लिखा है–

''छायावाद ने मनुष्य के हृदय और प्रकृति के उस सबध मे प्राण दिये, जो प्राचीन काल से बिम्ब प्रतिबिम्ब के रूप मे चला आ रहा था और जिसके कारण मनुष्य को अपने दुख मे प्रकृति उदास और सुख मे पुलकित जान पडती थी। छायावाद की प्रकृति घट, कूप आदि मे भरे पल की एकरूपता के समान अनेक रूपों मे प्रकट एक महाप्राण बन गई। अतः मनुष्य के अन्वु, मेघ के जलकण और पृथ्वी के ओस बिन्दुओ का एक ही कारण, एक ही मूल्य है। प्रकृति के लघु तृण और महान वृक्ष, निविड अधकार और उज्जवल विद्युत रेखा, मानव की लघुता–विशालता, कोमलता–कठोरता और मोह–जाल का केवल प्रतिबिम्ब न होकर एक ही विराट से उत्पन्न सहोदर है। जब प्रकृति की अनेक रूपता मे, परिवर्तनशील विभिन्नता मे कवि ने ऐसा तारतम्य खोजने का प्रयास किया जिसका, एक छोर किसी असीम–चेतन और दूसरा उसके समीप हृदय मे समाया हुआ था, जब प्रकृति का एक–एक अश अलौकिक व्यक्तित्व होकर जाग उठा परन्तु रज सबध से मानव–हृदय की जारी प्यास बुझ न सकी, क्योकि मानवीय सबधो मे जबतक अनुरागजनित आत्म–विसर्जन का भाव वही धुल जाता तबतक वे सरस नहीं हो पाते जबतक यह मधुरता सीमातीत नही हो जाती तब तक हृदय का अभाव नहीं दूर होता। इसी से इस मनोव्यथा के कारण पर एक मधुरतम व्यक्तित्व का आरोप कर उसमे निकट आत्मनिवेदन करना इस काव्य का (छायावाद) का दूसरा सोपान बना, जिसे रहस्यमय रूप के कारण ही रहस्यवाद नाम दिया गया।''

संदर्भ–ग्रंथ सूची

एवम्

सहायक–ग्रंथ

सन्दर्भ ग्रन्थ – सूची/सहायक ग्रन्थ

महादेवी वर्मा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

अध्याय–1

महोदवी का काव्य · सुमित्रा नन्दन पत, पृष्ठ 10

काव्यकाल · महादेवी, पृष्ठ 12,15

महादेवी का काव्य व्यक्तित्व · नन्द दुलारे वाजपेयी पृष्ठ 39, 42

महादेवी वर्मा एक सर्वेक्षण इन्द्र नाथ मदान, पृष्ठ 48, 55

महादेवी वर्मा वर्णगीत का मर्म रमेशचन्द्र शाह, पृष्ठ 75, 76

काव्य का स्वरूप . धनन्जय वर्मा, पृष्ठ 87, 90

कवि और काव्य चितक · कमलाकात पाठक, पृष्ठ 99, 102

कला– पक्ष : विश्वभर मानव, पृष्ठ 119, 124

वेदना और काव्य · कुमार विमल, पृष्ठ 139, 141

महादेवी और प्रकृति · पद्मसिह शर्मा 'कमलेश',पृष्ठ 160, 162

सौन्दर्यानुभूति आनन्द प्रकाश दीक्षित, पृष्ठ 169, 171

शिल्प–साधना जयनाथ 'नलिन', पृष्ठ 180, 181

दीपशिखा नागेन्द्र, पृष्ठ 199, 201

नीरजा विजयेन्द्र स्नातक, पृष्ठ 207, 208

महादेवी के रेखाचित्र गोपाल कृष्ण कौल, पृष्ठ 215, 216

अतीत के चलचित्र आशा गुप्ता, पृष्ठ 220, 221, 222

प्रतीक : अर्थ, उद्भव, स्वरूप और विकास

अध्याय 2

दृष्टव्य	आर्किबोल्ड मेकनीश, पृष्ठ 16, 17
एक साहित्यिक डायरी	गजानन माधव मुक्तिबोध, पृष्ठ 3
दृष्टव्य	· जे एम भरे,
आत्मनेपद	अज्ञेय, पृष्ठ 41, 78
पाल आर्थर शिल्प	अर्नेस्ट कैसिर, पृष्ठ 58
प्रॉब्लम ऑफ आर्ट्स	पृष्ठ 132
चितामणि	आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ 121
इल्यूजन एण्ड रियलिटि	पृष्ठ 121
अ सिम्बल इज नथिग मोर दैन अ व्हीकल फॉर इमेजिनेवल एक्सपीरिएन्स	पृष्ठ 295–296
सिम्बालिज्म इन पेटिग	· डब्ल्यू बी पीट्स, पृष्ठ 183
द सिम्बलिस्ट मूवमेन्ट इन लिट्रेचर	आर्थर सायमन्स, पृष्ठ 8
सिम्बालिज्म एण्ड बिलीफ	. एडविन बेव्न, पृष्ठ 11
चितामणि	· आचार्य शुक्ल, पृष्ठ 121

द सिम्बल इज व्हाइट

सिम्बॉलाइजेज डब्ल्यू वाई टिन्डाल,पृष्ठ 11–13

लैग्वेज एण्ड मिक अर्नेस्ट कैमिरा पृष्ठ 58

द लिट्रेरी सिम्बल डब्ल्यू. वाई टिन्डाल, पृष्ठ 6

कामायनी प्रसाद (हे अनत– सह सकता)

पोयटिक प्रोसेस जार्ज व्हेल, पृष्ठ 167–168

द स्टेट्मेट्स मैनुअल भाग–1, पृष्ठ 407–408

अनुशीलन : डॉ राम कुमार वर्मा, पृष्ठ 387

सिम्बल्स एण्ड वैल्यूज : हाउसर, पृष्ठ 231

बादल दिनकर, पृष्ठ 271

आइडियाज ऑव गुड एण्ड एविल डब्ल्यू बी यीट्स , पृष्ठ 243

व्हाट इज साइकोएनालिसिस · अर्नेस्ट जोन्स , पृष्ठ 107

सिम्बॉलिज्म ए एन व्हाइट हेड , पृष्ठ 74

किनिग ऑफ किनिग सी के आगवन , पृष्ठ 208

दि प्राबलम ऑफ स्टाइल जे एम मरे , पृष्ठ 15

दि युज ऑफ इमेजिनेशन विलियम वाल्स , पृष्ठ 238

दि पोयटिक इमेज सी. डी. ल्यूइस, पृष्ठ 40

दि लिट्रेरी सिम्बल ड्ब्ल्यू. एच हॉडन पृष्ठ 21

मिस्टिसिज्म ' इ अण्डरहिल पृष्ठ 13

दि फिलॉसफी ऑफ फाइन

आर्ट्स– 2 , हिगेल पृष्ठ 11

कल्पना और छायावाद · केदार नाथ सिह, पृष्ठ 96

सिम्बॉलिज्म ' ए एन. व्हाइटहेड, पृष्ठ 34

आइडियॉज ऑफ गुड एण्ड एविल पीट्स, पृ 240

काव्य मे अभिव्यजनावाद डॉ लक्ष्मी नारायण सुधाशु , पृष्ठ 116

काव्य विमर्श प. राम दहिन मिश्र , पृष्ठ 276–280

कला सृजन प्रक्रिया डॉ शिव करन सिह , पृष्ठ 175–176

सम्भावना , पृष्ठ 61–62

पोयट्री एण्ड एक्सपीरियन्स · आर्कीबोल्ड मैक्लीश, पृष्ठ 89

द सिम्बल भाग–1, पृष्ठ 408

कॉटेक्सट एण्ड क्रिटिसिज्म हैरीलैबिन, पृष्ठ 197

दृष्टव्य एक्सल्स केसल एडमड विल्सन, पृष्ठ 23

आत्मनेपद · अज्ञेय , पृष्ठ 50

दि हैरिटेज ऑफ सिम्बालिज्म सी एम बावरा, पृष्ठ 07

थ्योरि ऑफ लिटरेचर रेनकुलेक, पृष्ठ 190

चितामणि आचार्य शुक्ल, पृष्ठ 228

दि पोयटिक इमेज · सी डी ल्यूइस, पृष्ठ 19

पोयटिक प्रोसेज जार्ज व्हेल, पृष्ठ 53 और 145

सेलेक्टेड एसेज एल एन टेड, पृष्ठ 83

कॉलरिज ऑन इमेजिनेशन आर ए रिचर्डस, पृष्ठ 37

प्रॉब्लम ऑफ आर्टस · सूसान लेगर, पृष्ठ 132

भाषा और सवेदना डॉ राम स्वरूप चतुर्वेदी, पृष्ठ 23, 24

रियालिज्म एण्ड इमेजिनेशन · जोजक पियरी; पृष्ठ 111

आधुनिक हिन्दी कविता

मे बिम्ब विधान · डॉ. केदार नाथ सिह, पृष्ठ 30

दि पोयटिक इमेज · सी. डी ल्यूइस, पृष्ठ 23

दि फिलॉसफी ऑफ फाइन आर्टस हीगेल, पृष्ठ 132

लैग्वेज ऑफ रियलटी डब्ल्यू एम अर्बन, पृष्ठ 474

कला सृजन की प्रक्रिया · शिवकरन सिह; पृष्ठ 180

द हिस्ट्री ऑफ स्टैटिक्स · योशो, पृष्ठ 144

हिन्दी काव्य मे प्रतीकवाद का विकास · डॉ बीरेन्द्र सिह, पृष्ठ 117

द स्टेटमेन्ट्स मैनुअल · कालरिज, पृष्ठ 407–408

कलासृजन प्रक्रिया . शिवकरन सिह, पृष्ठ 186

लैग्वेज विहैवियर · चार्ल्स विलियम मारिस, पृष्ठ 33–34

दृष्टव्य · मापकेल राबर्टस, पृष्ठ 32–33

दृष्टव्य डब्ल्यू एम अर्बन, पृष्ठ 403

चितामणि भाग 2 , पृष्ठ 121

व्यजना और नई कविता , पृष्ठ 201

भाषा और सवेदना डॉ. राम स्वरूप चतुर्वेदी, पृष्ठ 26–27

मिष्टशिज्म इ अडरहिज्म , पृष्ठ 13

आलोचना बिम्ब प्रक्रिया , पृष्ठ 10

हिन्दुस्तानी बिम्ब, प्रतीक
और मिथक , पृष्ठ 61, 65, 66

साइकोलॉजी आफ एवरीडे
लाइफ फ्रायड, पृष्ठ 19–20

द जर्नल इन्ट्रोडक्शन टू
साइको एनालिशिस : फ्रायड पृष्ठ 156

दृष्टव्य : फ्रायड और चुग ; पृष्ठ 170

व्हाइट इन साइको ऐनालिशिस · अर्नेस्ट जोन्स , पृष्ठ 203

अध्याय – 3

मान्टेग्यू चेम्स फोर्ड रिपोर्ट (1918) , पृष्ठ 267

साहित्य का नया परिप्रेक्ष्य डॉ रघुवश , पृष्ठ 112

आधुनिक हिन्दी साहित्य

की मूरख प्रवृत्तिया , पृष्ठ 09

आधुनिक कवि पत , पृष्ठ 13

इतिहास और आलोचना डॉ. नामवर सिह , पृष्ठ 131

भाषा और सवेदना · डॉ रामस्वरूप चतुर्वेदी , पृष्ठ 07

पल्लव · पत , पृष्ठ 29–31

दृष्टव्य आत्मनेपद अज्ञेय , पृष्ठ 50

छायावाद की प्रासगिकता , पृष्ठ 10

गुजन , पृष्ठ 48

आधुनिक कवि भाग–1 , पृष्ठ 71

गीतिका . निराला–प्रसाद द्वारा लिखित

भूमिका दो शब्द , पृष्ठ02

हिन्दी साहित्य का इतिहास , पृष्ठ 638

छायावाद डॉ नामवर सिह , पृष्ठ 90

वीणा सुमित्रा नन्दन पंत , पृष्ठ 41

हेरिटेज ऑफ सिम्बालिज्म , पृष्ठ 06

परिमल , पृष्ठ 77–78

आसू ; पृष्ठ 11

असिमा , पृष्ठ 12

छायावाद की प्रासंगिकता रमेश चन्द्र शाह , पृष्ठ 17

लहर जयशकर प्रसाद , पृष्ठ 14

छायावाद की प्रासगिकता · रमेश चन्द्र शाह , पृष्ठ 27

कामायनी प्रसाद , पृष्ठ 49

अनामिका (राम की शक्ति पूजा)–निराला ,पृष्ठ 154

अनामिका (राम की शक्ति पूजा) · निराला , पृष्ठ 18–19

हिन्दी काव्य मे प्रतीकवाद
का विकास · डॉ. विरेन्द्र सिह , पृष्ठ 716 से 717

कामायनी (लज्जा सर्ग) वरदान सदृश्य . सग हुआ।

चिन्तामणि भाग , पृष्ठ 121

व्यजना और नवीन कविता · डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी , पृष्ठ 197

दीपशिखा महादेवी वर्मा , पृष्ठ 85

दृष्टव्य– 'छाह मे उसकी.. यह सीप',
सृजन के रात दीप थामे
प्रलय दीपा धान , पृष्ठ 74

अनामिका राम की शक्ति
पूजा (है अमानिशा,.. .. .. ,जलती
मशाल) , पृष्ठ 150

उद्वेल हो उठा,............,उठते पहाड , पृष्ठ 154

कामायनी (चिंता सर्ग)

छायावाद का काव्य शिल्प	डॉ प्रतिमा कृष्ण वल , पृष्ठ 204
व्यजना और नवीन कविता	· डॉ राममूर्ति त्रिपाठी , पृष्ठ 197
नीरजा · महादेवी वर्मा	, पृष्ठ 145
पल्लव (ऑसू)	· सुमित्रानन्दन पत , पृष्ठ 27
चन्द्रगुप्त (चतुर्थ अक)	· जयशकर प्रसाद , पृष्ठ 169
छायावाद (रूप–विन्यास)	· डॉ नामवर सिह , पृष्ठ 96, 97
दृष्टव्य · महादेवी वर्मा (दीपशिखा) , पृष्ठ 72	
दृष्टव्य	: प्रसाद (ऑसू) , पृष्ठ 22
युगवाणी	, पृष्ठ 45, 46
आधुनिक कवि भाग–2	, पृष्ठ 56
युगवाणी	, पृष्ठ 15, 104
अतिमा	, पृष्ठ 44
अनामिका	, पृष्ठ 81
कुकुरमुत्ता	
नये पत्ते	· मास्को डॉयलाग्स , पृष्ठ 25
महगू महगा रहा	, पृष्ठ 106, 107
डिप्टी साहब आये	, पृष्ठ 94
झिगर डर कर बोला	, पृष्ठ 63 से 106
दृष्टव्य	· प्रसाद (कमलकोश............. चित्राधार) ; पृष्ठ 165
भाषा और सवेदना	: प्रसाद की काव्य भाषा का आरम्भिक रूप ; पृष्ठ 55
कानन कुसुम नमस्कार	,जयशंकर प्रसाद पृष्ठ 10,54

आसू , पृष्ठ 1 ,6,8, 19, 40, 11, 2

झरना , पृष्ठ 14, 17, 18

लहर ; पृष्ठ 01

आत्मनेपद · अज्ञेय , पृष्ठ 50

काव्यकला तथा अन्य निबध . प्रसाद , पृष्ठ 122–123

विवेचना भाग–3, कामायनी का
पुर्नमुल्याकन डॉ रामस्वरूप चतुर्वेदी , पृष्ठ 178

महादेवी के काव्य में प्रतीकों का अध्ययन

अध्याय – 4

नीरजा · महादेवी वर्मा, पृष्ठ 86

आधुनिक कवि , पृष्ठ 28

दीपशिखा , पृष्ठ 104

दृष्टव्य लिटरेरी क्रिटिसिज्म ए
शार्ट हिस्ट्री · विलियम के. विक्सेट जूनियर क्लिथ बुक्स , पृष्ठ 50

हिन्दी साहित्य का इतिहास , पृष्ठ 720

हिन्दुस्तानी त्रैमासिक बिम्ब

प्रतीक और मिथक : डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी , पृष्ठ 65

पोयट्री एण्ड एक्सपीरियन्स · दि ब्राइड वर्ड , पृष्ठ 85

छायावाद की प्रासंगिकता : रमेश चन्द्र शाह , पृष्ठ 101

परिमल , पृष्ठ 77– 78

दीपशिखा , पृष्ठ 72

यामा , पृष्ठ 09

बिम्ब : अर्थ, उद्‌भव, स्वरूप और विकास

अध्याय 5

काव्य बिम्ब · डॉ. नगेन्द्र , पृष्ठ 61

काव्यात्मक बिम्ब भूमिका अखोरी बृजनन्दन प्रसाद , पृष्ठ 03, 55

आधुनिक हिन्दी काव्य मे बिम्ब
विधान डॉ नित्यानन्द शर्मा , पृष्ठ 325

नया हिन्दी काव्य डॉ शिव कुमार मिश्र , पृष्ठ 352

विचार के प्रवाह डॉ देव राज उपाध्याय , पृष्ठ 58

कला सृजन प्रक्रिया : डॉ शिव करन सिह , पृष्ठ 330

अर्न्तरीप · कल्पना · प्रभाकर आचार्य , पृष्ठ 52

दूसरा पत्र, ठडा लोहा · भारती , पृष्ठ 40

देव की आवाज · गिरिजा कुमार माथुर , पृष्ठ 77

गदी गली की सुबह · श्री राम वर्मा , पृष्ठ106

रेलवे प्लेटफार्म पर काता भारती , पृष्ठ 64

दि सानेट · ला मजहब हस प्रभाकर माचवे , पृष्ठ 151

डरी हुई लडकी · धर्मयुग श्याम परमार , पृष्ठ 05

प्रार्थना की कडी · ठडा लोहा · भारती , पृष्ठ 05

नये साल पर · हरि मोहन ; पृष्ठ 68

औद्योगिक बस्ती : अज्ञेय , पृष्ठ 47

आस्वस्ती : धर्मयुग , पृष्ठ 25

अधूरा गीत : गिरिजा कुमार माथुर , पृष्ठ 113

सतपुडा के जगल · भवानी प्रसाद मिश्र , पृष्ठ 289

छायावादी काव्य में बिम्बो का अध्ययन

अध्याय – 6

छायावाद का काव्य शिल्प · डॉ प्रतिमा कृष्णवल , पृष्ठ 204

आधुनिक हिन्दी काव्य मे बिम्ब विधान डॉ नित्यानन्द शर्मा , पृष्ठ 325

काव्य बिम्ब डॉ. नगेन्द्र , पृष्ठ 61–05

रात मे गोद अरी ओ करूणा प्रभामय अज्ञेय , पृष्ठ 61

काव्य बिम्ब डॉ नगेन्द्र , पृष्ठ 10

सध्या चित्र · विजय देव नारायण शाही , पृष्ठ 249

सथालो के निरव पर गीतचित्र धर्मयुग ठा प्रसाद सिह , पृष्ठ 05

प्रलय · भवानी प्रसाद मिश्र , पृष्ठ 16

नवम्बर की दोपहर भारती , पृष्ठ 34

प्रेम · विष्णु खरे , पृष्ठ 136

औद्योगिक बस्ती अरि ओ करूणा प्रभामय : अज्ञेय , पृष्ठ 47

आसक्ति धर्मयुग · भारत भूषण अग्रवाल , पृष्ठ 25

नये साल पर : हरिमोहन , पृष्ठ 68

काव्य बिम्ब . डॉ. नगेन्द्र , पृष्ठ 12

डरी हुई लडकी श्याम परमार , पृष्ठ 05

प्रार्थना की कडी – ठडा लोहा भारती , पृष्ठ 05

काव्य बिम्ब : डॉ. नगेन्द्र , पृष्ठ 10

महादेवी के काव्य में बिम्बों का अध्ययन

अध्याय — 7

महादेवी और आलोचना

साहित्य की समस्याये	डॉ रामविलास शर्मा , पृष्ठ 118
सध्या	· महादेवी वर्मा , पृष्ठ 09
प्रभात	· महादेवी वर्मा , पृष्ठ 27
महादेवी की काव्य भाषा	· रेखा खरे , पृष्ठ 18
पवित्रता—महादेवी के काव्य	
मे नारी रहस्यमयता	रमेश कुतल 'मेघ' , पृष्ठ 23
महादेवी के काव्य बिम्ब काल	
भाषा सदर्भ	· केदार नाथ सिह , पृष्ठ 27, 28
दीपशिखा	महादेवी वर्मा , पृष्ठ 19, 20
महादेवी का काल ससार और	
उसकी सीमाये	· प्रमोद वर्मा , पृष्ठ 39, 40
अधूरा गीता हस	गिरिजा कुमार माथुर ;पृष्ठ 11, 44, 113
नया हिन्दी काव्य	· डॉ. शिव कुमार मिश्र ; पृष्ठ 338
काव्य बिम्ब	· डॉ. नगेन्द्र , पृष्ठ 52, 53
कालिदास	: बलाका , पृष्ठ 19, 20
शरद हसिनी	: पंत , पृष्ठ 42
मेघदूतम	: कालिदास ; पृष्ठ 24

कामायनी ' प्रसाद , पृष्ठ 42, 43

सुमित्रानन्दन पत , पृष्ठ 18, 19

सध्या ' महादेवी वर्मा , पृष्ठ 09

यामा : महादेवी वर्मा , पृष्ठ 09

दीपशिखा ' महादेवी वर्मा , पृष्ठ 72

सर्जना और नयी कविता , पृष्ठ 201

भाषा और सवेदना डॉ रामस्वरूप चतुर्वेदी , पृष्ठ 76, 77

आलोचना बिम्ब प्रक्रिया , पृष्ठ 10

साइकोलॉजी ऑफ एडरिडेलाइफ फायड , पृष्ठ 19, 20

व्हाइट इन साइको इनालिसिस ' अर्नेस्ट जोन्स ; पृष्ठ 203

व्यजना और नवीन कविता ' डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी , पृष्ठ 197

चिंतामणि भाग–2 , पृष्ठ 121

छायावाद का काव्य शिल्प ' डॉ प्रतिमा कृष्णबल , पृष्ठ 204

महादेवी वर्मा और आलोचना

साहित्य की समस्याये रामविलास शर्मा

प्रतीक और बिम्ब : साम्य–वैसम्य

अध्याय — 8

नीरजा : महादेवी वर्मा ; पृष्ठ 19

दीपशिखा गीत सख्या 3 ' महादेवी वर्मा ; पृष्ठ 72

आधुनिक कवि : महादेवी वर्मा ; पृष्ठ 16

आधुनिक कवि : महादेवी वर्मा , पृष्ठ 77

रश्मि : महादेवी वर्मा , पृष्ठ 19

परिमल : सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला , पृष्ठ 106

आधुनिक कवि : सुमित्रानन्दन पत , पृष्ठ 11

पल्लव, आसू सुमित्रानन्दन पत ; पृष्ठ 19

कामायनी (लज्जा सर्ग) : जयशकर प्रसाद , पृष्ठ 74

नीरजा : महादेवी वर्मा , पृष्ठ 04

उपसंहार

अध्याय — 9

काव्य बिम्ब : डॉ नगेन्द्र , पृष्ठ 09

दूसरा पत्र भारती , पृष्ठ 40

बिम्ब, प्रतीक और मिथक : हिन्दुस्तानी , पृष्ठ 61

व्हाइट इन साइको एनालिसिस : अर्नेस्ट जोन्स ; पृष्ठ 203

सौन्दर्यानुभूति : आनन्द प्रकाश दीक्षित , पृष्ठ 169, 171

शिल्प साधना : जयनाथ नलिन , पृष्ठ 180—181

कवि और काव्य चितक कमलाकात पाठक , पृष्ठ 99, 102

काव्य कला महादेवी वर्मा , पृष्ठ 12, 15

काव्य का स्वरूप : धनजय वर्मा , पृष्ठ 87, 90

कलापक्ष विश्वम्भर मानव , पृष्ठ 119, 124

कल्पना और छायावाद : केदारनाथ सिह , पृष्ठ 96

सिम्बॉलिज्म : ए. एन. व्हाइट हेड , पृष्ठ 34

सम्भावना , पृष्ठ 61, 62

सिम्बल भाग—1 , पृष्ठ 408

टेक्सट एण्ड क्रिटिसिज्म · हैरी लैविन , पृष्ठ 197

हिन्दी काव्य मे प्रतीकवाद

का विकास · डॉ बीरेन्द्र सिह , पृष्ठ 117